जैन स्तोक मंजूषा

(भाग १)

प्रकाशक

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

समता भवन, बीकानेर(राज)

* जैन स्तोक मजूषा
(भाग ९)

* प्रथम सस्करण– नवम्बर 1996, प्रतिया 2200

* मूल्य – 22 रुपये

* अर्द्ध मूल्य – 11 रुपये

* प्रकाशक–
श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ
समता भवन, बीकानेर– 334005 (राज)

* लेजर टाईप सेटिग
अमित कम्प्यूटर्स एण्ड प्रिन्टर्स
बागडी मोहल्ला, बीकानेर (राज)

* आवरण
सुधा ग्राफिक्स, बीकानेर

* मुद्रक
साखला प्रिन्टर्स
चन्दन सागर,
बीकानेर (राज)

प्रकाशकीय

गणधरो द्वारा ग्रथित आगम ग्रन्थो का अध्ययन और अनुशीलन जन सामान्य के लिए दुरुह है। किन्तु कोई भी जिज्ञासु पाठक सूक्ष्मार्थ प्रतिपादक इन विशालकाय ग्रन्थो से सरलता से तत्त्वज्ञान प्राप्त कर सके इसलिए शास्त्रो मे आये हुए मूल पाठो के आधार पर 'स्तोको–थोकडो' का सकलन हुआ इनमे विशेष रूप से भगवती सूत्र और प्रज्ञापना सूत्र के स्तोको का सकलन दृष्टिगत होता है। इन स्तोको की वाचना, पृच्छना, पारियट्टणा और अनुप्रेक्षा करके अनेक भव्य आत्माओ ने तलस्पर्शी तत्त्वज्ञान रहस्य प्राप्त किया है।

भगवती और प्रज्ञापना सूत्र के थोकडो का सर्वप्रथम व्यवस्थित प्रकाशन श्री अगरचन्द भैरूदान सेठिया जैन पारमार्थिक सस्था द्वारा हुआ। इसमे श्रद्धेय स्व आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा के शिष्य शास्त्रमर्मज्ञ प रत्न श्री पन्नालालजी म सा तथा सुश्रावक श्री हीरालालजी मुकीम को सैकडो थोकडे कठस्थ थे उनको भी श्री जेठमल जी सेठिया ने लिपिबद्ध करवाया। तत्पश्चात् भगवती सूत्र के थोकडो के नौ भागो मे तथा प्रज्ञापना सूत्र के थोकडो के तीन भागो मे विभाजित कर प्रकाशित करवाया। अनेक सत–सती एव मुमुक्षु भव्य जन इन थोकडो से लाभान्वित हुए।

इन थोकडो को कठस्थ करने से तथा चिन्तन, मनन अन्वेषण करने से शास्त्रो के गहन विषयो पर भी सरलता से अधिकार प्राप्त हो जाता है। इस बात का परीक्षण जब परम पूज्य समता विभूति समीक्षण ध्यान योगी आचार्य भगवन श्री नानालालजी म सा तथा शास्त्रज्ञ तरुणतपस्वी अवधूत साधक

श्रद्धेय युवाचार्य श्री रामलाल जी म सा ने किया तो एक योजना बनी कि विद्यार्थी जीवन के प्रारम्भ मे ही थोकडे स्मरण करने के सस्कार डालना आवश्यक है। इधर श्री साधुमार्गी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड द्वारा भी नवीन पाठ्यक्रम निर्धारण की माग जब परम श्रद्धेय आचार्य श्री जी म सा एव परम श्रद्धेय युवाचार्य श्री म सा के समक्ष रखी गयी तब आचार्य देव ने नवीन पाठ्यक्रम निर्धारण के लिए श्री युवाचार्य प्रवर को सकेत किया। सकेतानुसार श्रद्धेय युवाचार्य प्रवर ने उपस्थित सन्त–सती वर्ग के परामर्श से नवीन पाठ्यक्रम का निर्माण किया और उसमे अपने पूर्व चिन्तन का अनुसरण करते हुए थोकडो को भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान दिया। अपनी विलक्षण प्रज्ञा से श्रद्धेय युवाचार्य श्री जी म सा ने विद्यार्थियो के परीक्षा स्तर को दृष्टि मे रखते हुए उनके अनुकूल थोकडो की नवीन सयोजना की।

श्रद्धेय युवाचार्य प्रवर की इस सयोजना को विद्यार्थियो की सुविधा के लिए प्रकाशित करवाने का निर्णय श्री अ भा साधुमार्गी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड ने लिया और वह जैन स्तोक मजूषा के रूप मे पाठको के समक्ष प्रस्तुत है।

फाल्गुन शुक्ला तृतीया
विoसo २०५२
सन् १९९६

पीरदान पारख
सयोजक

श्री साधुमार्गी जेन धार्मिक परीक्षा वोर्ड, बीकानेर

अर्थ सहयोगी

देशनोक निवासी श्री मोतीलालजी दुगड आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा एव श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ बीकानेर के स्थापना काल से ही एकनिष्ठ सुश्रावक है। श्रीमद् जवाहराचार्य, श्री गणेशाचार्य, श्री नानेशाचार्य एव युवाचार्य श्री राममुनि के श्रद्धालु भक्तो मे श्री दुगडजी का परिवार अग्रणी है। शासननिष्ठ श्री मोतीलालजी दुगड के चार पुत्रो—श्री सुन्दरलालजी दुगड, श्री सोहनलालजी दुगड, श्री पूनमचन्द दुगड एव श्री कौशल कुमार दुगड मे श्री सुन्दरलालजी ज्येष्ठ पुत्र हैं तथा सघ एव समाज के कर्मठ कार्यकर्त्ताओ मे महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

श्री सुन्दरलालजी दुगड जैन समाज के उन युवा उद्योगपतियों मे प्रमुख हैं, जिन्होने विगत एक दशक मे अपने अथक परिश्रम, कौशल, प्रतिभा तथा उदारता से न केवल औद्योगिक जगत मे विशिष्ठ स्थान बनाया है अपितु अपनी धर्मनिष्ठा, सदाचारिता एव दु खकातरता से शिक्षा और सेवा के क्षेत्र मे भी अनुकरणीय आदर्श स्थापित किया है।

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ के पूर्व उपाध्यक्ष श्री सुन्दरलालजी दुगड अनेक सामाजिक, शैक्षणिक, धार्मिक तथा सेवा सस्थानो के सम्प्रति ट्रस्टी, अध्यक्ष, मत्री आदि विभिन्न पदो पर कार्यरत हैं एव घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध हैं। श्री दुगड ने भवन निर्माण का कार्यारम्भ कर व्यवसाय जगत मे प्रवेश किया एव आर डी बिल्डर्स की स्थापना की,

किन्तु अपनी दूरदर्शिता कार्यकुशलता त्वरित निर्णय क्षमता तथा प्रतिभा के बल पर आज दैनिक बगला अखबार सोनार बगला एव जूट आदि मिलो का सचालन कर रहे है। आर डी बिल्डर्स नामक इनकी कम्पनी आर डी बी इण्डस्टीज लि मे परिवर्तित होकर औद्योगिक जगत मे पैर जमाकर इनके गतिशील चुम्बकीय व्यक्तित्व की कहानी कह रही है।

युवा उद्योग रत्न श्री सुन्दरलालजी दुगड समय की नब्ज पहचानने वाले प्रगतिशील विचारो के धनी है। 'दिया दूर नहीं जात' के पथ का अनुसरण करने वाले श्री दुगड ने अपनी जन्मभूमि देशनोक मे समता–शिक्षा–सेवा सस्थान की स्थापना मे प्रमुख भूमिका का निर्वहन किया है। कपासन (उदयपुर) मे आचार्य नानेश रूप रेखा प्राणी रक्षालय की स्थापना भी इनके अनुदान से हुई है।

हसमुख, मिलनसार, विनम्र श्री दुगड का व्यक्तित्व प्रदर्शन, विज्ञापन एव पाखड से सर्वथा दूर सरलता सादगी और उदारता से समन्वित कलकत्ता के जैन अजैन समाज मे अत्यन्त लोकप्रिय है। अनेक राजनेताओ से घनिष्ठ सम्बन्ध होने पर भी ये एक निरभिमानी निष्काम कर्मठ कार्यकर्त्ता के रूप मे जाने पहचाने जाते है, धर्म और सेवा का कलकत्ता मे ऐसा कोई सस्थान तथा सगठन नहीं है जो इनके उदार सहयोग एव सक्रिय व्यक्तित्व से लाभान्वित नहीं होता हो।

श्री दुगड जी के अर्थ सहयोग से प्रकाशित यह पुस्तक इनकी प्रशस्त एव प्रगाढ धर्म भावना का प्रतीक है। इस सहयोग हेतु हम इनके हृदय से आभारी हैं।

***

अनुक्रमणिका

क्र स — पेज स

जैन स्तोक मंजूषा
भाग-९

१ चमरेन्द्रजी के उत्पात का थोकडा
(भगवतीसूत्र, शतक तीसरा, उद्देशा दूसरा)

१ अहो भगवन् ! क्या असुरकुमार देव पहली रत्नप्रभा नरक के नीचे रहते हैं ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे– असुरकुमार देव पहली रत्नप्रभा नरक के नीचे नहीं रहते हैं । इसी तरह असुरकुमार देव सात नरको के, बारह देवलोक, नव ग्रैवेयक, पाच अनुत्तर विमान, जाव सिद्धशिला के नीचे रहते है ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे ।

२ अहो भगवन् ! असुरकुमार देव कहाँ रहते हैं ? हे गौतम ! यह रत्नप्रभापृथ्वी एक लाख अस्सी हजार योजन की मोटाई वाली है । उसमे से एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे छोड कर बीच मे १ लाख ७८ हजार योजन की पोलार है । उसमे १३ पाथडा और १२ आन्तरा हैं । उन १२ आन्तरो मे से ऊपर दो आन्तरा छोडकर नीचे के १० आन्तरो मे दस जाति के भवनपति देव रहते हैं । तीसरे आन्तरे मे असुरकुमार रहते है ।

३ अहो भगवन् ! असुरकुमारो की गति कितनी है ? वे कहाँ तक जा सकते है ? हे गौतम ! नीचे सातवीं नरक तक जाने की शक्ति है (विषय की अपेक्षा), परन्तु तीसरी बालुकाप्रभा नरक तक गये, जाते है और जावेगे । अहो भगवन् ! वे तीसरी तरक तक किस कारण से जाते है ? हे गौतम ! अपने पूर्वभव के बैरी को दु ख देने के लिये और अपने पूर्वभव के मित्र को सुखी करने के लिए जाते है । अहो भगवन् ! असुरकुमार देव तिरछी गति कितनी कर सकते है ? हे गौतम ! स्वदिशा मे असख्यात द्वीप समुद्र, परन्तु पर दिशा मे नदीश्वरद्वीप याने दक्षिणदिशा के असुरकुमार देव उत्तरदिशा मे नन्दीश्वरद्वीप तक गये, जाते है और जावेगे । उत्तरदिशा के असुरकुमार देव दक्षिणदिशा मे आठवे नन्दीश्वरद्वीप तक गये, जाते हैं और जावेंगे । इससे आगे नहीं गये, नहीं जाते है और नहीं जावेगे । अहो भगवन् ! नन्दीश्वरद्वीप तक किस कारण से जाते हैं ? हे गौतम ! तीर्थंकर भगवान् के जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान और परिनिर्वाण (मोक्ष), इन चार कल्याणको का महोत्सव करने के लिये जाते है । अहो भगवन् ! असुरकुमार देवो की ऊची गति कितनी है ? हे गौतम ! बारहवे देवलोक तक जाने की शक्ति है (विषय की अपेक्षा), परन्तु पहले देवलोक तक गये, जाते हैं और जावेगे । अहो भगवन् ! असुरकुमार देव पहले देवलोक तक किस लिये जाते है ? हे गौतम ! अपने पूर्वभव के बैरी को दु ख देने के लिए और अपने पूर्व भव के मित्र से मिलने के लिए तथा आत्मरक्षक देवो को त्रास उपजाने के लिए जाते है और वहाँ से छोटे छोटे रत्न लेकर एकान्त स्थान मे भाग जाते है । तब वैमानिक देव असुरकुमार देवो को शारीरिक पीडा पहुँचाते हैं । अहो भगवन् ! असुरकुमार देव पहले देवलोक मे जाकर क्या वहाँ की देवियो के साथ भोग भोगने मे समर्थ है ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (ऐसा नहीं कर सकते हैं) । असुरकुमार देव वहाँ से

देवियो को लेकर वापस अपने स्थान पर आते हैं, फिर उन देवियो की इच्छा हो तो भोग भोगते हैं किन्तु जबरदस्ती नहीं । अनन्ती अवसर्पिणी अनन्ती उत्सर्पिणी काल बीतता है तब किसी वक्त असुरकुमार देव पहले देवलोक मे जाते हैं, तब लोक मे अच्छेरा (आश्चर्यकारक बात) होता है । अरिहन्त (केवली तीर्थंकर) अरिहन्त चैत्य (छद्मस्थ अरिहन्त) और भावितात्मा अनगार (साधु मुनिराज) इन तीनों में से किसी की भी नेश्राय (शरण) लेकर असुरकुमार देव पहले देवलोक मे गये, जाते हैं और जावेगे । सब असुरकुमार देव नहीं जाते हैं किन्तु विशिष्ट ऋद्धि वाले जाते है। अभी वर्तमान के चमरेन्द्रजी पहले देवलोक मे गये थे ।

चमरेन्द्रजी का जीव पूर्व भव मे इस जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र मे विन्ध्यपर्वत की तलेटी मे वेभेल सन्निवेश मे पूरण नाम का गाथापति था । पूरण गाथापति ने 'दानामा' नाम की प्रव्रज्या ग्रहण करके १२ वर्ष तक तापसपना पाला । अन्त मे सलेखना करके काल के समय काल करके चमरचचा राजधानी मे इन्द्रपने उत्पन्न हुआ । तत्काल उपयोग लगा कर अपने ऊपर शक्रेन्द्रजी को देखा । उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को दीक्षा लिये ११ वर्ष हुए थे । भगवान् सुसुमारपुर के अशोक वनखण्ड मे जाकर ध्यान धर कर खडे थे । चमरेन्द्रजी भगवान् के पास आये, वन्दना नमस्कार कर भगवान् का शरण लिया । फिर भयकर काला रूप बना कर हाथ मे परिघ रत्न नामक हथियार लेकर उत्पात करते हुए पहले देवलोक मे गये और शक्रेन्द्रजी को अनिष्ट अप्रिय वचन कहे । उन अनिष्ट अप्रिय वचनो को सुन कर शक्रेन्द्रजी क्रोध मे धमधमायमान हुए । चमरेन्द्रजी को मारने के लिए वज्र फेका । चमरेन्द्रजी डर कर पीछे भागे । ध्यान मे खडे हुए भगवान् महावीर स्वामी के पैरो के बीच मे आकर बैठे । फिर शक्रेन्द्रजी ने उपयोग लगाकर भगवान् को देखा और जाना कि चमरेन्द्र

भगवान् का शरण लेकर यहाँ आया था । मेरा वज्र चमरेन्द्र का पीछा कर रहा है । इसलिए कहीं मेरे वज्र से भगवान् की आशातना न हो जाय, ऐसा विचार कर शक्रेन्द्रजी उतावली गति से भगवान् के पास आये और भगवान् से चार अगुल दूर रहते हुए वज्र को साहरा (पीछा खींचा), भगवान् को वन्दना नमस्कार कर अपने अपराध के लिए क्षमा मागी । फिर उत्तरपूर्वदिशा के मध्यभाग (ईशानकोण) मे गये । वहॉ जाकर पृथ्वी पर तीन बार अपने बाये पैर को पटका और चमरेन्द्रजी से इस प्रकार कहा कि- 'हे चमर ! आज तू श्रमण भगवान् स्वामी के प्रभाव से बच गया है । अब मेरे से तुझको जरा भी भय नहीं है,' ऐसा कह कर शक्रेन्द्रजी जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा मे वापिस चले गये (पहले देवलोक मे चले गये) ।

चमरेन्द्रजी भी भगवान् के पैरो के बीच से निकल कर अपनी राजधानी मे चले गये । फिर अपनी सब ऋद्धि परिवार को साथ लेकर भगवान् के पास आये । भगवान् को वन्दना नमस्कार करके नाटक बतलाया । वह ऋद्धि शरीर से निकल कर कूटागार शाला के दृष्टान्त के अनुसार वापिस शरीर मे प्रवेश कर गई ।

अहो भगवान् ! क्या देवता किसी पुद्‌गल को फेक कर उसे वापिस ले सकते है ? हॉ, गौतम ! ले सकते है । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! पुद्‌गल फेकते समय उसकी गति शीघ्र होती है और पीछे मन्द हो जाती है और देवता की गति पहले और पीछे शीघ्र ही रहती है। इस कारण से वह फेंके हुए पुद्‌गल को वापिस ले सकते है । अहो भगवन् ! तो फिर शक्रेन्द्रजी चमरेन्द्रजी को क्यो नहीं पकड सके ? हे गौतम ! चमरेन्द्रजी की नीचे जाने की गति शीघ्र है और ऊपर जाने की गति मन्द है । शक्रेन्द्रजी की ऊचे जाने की गति शीघ्र है और

नीचे जाने की गति मन्द है । इस कारण से शक्रेन्द्रजी चमरेन्द्रजी को नहीं पकड सके ।

क्षेत्र - कालद्वार कहते हैं– एक समय मे शक्रेन्द्रजी जितना क्षेत्र ऊपर जा सकते हैं, उतना क्षेत्र ऊपर जाने मे वज्र को दो समय लगते है और चमरेन्द्रजी को तीन समय लगते हैं । एक समय मे चमरेन्द्रजी जितना क्षेत्र नीचे जा सकते हैं, उतना क्षेत्र नीचे जाने मे शक्रेन्द्रजी को दो समय लगते हैं और वज्र को तीन समय लगते है ।

शक्रेन्द्रजी काल की अपेक्षा - एक समय मे सबसे थोडा नीचा क्षेत्र जाते है, उससे तिरछा क्षेत्र सख्यातभाग अधिक जाते है, उससे ऊचा क्षेत्र सख्यातभाग अधिक जाते हैं । क्षेत्र की अपेक्षा ऊचा क्षेत्र २४ भाग जाते हैं, तिरछा क्षेत्र १८ भाग जाते हैं और नीचा क्षेत्र १२ भाग जाते हैं ।

वज्र एक समय मे सबसे थोडा नीचा क्षेत्र जाता है, उससे तिरछा क्षेत्र विशेषाधिक जाता है, उससे ऊचा क्षेत्र विशेषाधिक जाता है । क्षेत्र की अपेक्षा ऊचा क्षेत्र १२ भाग जाता है, तिरछा क्षेत्र १० भाग जाता है, नीचा क्षेत्र ८ भाग जाता है ।

चमरेन्द्रजी एक समय मे सबसे थोडा ऊचा क्षेत्र जाते है, उससे तिरछा क्षेत्र सख्यातभाग अधिक जाते है, उससे नीचा क्षेत्र सख्यातभाग अधिक जाते हैं। क्षेत्र की अपेक्षा ऊचा क्षेत्र ८ भाग जाते हैं, तिरछा क्षेत्र १६ भाग जाते हैं, नीचा क्षेत्र २४ भाग जाते है ।

जावणकाल (गमनकाल) की अल्पाबहुत्व – शक्रेन्द्रजी के ऊपर जाने का काल सबसे थोडा, उससे नीचे जाने का काल सख्यातगुणा, वज्र का ऊचा जाने का काल सबसे थोडा, उससे नीचे जाने का काल विशेषाधिक । चमरेन्द्रजी के नीचे जाने का काल सबसे थोडा, उससे ऊचा जाने का काल सख्यातगुणा।

सबके गतिकाल की अल्पाबहुत्व —शक्रेन्द्रजी के ऊचा जाने का और चमरेन्द्रजी के नीचा जाने का काल परस्पर तुल्य है, सबसे थोडा है । शक्रेन्द्रजी के नीचे जाने का और वज्र के ऊचा जाने का काल परस्पर तुल्य है, उससे सख्यातगुणा है । चमरेन्द्रजी के ऊचा जाने का और वज्र के नीचा जाने का काल परस्पर तुल्य है, उससे विशेषाधिक है ।

चमरेन्द्रजी की ऋद्धि, परिवार जो जो हो सो कह देना चाहिए । चमरेन्द्रजी की एक सागर की स्थिति है । महाविदेह क्षेत्र मे जन्म लेकर मोक्ष जावेगे । शेष अधिकार सूत्र से जान लेना चाहिए ।

क्षेत्र-कालद्वार का यन्त्र—

जाने की मार्गणा	जितना क्षेत्र जावे	जाने मे जितना समय लगता है
१ शक्रेन्द्रजी को	ऊचा क्षेत्र जाने मे	१ समय लगता है।
२ वज्र को	” ” ”	२ समय लगते है।
३ चमरेन्द्रजी को	” ” ”	३ समय लगते है।
१ चमरेन्द्रजी को	नीचा क्षेत्र जाने मे	१ समय लगता है।
२ शक्रेन्द्रजी को	” ” ”	२ समय लगते है।
३ वज्र को	” ” ”	३ समय लगते है।

गमनागमन की अल्पाबहुत्व का यन्त्र

मार्गणा	ऊचा जाने की	नीचा जाने की
१ शक्रेन्द्रजी	थोडा काल	सख्यातगुणा काल
२ वज्र	थोडा काल	विशेषाधिक काल
३ चमरेन्द्रजी	सख्यातगुणा काल	थोडा काल

एक समय मे तीन क्षेत्र मे जाने की अल्पाबहुत्व का यन्त्र कालापेक्षा—

मार्गणा	ऊचा क्षेत्र जावे	तिरछा क्षेत्र जावे	नीचा क्षेत्र जावे	ऊचा क्षेत्रभाग	तिरछा क्षेत्रभाग	नीचा क्षेत्रभाग
शक्रेन्द्रजी १ समय मे	सख्यातभाग अधिक जावे ३	सख्यातभाग अधिक जावे २	सबसे थोडा जावे १	२४	१८	१२
वज्र १ समय मे	विशेषाधिक जावे ३	विशेषाधिक जावे २	सबसे थोडा जावे १	१२	१०	८
चमरेन्द्रजी १ समय मे	सबसे थोडा जावे १	सख्यात भाग अधिक जावे २	सख्यात भाग अधिक जावे ३	८	१६	२४

सब के गतिकाल की अल्पाबहुत्व का यत्र

१ शक्रेन्द्रजी ऊचा चमरेन्द्रजी नीचा	तुल्य काल	सबसे थोडा
२ शक्रेन्द्रजी नीचा वज्र ऊचा	तुल्य काल	सख्यातगुणा
३ चमरेन्द्रजी ऊचा वज्र नीचा	तुल्य काल	विशेषाधिक

२. पचास बोलों की बंधी का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक छठा, उद्देशा, तीसरा)

वेय सजय दिट्ठी, सण्णी भवि दसण पज्जत्ते ।
भासग परित्तणाण, जोगुवओग आहार सुहुम चरमेसु ।।

१ वेदद्वार, २ सजत (सयत) द्वार, ३ दृष्टिद्वार, ४ सज्ञीद्वार, ५ भवीद्वार, ६ दर्शनद्वार, ७ पर्याप्तद्वार, ८ भाषकद्वार, ९ परित्त (पडत) द्वार, १० ज्ञानद्वार, ११ योगद्वार, १२ उपयोगद्वार, १३ आहारकद्वार, १४ सूक्ष्मद्वार, १५ चरमद्वार ।

१ वेदद्वार के ४ भेद – स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुसकवेद, अवेदी । २ सजतद्वार के ४ भेद - सजति, असजति, सजतासजति, नोसजति-नोअसजति-नोसजतासजति । ३ दृष्टिद्वार के ३ भेद– सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि । ४ सज्ञी (सन्नी) द्वार के ३ भेद– सज्ञी, असज्ञी, नोसज्ञी–नोअसज्ञी । ५ भवीद्वार के ३ भेद– भवसिद्धिक, अभवसिद्धिक, नोभवसिद्धिक–नोअभवसिद्धिक । ६ दर्शनद्वार के ४ भेद – चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन,अवधिदर्शन, केवलदर्शन । ७ पर्याप्तद्वार के ३ भेद– पर्याप्त, अपर्याप्त, नोपर्याप्त-नोअपर्याप्त । ८ भाषकद्वार के २ भेद– भाषक, अभाषक । ९ परित्तद्वार के ३

भेद– परित्त (पडत), अपरित्त (अपडत), नोपरित्त–नोअपरित्त (नोपडत-नोअपडत) । १० ज्ञानद्वार के ८ भेद–मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन पर्ययज्ञान, केवलज्ञान, मति-अज्ञान, श्रुत–अज्ञान, विभगज्ञान । ११ योगद्वार के ४ भेद–मनयोग, वचनयोग, काययोग, अयोगी । १२ उपयोगद्वार के २ भेद – सागरोवउत्ता (साकारोपयोग– ज्ञान) अणागारोवउत्ता (अनाकारोपयोग–दर्शन) । १३ आहारकद्वार के २ भेद– आहारक, अनाहारक । १४ सूक्ष्मद्वार के ३ भेद– सूक्ष्म, बादर, नोसूक्ष्म-नोबादर । १५ चरमद्वार के २ भेद– चरम, अचरम । ये कुल ५० बोल हुए ।

इनमे से जिन जिन जीवो मे जितने जितने बोल पाये जाते हैं, सो समुच्चय (धडा) रूप से कहे जाते है - पहली नारकी मे बोल ३४, शेष ६ नारकी मे बोल ३३-३३, भवनपति, वाणव्यन्तर देवो मे बोल ३५, ज्योतिषी देवो मे तथा पहले दूसरे देवलोक मे बोल ३४, तीसरे से बारहवे देवलोक तक बोल ३३, नवग्रैवेयक मे बोल ३२, पाच अनुत्तर विमानो मे बोल २६-२६, पाच स्थावर मे बोल २३, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय मे बोल २७, चतुरिन्द्रिय मे और असन्नी तिर्यंचपचेन्द्रिय मे बोल २८-२८, सन्नी तिर्यंचपचेन्द्रिय मे बोल ३६, असन्नी मनुष्य मे बोल २२, सन्नी मनुष्य मे बोल ४५, सिद्ध भगवान् मे बोल १६ और समुच्चय जीव मे बोल ५० पाये जाते हैं ।

यन्त्र

नाम	बोल	नाम	बोल	नाम	बोल
पहली नारकी में	३४	तीसरे से बारहवे देवलोक तक	३३	चतुरिन्द्रिय, असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे	२८
दूसरी से सातवीं नारकी तक	३३	नवग्रैवेयक मे	३२	सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मे	३६
		पाच अनुत्तर मे	२६		

भवनपति,			२६	असन्नी मनुष्य मे	२२
वाणव्यन्तर मे	३५	पाच स्थावर मे	२३	सन्नी मनुष्य मे	४५
ज्योतिषी पहला		द्वीन्द्रिय		सिद्ध मे	१६
दूसरा देवलोक में	३४	त्रीन्द्रिय मे	२७	समुच्चय जीव मे	५०

५० बोलो मे से किस बोल मे कितने कर्मों का बन्ध होता है सो कहते हैं–

१ वेदद्वार– तीन वेदो मे ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना । अवेदी मे ७ कर्मों की भजना, आयुकर्म का अबन्ध ।

२ सयतद्वार– सयति मे ८ कर्मो की भजना । असयति, सयतासयति मे ७ कर्मो की नियमा, आयुकर्म की भजना । नोसयति-नोअसयति– नोसयतासयति मे ८ कर्मो का अबन्ध ।

३ दृष्टिद्वार– समदृष्टि मे ८ कर्मो की भजना । मिथ्यादृष्टि मे ७ कर्मो की नियमा, आयुकर्म की भजना । मिश्रदृष्टि मे ७ कर्मो की नियमा, आयुकर्म का अबन्ध ।

४ सज्ञी (सन्नी) द्वार– सज्ञी मे ७ कर्मो की भजना, वेदनीय की नियमा । असज्ञी मे ७ कर्मो की नियमा, आयुकर्म की भजना । नोसज्ञी- नोअसज्ञी मे वेदनीय की भजना, ७ कर्मो का अबन्ध ।

५ भवीद्वार– भवी मे ८ कर्मो की भजना । अभवी मे ७ कर्मो की नियमा, आयुकर्म की भजना । नोभवी-नोअभवी मे ८ कर्मो का अबन्ध ।

६ दर्शनद्वार– तीन दर्शन (चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन) मे ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा । केवलदर्शन मे वेदनीय की भजना, ७ कर्मो का अबन्ध ।

७ पर्याप्तद्वार– पर्याप्त मे ८ कर्मो की भजना । अपर्याप्त मे ७ कर्मो की नियमा, आयुकर्म की भजना ।

नोपर्याप्त-नोअपर्याप्त मे ८ कर्मों का अबन्ध ।

८ भाषकद्वार– भाषक मे ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा । अभाषक मे ८ कर्मों की भजना ।

९ परित्त (पडत) द्वार– परित्त (पडत) मे ८ कर्मों की भजना । अपरित्त (अपडत) मे ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना । नोपरित्त- नोअपरित्त (नोपडत-नोअपडत) मे ८ कर्मों का अबन्ध ।

१० ज्ञानद्वार– चार ज्ञान मे ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा । केवलज्ञान मे वेदनीय की भजना, ७ कर्मों का अबन्ध । तीन अज्ञान में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना ।

११ योगद्वार– तीन योग मे ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा । अयोगी (अजोगी) मे ८ कर्मों का अबन्ध ।

१२ उपयोगद्वार– सागारोवउत्ता, अणागारोवउत्ता (साकारोपयोग, अनाकारोपयोग) मे ८ कर्मों की भजना ।

१३ आहारकद्वार– आहारक मे ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा । अनाहारक मे ७ कर्मों की भजना, आयुकर्म का अबन्ध ।

१४ सूक्ष्मद्वार– सूक्ष्म मे ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना । बादर मे ८ कर्मों की भजना । नोसूक्ष्म-नोबादर मे ८ कर्मों का अबन्ध ।

१५ चरमद्वार– चरम और अचरम मे ७ कर्मों की भजना ।

३ रूपी अरूपी का थोकडा

(भगवतीसूत्र, शतक बारहवा, उद्देशा पाचवा)

१ चतु स्पर्शी रूपी के तीस बोल– १८ पाप, ८ कर्म, १ कार्मण शरीर, २ योग (मनयोग, वचनयोग), एक सूक्ष्म

पुद्गलास्तिकाय का स्कन्ध, ये ३० बोल चतु स्पर्शी रूपी है । इनमे ५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ४ स्पर्श (शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष) पाये जाते है ।

२ अष्टस्पर्शी रूपी के १५ बोल– ६ द्रव्यलेश्या, ४ शरीर (औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस), घनोदधि, घनवाय, तनुवाय, कायायोग, बादर पुद्गलास्तिकाय का स्कन्ध, ये १५ अष्टस्पर्शी है । इनमे ५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ८ स्पर्श पाये जाते है ।

३ अरूपी के ६१ बोल– १८ पाप से वेरमण (निवर्तना) १२ उपयोग (५ ज्ञान, ३ अज्ञान, ४ दर्शन), ६ भावलेश्या, ५ द्रव्य (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, काल), ४ बुद्धि (उत्पातिया, विनीया, कम्मिया, परिणामिया), ४ भेद मतिज्ञान के (अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा), ३ दृष्टि (समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि), ५ शक्ति (उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकारपराक्रम), ४ सज्ञा (आहारसज्ञा, भयसज्ञा, मैथुनसज्ञा, परिग्रहसज्ञा) । ये ६१ बोल अरूपी के है । इनमे वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श नहीं पाये जाते है । इनमे 'अगुरुलघु' यह एक भागा पाया जाता है ।

४. भवभ्रमण का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक बारहवा, उद्देशा सातवा)

१ अहो भगवन् ! यह लोक कितना बडा है ? हे गौतम ! यह लोक असख्याता कोडाकोडी योजन का लम्बा- चौडा विस्तार वाला है ।

२ अहो भगवन् ! इतने बडे लोक मे क्या ऐसा कोई एक भी आकाश प्रदेश है जहाँ इस जीव ने जन्म-मरण न किया हो ? गौतम ! नोइणट्ठे समट्ठे (यह बात नहीं है), ऐसा एक भी

आकाशप्रदेश खाली नहीं रहा है, जहाँ इस जीव ने जन्म-मरण न किये हो । यथा- * बकरियो के बाडे का दृष्टात । नरक आदि सब स्थानो मे सब जीव त्रस स्थावर रूप मे अनन्त बार उत्पन्न हुए है परन्तु तीसरे देवलोक से बारहवे देवलोक तक तथा नव ग्रैवेयको मे देवीरूप से उत्पन्न नहीं हुए और पॉच अनुत्तर विमानो मे देवरूप मे और देवीरूप मे उत्पन्न नहीं हुए हैं ।

३ अहो भगवन् ! क्या जीव सब जीवो के माता-पिता,भाई-बहिन, स्त्री, पुत्र पुत्री, पुत्रवधू के रूप मे उत्पन्न हुआ है ? हाँ गौतम ! अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हुआ है । इसी तरह सब जीव भी इस जीव के माता, पिता आदि परिवार रूप मे उत्पन्न हुए हैं ।

४ अहो भगवन् ! क्या यह जीव सब जीवो के शत्रु, बैरी, घातक, वधक, प्रत्यनीक और मित्र रूप मे उत्पन्न हुआ है ? हाँ

** जैसे– कोई पुरुष १०० सौ बकरियो के लिए एक विशाल बाडा बनवावे और उसमे कमसे कम एक दो तीन और अधिक से अधिक एक हजार बकरियो को रखे और उसमे उनके लिए खूब घास पानी डाल दे । यदि बकरिया वहाँ कम से कम एक, दो, तीन दिन और अधिक से अधिक छह महीने तक रहे तो उस बाडे का ऐसा कोई परमाणुपुद्गल मात्र प्रदेश उन बकरियो की मिगणियो, मूत्र आदि से तथा खुर नख आदि से अस्पर्शित रह भी सकता है । परन्तु इस विशाल लोक मे लोक के शाश्वत भाव की अपेक्षा से, ससार के अनादि भाव की अपेक्षा से, नित्य भाव की अपेक्षा से, कर्मो की अधिकता की अपेक्षा से तथा जन्म-मरण की अधि कता की अपेक्षा से इस लोक मे ऐसा कोई भी आकाशप्रदेश नहीं जहा जीव न जन्मा हो अथवा न मरा हो ।*

गौतम ! अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हुआ है । इसी तरह सब जीव भी इस जीव के शत्रु आदि रूप में उत्पन्न हुए हैं । इसी तरह यह जीव सब जीवो के राजा, युवराज जाव सार्थवाह, दास, चाकर, शिष्य, शत्रु, अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हुआ है और सब जीव भी इसी तरह इस जीव के राजा जाव शत्रु रूप मे अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हुए है । क्योकि लोक शाश्वत है, अनादि है, जीव नित्य है, अपने कर्मानुसार जन्म-मरण करता है । इससे जीव ससार मे परिभ्रमण करता है ।

५. पांच देवो का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक बारहवा, उद्देशा नववा)

१ नामद्वार, २ अर्थद्वार, ३ आगतद्वार, ४ गतद्वार, ५ स्थितिद्वार, ६ वैक्रियद्वार, ७ सचिट्ठणाद्वार, ८ अवगाहनाद्वार, ९ अन्तरद्वार, १० अल्पाबोधद्वार ।

१ नामद्वार– अहो भगवन् ! देव कितने प्रकार हैं ? हे गौतम ! देव पाच प्रकार के है– १ भव्यद्रव्यदेव, २ नरदेव, ३ ध ामदिव, ४ देवाधिदेव, ५ भावदेव ।

२ अर्थद्वार– अहो भगवन् ! भव्यद्रव्यदेव किसको कहते हैं ? हे गौतम ! जो जीव अभी मनुष्य गति अथवा तिर्यंच गति मे है और देवगति मे उत्पन्न होने वाले हैं उनको भव्यद्रव्यदेव कहते हैं ।

अहो भगवन् ! नरदेव किसको कहते है ? हे गौतम ! जो राजा चारो दिशाओ के स्वामी हैं, चक्रवर्ती हैं, जिनके पास ८४ लाख हाथी, ८४ लाख घोडा, ८४ लाख रथ, ९६ करोड पैदल, १ लाख ९६ हजार रानियाँ हैं । जो नौ निधान और १४ [illegible] के स्वामी, ६ खण्ड के भोक्ता हैं । ३२ हजार मुकुटबन्ध राजा

जिनकी आज्ञा मे चलते हैं, उनको नरदेव कहते है ।

अहो भगवन् ! धर्मदेव किसको कहते हैं ? हे गौतम ! जो * २७ गुणो को धारण करने वाले हैं, उनको धर्मदेव कहते हैं ।

अहो भगवन् ! देवाधिदेव किसको कहते हैं ? हे गौतम ! ३४ अतिशय, ३५ वाणी के गुणों से सहित, उत्पन्न-ज्ञान दर्शन के धारक, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी तीर्थंकर भगवान् को देवाधिदेव कहते हैं ।

अहो भगवन् ! भावदेव किसे कहते है ? हे गौतम ! भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक, ये चार जाति के देव देवगति सम्बन्धी नामकर्म, गोत्रकर्म को वेदते हैं, उनको भावदेव कहते हैं ।

३ आगतिद्वार– भव्यद्रव्यदेव की आगति २८४ की (१७९ की लडी अर्थात् १०१ सम्मूर्च्छिम मनुष्य, ४८ तिर्यंच, ३० कर्मभूमि, ये १७९ की लडी, ७ नारकी, सर्वार्थसिद्ध विमान को छोडकर ९८ जाति के देवता, ये सब २८४) । नरदेव की आगति ८२ की (१ पहली नारकी, १० भवनपति, २६ वाणव्यन्तर, १० ज्योतिषी, १२ देवलोक, ९ लोकान्तिक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तरविमान, ये सब ८२), तथा १०० की (उपरोक्त ८२ मे १५ परमाधार्मिक तथा ३ किल्विषी, ये १८ बढा दिये) । धर्मदेव की आगति २७५ की (१७१ की लडी १७९ की लडी मे ८ तेउ वायु के कम, ९९ जाति के देवता, ५ नारकी, ये २७५) । देवाधिदेव की आगति ३८ की (१२ देवलोक, ९ लोकान्तिक, ९ ग्रैवेयक, ५

** साधु के २७ गुण– ५ महाव्रत पाले, ५ इन्द्रिया जीते, ४ कषाय टाले, भावसच्चे, करणसच्चे, जोगसच्चे, क्षमावन्त, वैराग्यवन्त, ज्ञानसम्पन्न, दर्शनसम्पन्न, चारित्रसम्पन्न, मनसमाधारणीया, वचनसमाधारणीया, कायसमाधारणीया, शीतादि परीषहो को सहन करे, मारणान्तिक उपसर्ग सहे ।*

अनुत्तरविमान, * ३ नारकी, ये ३८) । भावदेव की आगति १११ की (१०१ सन्नी मनुष्य, ५ सन्नी तिर्यंचपचेन्द्रिय, ५ असन्नी तिर्यंचपचेन्द्रिय, ये १११) ।

४ गतिद्वार– भव्यद्रव्यदेव की गति १९८ की (९९ जाति के देवता के पर्याप्त और अपर्याप्त, ये १९८) नरदेव की गति १४ (+ ७ नारकी के पर्याप्त और अपर्याप्त ये १४) । धर्मदेव की गति ७० की (१२ देवलोक, ९ लोकान्तिक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान, इन ३५ के पर्याप्त और अपर्याप्त , ये ७०) । देवाधिदेव की गति मोक्ष की । भावदेव की गति ४६ की (१५ कर्मभूमि, ५ सन्नी तिर्यंच, पृथ्वी, पानी, वनस्पति, इन २३ के पर्याप्त और अपर्याप्त, ये ४६ हुए) ।

५ स्थितिद्वार–भव्यद्रव्यदेव की स्थिति जघन्य – अन्तर्मुहूर्त

** पहले की तीन यानी पहली, दूसरी, तीसरी नारकी से निकले हुए जीव तीर्थंकर हो सकते है, किन्तु नीचे के चार नरको से निकले हुए जीव तीर्थंकर नहीं हो सकते है ।*

+ यद्यपि कोई-कोई नरदेव (चक्रवर्ती) देवो मे भी उत्पन्न होते है तथा मोक्ष भी जाते है किन्तु वे नरदेवपना छोडकर धर्मदेवपना (साधुपना) अगीकार करे तो देवो मे उत्पन्न होते है तथा मोक्ष भी जाते है । काम भोगो का त्याग किये बिना नरदेव अवस्था मे तो वे नरक मे ही उत्पन्न होते है ।

– अन्तर्मुहूर्त की आयुष्य वाला तिर्यंचपचेन्द्रिय देवताओ मे उत्पन्न हो सकता है, इसलिए भव्यद्रव्यदेव की स्थिति अन्तर्मुहूर्त की कही गई है । तीन पल्योपम की आयुष्य वाला देवकुरु उत्तरकुरु का युगलिया मनुष्य और तिर्यंच देवताओ मे उत्पन्न हो सकता है, इसलिए उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्योपम की कही गई है ।

की, उत्कृष्ट ३ पल्योपम की । नरदेव की स्थिति जघन्य ७०० वर्ष की और उत्कृष्ट ८४ लाख पूर्व की । धर्मदेव की स्थिति जघन्य + अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट देशऊणी करोड पूर्व की – । देवाधिदेव की स्थिति जघन्य ७२ वर्ष की, उत्कृष्ट ८४ लाख पूर्व की । भावदेव की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की है ।

६ वैक्रियद्वार– चार देव (भव्यद्रव्यदेव, नरदेव, धर्मदेव, भावदेव) वैक्रिय करे तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट सख्यात * असख्यात करते है । देवाधिदेव की शक्ति तो अनन्त वैक्रिय करने की है, किन्तु वे वैक्रिय करते नहीं ।

७ सचिट्ठणाकाल– जिस तरह स्थिति कही उसी तरह सचिट्ठणाकाल कह देना चाहिए, परन्तु इतनी विशेषता है कि ध र्मदेव का जघन्य सचिट्ठणाकाल = एक समय का कहना चाहिए ।

८ अवगाहनाद्वार– भव्यद्रव्यदेव की अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन की। नरदेव की अवगाहना जघन्य ७ धनुष की, उत्कृष्ट ५०० धनुष की।

+ कोई मनुष्य अन्तर्मुहूर्त आयुष्य बाकी रहे तब चारित्र (सयम) अगीकार करे, उसकी अपेक्षा जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त कही गई है ।

– कोई मनुष्य कुछ कम करोड पूर्व वर्ष तक चारित्र पालन करे, उसकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थिति देशऊणी (कुछ कम) करोड पूर्व वर्ष कही गई है ।

** असख्यात करे वह एकेन्द्रिय की अपेक्षा समझना ।*

= कोई धर्मदेव अशुभ भाव को प्राप्त करके पुन एक समय मात्र शुभ भाव को प्राप्त कर तुरन्त मृत्यु को प्राप्त हो जाता है । इसलिए धर्मदेव का जघन्य सचिट्ठणाकाल परिणामो की अपेक्षा से एक समय का कहा गया है ।

धर्मदेव की अवगाहना जघन्य प्रत्येक हाथ की, उत्कृष्ट ५०० धनुष की। देवाधिदेव की अवगाहना जघन्य ७ हाथ की, उत्कृष्ट ५०० धनुष की। भावदेव की अवगाहना जघन्य एक हाथ की, उत्कृष्ट ७ हाथ की है ।

९ अन्तरद्वार– भव्यद्रव्यदेव का अन्तर (आन्तरा) जघन्य * १० हजार वर्ष अन्तमुहूर्त अधिक का, उत्कृष्ट अनन्त काल का

** कोई भव्यद्रव्यदेव होकर दस हजार वर्ष की स्थिति वाले व्यन्तरादि देव मे उत्पन्न हुआ । वहॉ से चव कर शुभ पृथ्वी आदि मे चला गया । वहॉ जाकर अन्तर्मुहूर्त रहा । फिर भव्यद्रव्यदेव रूप से उत्पन्न हो गया । इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त अधिक दस हजार वर्ष का अन्तर होता है ।*

शका- देवलोक से चव कर तुरन्त भव्यद्रव्यदेव रूप से उत्पत्ति का सभव होने से दस हजार वर्ष का अन्तर होता है, परन्तु अन्तर्मुहूर्त अधिक कैसे होता है ?

समाधान- ' सर्व जघन्य आयुष्य वाला देव चव कर शुभ पृथ्वी आदि मे उत्पन्न होकर भव्यद्रव्यदेव (तिर्यंच पचेन्द्रिय) मे उत्पन्न होता है ' ऐसा प्राचीन टीकाकार का आशय मालूम होता है । उस मत के अनुसार अन्तर्मुहूर्त अधिक दस हजार वर्ष का अन्तर होता है । कोई आचार्य इसका समाधान इस प्रकार से भी करते है– जिसने देव का आयुष्य बाध लिया है उसको यहा भव्यद्रव्यदेव तरीके से समझाना चाहिए । इससे दस हजार वर्ष की स्थिति वाला देव देवलोक से चव कर भव्यद्रव्यदेव (तिर्यंचपचेन्द्रिय) पने उत्पन्न होता है और अन्तर्मुहूर्त के बाद आयुष्य का बध करता है । इसलिए अन्तर्मुहूर्त अधिक दस हजार वर्ष का अन्तर होता है । भव्यद्रव्यदेव मरकर देव होता है और वहॉ से चव कर वनस्पति आदि मे अनन्त काल तक रह कर फिर भव्यद्रव्यदेव होता है । इस अपेक्षा से अनन्त काल का अन्तर होता है ।

है । नरदेव का अन्तर + जघन्य १ सागर झाझेरा (कुछ अधिक), उत्कृष्ट देशऊणा (कुछ कम) अर्द्धपुद्गलपरावर्तन का है । धर्मदेव का अतर जघन्य प्रत्येक पल्य का, उत्कृष्ट देशऊणा अर्द्धपुद्गलपरावर्तन का है। देवाधिदेव का अन्तर नहीं * । भावदेव का अन्तर जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट अनन्त काल का है ।

१० अल्पबहुत्वद्वार– सबसे थोडे नरदेव, उससे देवाधिदेव सख्यातगुणे, उससे धर्मदेव सख्यातगुणे, उससे भव्यद्रव्यदेव असख्यातगुणे, उससे भावदेव असख्यातगुणे हैं।

६ काल का थोकडा

(भगवतीसूत्र, शतक पच्चीसवा, उद्देशा पाचवा)

१– अहो भगवन् ! क्या आवलिका सख्यात समय रूप है, असख्यात समय रूप है या अनन्त समय रूप है ? गौतम ! आवलिका सख्यात समय रूप नहीं है, अनन्त समय रूप भी नहीं है किन्तु असख्यात समय रूप है ।

+ कोई नरदेव (चक्रवर्ती) कामभोगो मे आसक्त होकर यहाँ से मरकर पहली नरक मे उत्पन्न हो । वहाँ जघन्य सागरोपम की आयु भोग कर वापिस नरदेव (चक्रवर्ती) हो और जब तक चक्ररत्न उत्पन्न न हो तब तक जघन्य एक सागर झाझेरा (कुछ अधिक) अन्तर होता है ।

कोई सम्यगदृष्टि जीव चक्रवर्तीपना प्राप्त करे । फिर वह कुछ कम अर्द्धपुद्गलपरार्वतन काल तक ससार मे परिभ्रमण करे । फिर सम्यक्त्व प्राप्त कर चक्रवर्तीपना प्राप्त करे और मोक्ष जाये । इस अपेक्षा नरदेव का उत्कृष्ट अन्तर देशऊणा (कुछ कम) अर्द्धपुद्गलपरार्वतन होता है ।

* देवाधिदेव (तीर्थंकर भगवान्) मोक्ष मे जाते हैं, इसलिए इनका कोई अन्तर नहीं होता ।

इसी तरह २ आणापाणू (श्वासोच्छ्‌वास), ३ थोव (स्तोक), ४ लव, ५ मुहूर्त, ६ अहोरात्रि, ७ पक्ष, ८ मास, ९ उऊ (ऋतु), १० अयण (अयन), ११ सवच्छर (सवत्सर, वर्ष), १२ जुग (युग), १३ वाससय (सौ वर्ष), १४ वाससहस्स (हजार वर्ष), १५ वाससयसहस्स (लाख वर्ष), १६ पुव्वग (पूर्वांग), १७ पुव्व (पूर्व), १८ तुडियग (त्रुटिताग), १९ तुडिय (त्रुटित), २० अडडग (अटटाग), २१ अडड (अटट), २२ अववग (अववाग), २३ अवव, २४ हूहुयग (हूहूकाग), २५ हूहुय (हूहूक), २६ उप्पलग (उत्पलाग), २७ उप्पल (उत्पल), २८ पउमग (पद्‌माग), २९ पउम (पद्‌म), ३० नलिणग (नलिनाग), ३१ नलिण (नलिन), ३२ अच्छणिपूरग (अच्छनिपूराग), ३३ अच्छणिपूर (अच्छनिपूर), २४ अउयग (अयुताग), ३५ अउय (अयुत), ३६ नउयग (नयुताग), ३७ नउय (नयुत), ३८ पउयग (प्रयुताग), ३९ पउय (प्रयुत), ४० चूलियग (चूलिकाग), ४१ चूलिय (चूलिका), ४२ सीसपहेलियग (शीर्षप्रहेलिकाग), ४३ सीसपहेलिया (शीर्षप्रहेलिका), ४४ पलिओवम (पल्योपम), ४५ सागरोपम (सागरोवम), ४६ ओसप्पिणी (अवसर्पिणी), ४७ उस्सप्पिणी (उत्सर्पिणी) तक कह देना चाहिये । ये सभी असख्यात समय रूप हैं ।

२– 'अहो भगवन् ! क्या पुद्‌गलपरावर्तन सख्यात समय रूप है, असख्यात समय रूप है या अनन्त समय रूप है ? हे गौतम ! सख्यात समय रूप नहीं, असख्यात समय रूप नहीं किन्तु अनन्त समय रूप है । इसी तरह भूतकाल, भविष्यकाल और सर्वकाल कह देना चाहिये ।

३– अहो भगवन् ! क्या बहुत आवलिकाए सख्यात समय रूप हैं, असख्यात समय रूप हैं या अनन्त समय रूप हैं ? हे गौतम ! सख्यात समय रूप नहीं है, सिय असख्यात समय रूप है, सिय

अनन्त समय रूप हैं । इसी तरह बहुत आणपाणू (श्वासोच्छ्वास) यावत् बहुत उत्सर्पिणी तक कह देना चाहिये ।

४– अहो भगवन् ! क्या बहुत पुद्गलपरावर्तन सख्यात समय रूप हैं, असख्यात समय रूप है या अनन्त समय रूप है ? हे गौतम ! सख्यात समय रूप नहीं, असख्यात समय रूप नहीं, किन्तु अनन्त समय रूप है । *

५– अहो भगवन् ! क्या आणपाणू (आनप्राण-श्वासोच्छ्वास) सख्यात आवलिका रूप है, असख्यात आवलिका रूप है या अनन्त आवलिका रूप है ? हे गौतम ! आणपाणू सख्यात आवलिका रूप है, किन्तु असख्यात और अनन्त आवलिका रूप नहीं है । इसी तरह शीर्षप्रहेलिका तक कह देना चाहिये । पल्योपम, सागरोपम, अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी इन चार बोलो मे एक एक मे असख्यात आवलिका है । पुद्गलपरावर्तन, भूतकाल, (गया काल) भविष्यकाल (आने वाला काल) और सर्वकाल इन चार बोलो मे एक एक मे अनन्त आवलिकाए है ।

६– अहो भगवन् ! क्या बहुत आणपाणू (आनप्राण-श्वासोच्छ्वास) मे सख्यात आवलिका हैं, असख्यात आवलिका हैं या अनन्त आवलिका है ? हे गौतम ! सिय सख्यात, सिय असख्यात, सिय अनन्त आवलिका हें । इसी तरह शीर्षप्रहेलिका तक कह देना चाहिये । बहुत पल्योपम, सागरोपम, अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी इन चार बोलो मे सिय असख्यात, सिय अनन्त आवलिका हैं । बहुत पुद्गलपरावर्तन मे अनन्त आवलिका हैं ।

७– अहो भगवन् ! एक थोव (स्तोक) मे कितने आणपाणू (आनप्राण- श्वासोच्छ्वास) हैं ? हे गौतम ! जिस तरह

---

* *भूतकाल, भविष्यकाल और सर्वकाल, इनमे बहुवचन नहीं होता है । इसलिए इनमे बहुवचन की अपेक्षा प्रश्न नहीं किया गया है ।*

आवलिका का कहा, उसी तरह कह देना चाहिये यावत् शीर्षप्रहेलिका तक कह देना चाहिये । इसी तरह एक एक बोल को छोडकर एकवचन की अपेक्षा और बहुतवचन की अपेक्षा प्रश्नोत्तर करना चाहिये ।

८– अहो भगवन् ! एक पल्योपम मे समय से लगाकर शीर्षप्रहेलिका तक कितने है ? हे गौतम ! असख्यात है ।

९– अहो भगवन् ! बहुत पल्योपम मे समय से लगाकर शीर्षप्रहेलिका तक कितने है ? हे गौतम ! सिय असख्यात, सिय अनन्त ।

१०– अहो भगवन् ! एक सागरोपम मे पल्योपम कितने है ? हे गौतम ! सख्यात हैं । इसी तरह एक अवसर्पिणी मे, एक उत्सर्पिणी मे पल्योपम सख्यात है ।

११– अहो भगवन् ! एक पुद्गलपरावर्तन मे पल्योपम कितने है ? हे गौतम ! अनन्त है । इसी तरह भूतकाल, भविष्यकाल, सर्वकाल में भी पल्योपम अनन्त है ।

१२– अहो भगवन् ! बहुत सागरोपम मे पल्योपम कितने है ? हे गौतम ! सिय सख्यात, सिय असख्यात, सिय अनन्त है । इसी तरह अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी मे भी कह देना चाहिये । बहुत पुद्गलपरावर्तन मे पल्योपम अनन्त है ।

१३– अहो भगवन् ! एक अवसर्पिणी मे, एक उत्सर्पिणी मे सागरोपम कितने है ? हे गौतम ! सख्यात यावत् पल्योपम की तरह कह देना चाहिये ।

१४– अहो भगवन् ! एक पुद्गलपरावर्तन मे अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कितनी है ? हे गौतम ! अनन्त है । इसी तरह भूतकाल, भविष्यकाल और सर्वकाल कह देना चाहिये ।

१५– अहो भगवन् ! बहुत पुद्गलपरावर्तन मे अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कितनी हैं ? हे गौतम ! अनन्त है ।

१६– अहो भगवन् ! भूतकाल मे पुद्गलपरावर्तन कितने हैं ? हे गौतम ! अनन्त है । इसी तरह भविष्यकाल और सर्वकाल मे भी पुद्गलपरावर्तन अनन्त हैं ।

समुच्चय तीन काल के ६ आलापक कहे जाते हैं– १-भूतकाल से भविष्यकाल एक समय अधिक है। २-भविष्यकाल से भूतकाल एक समय न्यून (कम) है । ३-भूतकाल से सर्वकाल दुगुना झाझेरा (दुगुने से कुछ अधिक) है। ४-सर्वकाल से भूतकाल आधे से कुछ न्यून (कम) है । ५-भविष्यकाल से सर्वकाल दुगुने से कुछ न्यून (कम) है । ६-सर्वकाल से भविष्यकाल आधा झाझेरा (आधे से कुछ अधिक) है ।

७ नियठा (निर्ग्रन्थ) का थोकडा

(भगवतीसूत्र, शतक पच्चीसवा, उद्देशा छठा)

द्वारगाथा

पण्णवण वेद रागे कप्प चरित्त पडिसेवणा णाणे ।
तित्थ लिग सरीर खेत्ते काल गइ सजम णिगासे ।। १।।
जोगुवओग कसाए लेस्सा परिणाम बध वेदे य ।
कम्मोदीरण उवसपजहण्ण सण्णा य आहारे ।। २ ।।
भव आगरिसे कालतरे य समुग्घाय खेत्त फुसणा य ।
भावे परिमाणे वि य अप्पाबहुय णियठाण ।। ३ ।।

अर्थ–इन तीन गाथाओ मे निर्ग्रन्थो के ३६ द्वार कहे गये है । वे ये हैं - (१) पण्णवणा (प्रज्ञापन) द्वार, (२) वेदद्वार, (३) रागद्वार, (४) कल्पद्वार,(५) चारित्रद्वार, (६) प्रतिसेवनाद्वार, (७) ज्ञानद्वार (८) तीर्थद्वार, (९) लिगद्वार, (१०) शरीरद्वार (११) क्षेत्रद्वार, (१२) कालद्वार, (१३) गतिद्वार, (१४) सयमद्वार, (१५) निकाश, (सन्निकर्ष), द्वार (१६) योगद्वार, (१७) उपयोगद्वार, (१८)

कषायद्वार, (१९) लेश्याद्वार (२०) परिणामद्वार, (२१) बधद्वार, (२२) वेद (कर्मों का वेदन) द्वार, (२३) उदीरणाद्वार, (२४) उपसपद्-हान (स्वीकार और त्याग) द्वार, (२५) सज्ञाद्वार, (२६) आहारद्वार, (२७) भवद्वार, (२८) आकर्षद्वार, (२९) कालमानद्वार, (३०) अन्तरद्वार,(३१) समुद्घातद्वार, (३२) क्षेत्रद्वार, (३३) स्पर्शनाद्वार, (३४) भावद्वार, (३५) परिणामद्वार, (३६) अल्पबहुत्वद्वार ।

१– प्रज्ञापनद्वार– अहो भगवन् ! निर्ग्रन्थ कितने प्रकार के कहे गये है ? हे गौतम ! पाच प्रकार के कहे गये है - * १ पुलाक, २ बकुश, ३ कुशील, ४ निर्ग्रन्थ, ५ स्नातक ।

अहो भगवन् ! पुलाक के कितने भेद है ? हे गौतम ! पुलाक के २ भेद है–लब्धिपुलाक और चारित्रपुलाक (प्रतिसेवनापुलाक) ।

— लब्धिपुलाक अपनी लब्धि से चक्रवर्ती की सेना का भी विनाश कर सकता है ।

** जो बाह्य और आभ्यन्तर ग्रन्थ-परिग्रह रहित होते है, उन्हे निर्ग्रन्थ (साधु) कहते है । यद्यपि सभी साधुओ के सर्वविरतिचारित्र होता है, तथापि चारित्रमोहनीयकर्म के क्षयोपशमादि की विशेषता से पुलाक आदि पाच भेद होते है । नि सार (साररहित) धान के दाने को पुलाक कहते हैं । उस नि सार दाने की तरह जिस साधु का सयम दोषसेवन के द्वारा कुछ असार हो गया हो, उसे पुलाक कहते है । शाली के पूले की तरह । सार थोडा असार बहुत ।*

बकुश– जिसका चारित्र विचित्र प्रकार का हो, उसे बकुश कहते हैं ।

कुशील– दोषो के सेवन से जिसका शील (चारित्र) कुत्सित–मलिन हो गया हो, उसे कुशील कहते है ।

निर्ग्रन्थ– मोहनीयकर्मरहित को निर्ग्रन्थ कहते है ।

स्नातक– चार घातीकर्म रहित को स्नातक कहते है ।

— इस सबध मे कुछ आचार्यो का मत यह है कि विराधना से जो ज्ञानपुलाक होते हैं, उन्हीं को ऐसी लब्धि प्राप्त होती है । वे ही लब्धिपुलाक कहलाते हैं । इनके सिवाय दूसरा कोई लब्धिपुलाक नहीं होता है ।

चारित्रपुलाक (प्रतिसेवनापुलाक) के ५ भेद हैं– १ + ज्ञानपुलाक, २ दर्शनपुलाक, ३ चारित्रपुलाक, ४ लिगपुलाक, ५ यथासूक्ष्मपुलाक ।

अहो भगवन् ! बकुश के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! बकुश के ५ भेद हैं– १ * आभोगबकुश, २ अनाभोगबकुश, ३ सवुड (सवृत) बकुश, ४ असवुड (असवृत) बकुश, ५ यथासूक्ष्मबकुश ।

+ प्रतिसेवनापुलाक की अपेक्षा पुलाक के पाच भेद है– ज्ञान की विराधना करने वाला ज्ञानपुलाक कहलाता है । जो शका आदि दूषणो से दर्शन (समकित) को दूषित करता है उसे दर्शनपुलाक कहते है । मूलगुण और उत्तरगुण की विराधना से जो चारित्र को दूषित करता है उसे चारित्रपुलाक कहते है । बिना कारण जो अन्य लिग को धारण करता है, उसको लिगपुलाक कहते है । जो मन से अकल्पनीय वस्तु को सेवन करने की इच्छा करता है, उसे यथासूक्ष्मपुलाक कहते है ।

* बकुश के दो भेद है– उपकरणबकुश और शरीरबकुश । जो वस्त्र, पात्रादि उपकरण की विभूषा करता हो, उसे उपकरणबकुश कहते है जो अपने हाथ, पैर, नख, मुख आदि शरीर के अवयवो को सुशोभित रखता हो, उसे शरीरबकुश कहते है । इन दोनो प्रकार के बकुशो के फिर पाच भेद है– शरीर, उपकरण आदि की विभूषा करना साधु के लिए वर्जित है ऐसा जानते हुए भी जो दोष लगाता है उसे आभोगबकुश कहते है और जो अनजान मे दोष लगाता है, उसे अनाभोगबकुश कहते है । जो छिपकर दोष लगाता है, उसे सवुड (सवृत) बकुश कहते है और जो प्रकट मे दोष लगाता है उसे असवुड (असवृत) बकुश कहते है । आख और मुख को जो साफ करता है उसे यथासूक्ष्मबकुश कहते है ।

अहो भगवन् ! कुशील के कितने भेद है ? हे गौतम ! कुशील के दो भेद -- + प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील ।

अहो भगवन् ! प्रतिसेवनाकुशील के कितने भेद है ? हे गौतम ! पाच भेद है -- * ज्ञानप्रतिसेवनाकुशील, दर्शनप्रतिसेवना-कुशील, चारित्रप्रतिसेवनाकुशील, लिगप्रतिसेवनाकुशील और यथासूक्ष्मप्रतिसेवनाकुशील ।

अहो भगवन् ! कषायकुशील के कितने भेद है ? हे गौतम ! पाच भेद है -- -- ज्ञानकषायकुशील, दर्शनकषायकुशील, चारित्रकषायकुशील, लिगकषायकुशील, यथासूक्ष्मकषायकुशील ।

अहो भगवन् ! निर्ग्रन्थ के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! पाच

+ मूलगुण व उत्तरगुण की विराधना से जिसका चारित्र कुशील (दूषित) हो, उसको प्रतिसेवनाकुशील कहते है । सज्वलनकषाय के द्वारा जिसका चारित्र दूषित हो, उसको कषायकुशील कहते हैं ।

** ज्ञान, दर्शन, चारित्र और लिग द्वारा जो आजीविका करता हो उसको क्रमश ज्ञानप्रतिसेवनाकुशील, दर्शनप्रतिसेवनाकुशील, चारित्रप्रतिसेवनाकुशील और लिगप्रतिसेवनाकुशील कहते है । 'यह तपस्वी है' इत्यादि शब्द सुन कर जो खुश हो या तपस्या के फल की इच्छा करे, देवादि पद की इच्छा करे उसे यथा-सूक्ष्मप्रतिसेवनाकुशील कहते है ।*

-- जो क्रोध, मान आदि कषायो के उदय से परिणामो मे ऊच-नीच होने से ज्ञान, दर्शन और चारित्र मे दोष लगाता है उसे क्रमश ज्ञानकषायकुशील, दर्शनकषायकुशील और चारित्रकषायकुशील कहते है । जो कषायपूर्वक वेष परिवर्तन करे उसे लिगकषायकुशील कहते है । जो मन से क्रोधादि का सेवन करता है, उसको यथासूक्ष्मकषायकुशील कहते हैं । अथवा जो मन से कषाय द्वारा ज्ञान आदि की विराधना करता है, उसको क्रमश ज्ञानकषायकुशील, दर्शनकषायकुशील आदि कहते है । मूलगुण, उत्तरगुणा मे ये दोष नहीं लगाते ।

भेद है– * प्रथमसमयवर्तीनिर्ग्रन्थ, अप्रथमसमयवर्तीनिर्ग्रन्थ, चरमसमयवर्तीनिर्ग्रन्थ, अचरमसमयवर्तीनिर्ग्रन्थ और यथासूक्ष्मनिर्ग्रन्थ (सब समय सरीखा वर्ते) ।

अहो भगवन् ! स्नातक के कितने भेद है ? हे गौतम ! – स्नातक के पाच भेद है – १ अच्छवी (शरीर की शुश्रूषा, विभूषा रहित), २ अशबल (असबले दोषरहित-शुद्ध चारित्र वाला) ३ अकर्मांश (अकम्मसे घातीकर्मरहित) ,४ ससुद्धनाणदसण-धरे अरहा जिने केवली (सशुद्धज्ञानदर्शन के धारक अरिहन्त जिन केवली), ५ अपरिस्रावी (अपरिस्सावी योगक्रिया रहित होने से कर्मबन्ध रहित) ।

२ वेदद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक आदि पाचो प्रकार के निर्ग्रन्थ क्या सवेदी होते हैं या अवेदी ? हे गौतम ! पुलाक, बकुश और प्रतिसेवानाकुशील ये + सवेदी होते हैं । पुलाक मे दो वेद

** ग्यारहवा गुणस्थान उपशान्तमोहनीय और बारहवा गुणस्थान क्षीणमोहनीय, इनकी स्थिति अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है । इनके प्रथम समय मे रहने वाला प्रथमसमयवर्तीनिर्ग्रन्थ कहलाता है और बाकी के समयो मे रहने वाला अप्रथमसमयवर्तीनिर्ग्रन्थ कहलाता है । इसी तरह उपरोक्त दोनो गुणस्थानो के चरम (अन्तिम) समय मे रहने वाला चरमसमयवर्ती और बाकी समयो मे रहने वाला अचरमसमयवर्ती निर्ग्रन्थ कहलाता है । प्रथम आदि समयो की विवक्षा किये बिना सामान्यत निर्ग्रन्थ को यथासूक्ष्मनिर्ग्रन्थ कहते है । इनके लिए सब समय सरीखे है ।*

– किसी भी टीकाकार ने कहीं भी स्नातक के अवस्थाकृत भेदो की व्याख्या नहीं की है । इसलिए इन्द्र, शक्र, पुरन्दर शब्दो की तरह इनका भी शब्दनय की अपेक्षा से भेद होता है , ऐसा सभव है । (टीका)

+ पुलाक, बकुश और प्रतिसेवनाकुशील उपशमश्रेणी या क्षपकश्रेणी नहीं कर सकते है, इसलिए ये अवेदी नहीं हो सकते है ।

पाये जाते है - पुरुषवेद और + पुरुषनपुसकवेद । बकुश और प्रतिसेवनाकुशील मे तीनो ही वेद पाये जाते है । — कषायकुशील सवेदी भी होता है और अवेदी भी होता है । सवेदी होता है तो तीनो वेद पाये जाते है । अवेदी होता है तो उपशातवेदी या क्षीणवेदी होता है ।

निर्ग्रन्थ और स्नातक अवेदी होते है । निर्ग्रन्थ उपशान्तवेदी अथवा क्षीणवेदी होता है और स्नातक क्षीणवेदी होता है ।

३ रागद्वार– अहो भगवन् ! क्या पुलाक सरागी होता है या वीतरागी होता है ? हे गौतम ! सरागी होता है, वीतरागी नहीं होता है । इसी तरह बकुश और कुशील (प्रतिसेवना, कषायकुशील) भी सरागी होते है, वीतरागी नहीं। निर्ग्रन्थ और स्नातक वीतरागी होते है, सरागी नहीं । निर्ग्रन्थ उपशान्तकषायवीतरागी होता है अथवा क्षीणकषायवीतरागी होता है । स्नातक क्षीणकषायवीतरागी होता है।

४ कल्पद्वार– अहो भगवन् ! कल्प के कितने भेद है ? हे गौतम ! कल्प के ५ भेद है– १ स्थितकल्प, २ अस्थितकल्प, ३ स्थविरकल्प, ४ जिनकल्प, ५ कल्पातीत ।

+ स्त्री को पुलाकलब्धि नहीं होती है परन्तु पुलाकलब्धि वाला पुरुष अथवा पुरुषनपुसक होता है । जो पुरुष होते हुए भी लिगछेदादि द्वारा कृत्रिम नपुसक होता है, उसे पुरुषनपुसक जानना चाहिए किन्तु स्वभाव से (स्वरूप से) नपुसकवेद पुलाकलब्धि वाला नहीं होता है ।

— कषायकुशील सूक्ष्मसपरायगुणस्थान तक होता है । वह प्रमत्त, अप्रमत्त, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिबादर मे सवेदी होता है । सूक्ष्मसपराय मे उपशान्तवेदी या क्षीणवेदी होता है, तब वह अवेदक होता है ।

पुलाक मे तीन कल्प पाये जाते हैं । (* स्थितकल्प,

---

* प्रथम और अन्तिम तीर्थंकरो के साधुओ मे 'अचेलकल्प' आदि दस कल्प होते है । क्योकि उन्हे उनका पालन करना आवश्यक होता है । इसलिए वे स्थितकल्प मे होते है । बीच के बाईस तीर्थंकरो के साधु कभी कल्प मे स्थित होते हैं और कभी स्थित नहीं होते, क्योकि कल्प का पालन करना उनके लिए आवश्यक नहीं है । इसलिए वे अस्थितकल्प वाले होते है ।

छद्मस्थ तीर्थंकर सकषायी भी होते है । इसलिए कषायकुशील मे कल्पातीतपना पाया जा सकता है ।

निर्ग्रन्थ और स्नातक मे जिनकल्प और स्थविरकल्प के धर्म नहीं होते है । इसलिए ये दोनो कल्पातीत ही होते है । (टीका)

दस कल्प ये है- १ अचेलकल्प, २ औद्देशिककल्प, ३ राजपिण्ड ४ शय्यातर, ५ मासकल्प, ६ चतुर्मासकल्प, ७ व्रत, ८ पतिक्रमण, ९ कृतिकर्म, १० पुरुषज्येष्ठ ।

दस कल्प इस प्रकार है-

(१) अचेलकल्प- पहले व चौबीसवे तीर्थंकर के साधुओ के सफेद रग के वस्त्र रखने का कल्प है । ये वस्त्र कम कीमत के होते हैं तथा सीमित परिमाण मे रखे जाते है । शेष बावीस तीर्थंकर के साधु पाच वर्ण के वस्त्र आवश्यकतानुसार रख सकते है ।

(२) औद्देशिक कल्प- पहले व चौबीसवे तीर्थंकर के साधु का अन्य संभोगी साधु के निमित्त से बनाया हुआ आहार दूसरे साधु के नहीं लेने का कल्प है, यदि लेवे तो औद्देशिक दोष लगे । शेष बावीस तीर्थंकर के साधु उक्त औद्देशिक आहार ले सकते है ।

(३) राजपिण्ड- पहले व चौबीसवे तीर्थंकर के साधु के राजपिण्ड-यानी राजा के वास्ते बनाया हुआ आहार- नहीं लेने का कल्प है । शेष बावीस तीर्थंकर के साधु राजपिण्ड ले सकते है ।

(४) शय्यातर– चौबीस तीर्थंकरो के साधुओ का शय्यातर के यहा से आहार नहीं लेने का कल्प है ।

(५) मासकल्प– पहले व चौबीसवे तीर्थंकर के साधुओ के लिए नवकल्पी विहार बताया गया है । शेष बावीस तीर्थंकरो के साधुओ के लिए नवकल्पी विहार नहीं बताया गया है । वे अपनी इच्छानुसार विहार करते है ।

(६) चतुर्मासिकल्प– पहले व चौबीसवे तीर्थंकर के साधु का वर्षाकाल मे चार महीने एक स्थान पर रहने का कल्प है । बावीस तीर्थंकर के साधुओ का वर्षाकाल मे ७० दिन एक स्थान पर रहने का कल्प है । पहले वर्षा हो जाने से पाप लगने का अदेशा हो तो अधिक भी रह सकते है ।

(७) व्रत– पहले व चौबीसवे तीर्थंकर के साधु के लिये पाच महाव्रत और छठा रात्रिभोजनत्याग का कल्प है । बावीस तीर्थंकरो के साधुओ के लिए चार महाव्रत व पाचवे रात्रिभोजनत्याग का कल्प है ।

(८) प्रतिक्रमण– पहले व चौबीसवे तीर्थंकर के साधु के लिये देवसिय, राइसिय, पक्खी, चौमासी व सवत्सरी, ये पाच प्रतिक्रमण करने का कल्प है । बावीस तीर्थंकरो के साधुओ के लिए चौमासी व सवत्सरी का प्रतिक्रमण करना आवश्यक है । शेष प्रतिक्रमण पाप लगे तो करते है अन्यथा नहीं करते ।

(९) कृतिकर्म– चौबीस तीर्थंकरो के साधुओ के लिए यह कल्प है कि छोटी दीक्षा वाले साधु बडी दीक्षा वालो को वदना नमस्कार करते है, उनका गुणग्राम करते है ।

(१०) पुरुषज्येष्ठ– चौबीस ही तीर्थंकरो के लिये यह कल्प है कि पुरुष की प्रधानता होने से चाहे सौ वर्ष की दीक्षित साध्वी हो, तो भी वह नवदीक्षित साधु को वदना नमस्कार करती है ।

अस्थितकल्प और स्थविरकल्प)। बकुश और प्रतिसेवनाकुशील मे पहले के चार कल्प पाये जाते हैं । कषायकुशील मे पाच, निर्ग्रन्थ और स्नातक में तीन (स्थितकल्प, अस्थितकल्प, कल्पातीत) कल्प पाये जाते हैं ।

५ चारित्रद्वार– अहो भगवन् ! चारित्र कितने हैं ? हे गौतम ! चारित्र ५ हैं – १ सामायिकचारित्र, २ छेदोपस्थापनीयचारित्र, ३ परिहारविशुद्धचारित्र, ४ सूक्ष्मसम्परायचारित्र, ५ यथाख्यातचारित्र । पुलाक, बकुश और प्रतिसेवनाकुशील मे पहले के दो चारित्र पाये जाते है । कषायकुशील मे पहले के चार चारित्र पाये जाते हैं । निर्ग्रन्थ और स्नातक मे एक यथाख्यातचारित्र पाया जाता है ।

६ प्रतिसेवनाद्वार– अहो भगवन् ! क्या पुलाक प्रतिसेवी (सयम मे दोष लगाने वाला) होता है या अप्रतिसेवी (सयम मे दोष नहीं लगाने वाला) होता है ? हे गौतम ! पुलाक प्रतिसेवी होता है । वह पाच महाव्रत रूप मूलगुण मे और दस पच्चक्खाण रूप

चूकि पहले तीर्थंकर के साधु ऋजु जड होते है और अन्तिम तीर्थंकर के साधु वक्र जड होते हैं तथा शेष बावीस तीर्थंकर के साधु ऋजु प्रज्ञ होते है । इसी कारण पहले व चौबीसवे तीर्थंकर के साधुओ के कल्प मे और शेष बावीस तीर्थंकरो के साधुओ के कल्प मे अन्तर है ।

पहले और अन्तिम तीर्थंकर के साधुओ मे दस ही कल्प नियमा होते हैं । बीच के २२ तीर्थंकरो के साधुओ मे चार कल्प (चौथा, सातवा, नवा दसवा) की नियमा और छह कल्प की भजना होती है ।

[illegible] मर्यादानुसार वस्त्र पात्रादि रखना स्थविरकल्प है ।
[illegible] २ उत्कृष्ट १२ उपकरण रखना जिनकल्प है ।
[illegible] केवली तीर्थंकर कल्पातीत होते है ।

उत्तरगुण मे दोष लगाता है । इसी तरह प्रतिसेवनाकुशील भी मूलगुणप्रतिसेवी और उत्तरगुणप्रतिसेवी होता है । बकुश मूलगुण-अप्रतिसेवी होता है और उत्तरगुण प्रतिसेवी होता है । कषायकुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक मूलगुण उत्तरगुण अप्रतिसेवी होते है । ये मूलगुणो मे और उत्तरगुणों मे दोष नहीं लगाते है ।

७ ज्ञानद्वार- अहो भगवन् ! ज्ञान के कितने भेद है ? हे गौतम ! पाच भेद है - १ मतिज्ञान, २ श्रुतज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ मन पर्यायज्ञान, ५ केवलज्ञान । पुलाक, बकुश, और प्रतिसेवनाकुशील कदाचित् दो ज्ञान (मतिज्ञान, श्रुतज्ञान) वाले और कदाचित् तीन ज्ञान (मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान) वाले होते है । कषायकुशील और निर्ग्रन्थ कदाचित् दो ज्ञान वाले, कदाचित् तीन ज्ञान (मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान अथवा मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, मन पर्यायज्ञान) वाले, कदाचित् चार ज्ञान वाले होते है । स्नातक एक ज्ञान (केवलज्ञान) वाला होता है ।

अहो भगवन् ! पुलाक कितना ज्ञान पढता है ? हे गौतम ! जघन्य नवमे पूर्व की तीसरी आचारवस्तु (आयारवत्थु) तक और उत्कृष्ट नौ पूर्व तक पढता है ।

बकुश और प्रतिसेवनाकुशील जघन्य आठ प्रवचनमाता का और उत्कृष्ट दस पूर्व का ज्ञान (श्रुत) पढते है । कषायकुशील और निर्ग्रन्थ जघन्य आठ प्रवचनमाता का और उत्कृष्ट चौदह पूर्व का ज्ञान पढते है । स्नातक श्रुतव्यतिरिक्त (श्रुतरहित) होता है ।

८ तीर्थद्वार- अहो भगवन् ! पुलाक तीर्थ मे होता है या अतीर्थ मे होता है ? हे गौतम ! पुलाक तीर्थ मे होता है किन्तु अतीर्थ मे नहीं होता है । इसी तरह बकुश और प्रतिसेवनाकुशील का भी कह देना चाहिये । * कषायकुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक

** छद्मस्थ अवस्था मे तीर्थंकर कषायकुशील होते है, इस अपेक्षा से अतीर्थ मे होते है । अथवा तीर्थ का विच्छेद हो जाने पर अन्य चारित्री कषायकुशील होते हैं। इस अपेक्षा से भी अतीर्थ मे होते हैं।*

ये तीन तीर्थ मे भी होते है और अतीर्थ मे भी होते हैं और तीर्थंकर या प्रत्येकबुद्ध मे होते है ।

९ लिगद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक किस लिग मे होता है ? स्वलिग में, अन्यलिग मे या गृहस्थलिग में होता है ? हे गौतम ! + द्रव्यलिग की अपेक्षा स्वलिग, अन्यलिग और गृहस्थलिग मे होता है । भावलिग की अपेक्षा स्वलिग मे होता है । इसी तरह बकुश, प्रतिसेवनाकुशील, कषायकुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक का कह देना चाहिये ।

१० शरीरद्वार - अहो भगवन् ! पुलाक कितने शरीरो मे होता है ? हे गौतम ! पुलाक औदारिक, तैजस, कार्मण, इन तीन शरीरो मे होता है । इसी तरह निर्ग्रन्थो और स्नातक का भी कह देना चाहिये । बकुश और प्रतिसेवनाकुशील औदारिक, वैक्रिय, तैजस, कार्मण, इन चार शरीरो मे होता है । कषायकुशील पाच शरीरो मे होता है ।

११ क्षेत्रद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक कर्मभूमि मे होता है या अकर्मभूमि मे ? हे गौतम ! पुलाक * जन्म और सद्भाव की

+ लिग के दो भेद है– द्रव्यलिग और भावलिग । ज्ञानादि को भावलिग कहते है । इसलिये भाव की अपेक्षा इसको स्वलिग कहते है । द्रव्यलिग के दो भेद है- स्वलिग और परलिग । मुखवस्त्रिका रजोहरण आदि द्रव्य स्वलिग है। परलिग के दो भेद हैं- कुतीर्थिकलिग और गृहस्थलिग । पुलाक तीनो प्रकार के द्रव्यलिग मे होता है क्योंकि चारित्र का परिणाम किसी भी द्रव्यलिग की अपेक्षा नहीं रखता है । (टीका)

** जन्म (उत्पत्ति) और सद्भाव (चारित्रभाव का अस्तित्व) की अपेक्षा पुलाक कर्मभूमि मे ही होता है अर्थात् कर्मभूमि मे ही जन्मता है और वहीं विचरता हे, किन्तु अकर्मभूमि मे उत्पन्न नहीं होता है क्योंकि अकर्मभूमि मे उत्पन्न हुए जीव को चारित्र नही आता है। सहरण (साहरण) की अपेक्षा भी पुलाक अकर्मभूमि*

अपेक्षा कर्मभूमि मे होता है, अकर्मभूमि मे नहीं होता है । बकुश जन्म की अपेक्षा कर्मभूमि मे होता है , अकर्मभूमि मे नहीं होता है, किन्तु सहरण (साहरण) की अपेक्षा कर्मभूमि मे भी सद्भाव होता है और अकर्मभूमि मे भी होता है । इसी तरह कुशील (कषायकुशील और प्रतिसेवनाकुशील), निर्ग्रन्थ और स्नातक का भी कह देना चाहिये ।

१२ कालद्वार– अहो भगवन् ! क्या पुलाक * अवसर्पिणीकाल, उत्सर्पिणीकाल या नोअवसर्पिणी–नोउत्सर्पिणी काल मे होता है ? हे गौतम ! उपर्युक्त तीनो काल मे होता है । अहो भगवन् ! पुलाक अवसर्पिणी के कौन से आरे मे होता है ? हे गौतम ! + जन्म की अपेक्षा तीसरे, चौथे आरे मे होता है और

मे नहीं होता है क्योकि देवता पुलाकलब्धि वाले का साहरण नहीं कर सकते है। नौ बोलो का साहरण नहीं होता है–पुलाक, आहारकलब्धि, साध्वी,अप्रमादी, उपशमश्रेणी, क्षपकश्रेणी, परिहारविशुद्धिचारित्र वाले, चौदह पूर्वधारी और केवलज्ञानी ।

** भरत और ऐरावत क्षत्र मे अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी ये दो काल होते है और महाविदेह तथा हैमवत आदि क्षेत्रो मे नोअवसर्पिणी–नोउत्सर्पिणी काल होता है।*

+ पुलाक अवसर्पिणी काल के चौथे आरे मे जन्मा हुआ हो तो पाचवे आरे मे उसका सद्भाव हो सकता है। तीसरे चौथे आरे मे जन्म और सद्भाव दोनो हो सकते है। उत्सर्पिणीकाल मे जन्म की अपेक्षा दूसरे तीसरे चौथे आरे मे होता है। दूसरे आरे के अन्त मे जन्म लेकर तीसरे आरे मे चारित्र स्वीकार करता है। तीसरे, चौथे आरे मे जन्म और सद्भाव दोनो होते हैं। सद्भाव की अपेक्षा तीसरे,चौथे आरे मे ही होता है क्योकि इन्ही दो आरो मे चारित्र की प्राप्ति होती है।

सद्भाव की अपेक्षा तीसरे, चौथे, पाचवे आरे मे होता है ।

जिस तरह पुलाक का कहा, उसी तरह निर्ग्रन्थ और स्नातक का भी कह देना चाहिये । बकुश, प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील जन्म और सद्भाव (प्रवृत्ति) की अपेक्षा तीसरे, चौथे, पाचवे आरे मे होते है । उत्सर्पिणीकाल मे छहो नियठा जन्म की अपेक्षा से दूसरे, तीसरे, चौथे आरे मे होते है और सद्भाव (प्रवृत्ति) की अपेक्षा तीसरे चौथे आरे मे होते है । साहरण की अपेक्षा पुलाक का साहरण नहीं होता है । शेष * पाच नियठा साहरण की अपेक्षा छहो आरे और चारो पलिभाग (देवकुरु, उत्तरकुरु, हरिवास, रम्यकवास, हेमवय, ऐरण्यवय, महाविदेह क्षेत्र) मे पाये जाते है । नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी की अपेक्षा छहो नियठा जन्म की अपेक्षा चौथे पलिभाग यानी महाविदेह क्षेत्र मे होते है और सहरण की अपेक्षा पुलाक को छोडकर पाचो ही नियठा छहो आरे और चारो पलिभाग मे पाये जाते है ।

१३ गतिद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक आदि नियठा मरकर कहा उत्पन्न होते है ? हे गौतम ! पुलाक मरकर जघन्य पहले देवलोक मे, उत्कृष्ट आठवे देवलोक मे जाता है । स्थिति जघन्य प्रत्येक पल की, उत्कृष्ट १८ सागर की होती है । यदि आराधक हो तो चार (इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग-त्रायस्त्रिंश, लोकपाल) पदवियो मे से कोई एक पदवी पाता है ।

---

*साहरण की अपेक्षा निर्ग्रन्थ और स्नातक का छहो आरे और चार पलिभाग मे सद्भाव कहा है। इसका अभिप्राय यह है कि पहले साहरण किये हुए मुनि को निर्ग्रन्थपन और स्नातकपन की प्राप्ति होती है। इस अपेक्षा से ऐसा समझना चाहिए। वैसे वेदरहित मुनि का साहरण नहीं होता है। कहा भी है– श्रमणी (साध्वी) वेदरहित, परिहारविशुद्ध, पुलाकलब्धिवाला, अप्रमत्त, चौदह पूर्वधारी और आहारकलब्धिवाले का साहरण नहीं होता है। (टीका)

बकुश और प्रतिसेवनाकुशील मरकर जघन्य पहले देवलोक मे, उत्कृष्ट बारहवे देवलोक मे जाते है । स्थिति जघन्य प्रत्येक पल (दो पल्योपम से लेकर नौ पल्योपम तक) की , उत्कृष्ट २२ सागर की होती है । यदि आराधक हो तो उपरोक्त चार पदवियो मे से कोई एक पदवी पाता है ।

कषायकुशील मरकर जघन्य पहले देवलोक मे, उत्कृष्ट सर्वार्थसिद्ध विमान मे जाता है । स्थिति जघन्य प्रत्येक पल की, उत्कृष्ट ३३ सागर की होती है । यदि आराधक हो तो पाच (इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग-त्रायस्त्रिंश, लोकपाल, अहमिन्द्र) पदवियो मे से कोई एक पदवी पाता है ।

निर्ग्रन्थ मरकर सर्वार्थसिद्ध मे जाता है । स्थिति ३३ सागर की होती है और एक अहमिन्द्र की पदवी पाता है ।

उक्त पाच नियठा (पुलाक, बकुश, प्रतिसेवनाकुशील, कषायकुशील, निर्ग्रन्थ) यदि * विराधक होवे तो कोई पदवी नहीं पाते है, सामान्य देव होते हैं ।

** पॉच नियठा विराधक की अपेक्षा 'अन्नयरेसु' यानी दूसरे ठिकानो मे उत्पन्न हो सकते है, ऐसा बतलाया गया है। इसका खुलासा इस प्रकार है –*

पहले चार नियठो ने पहले आयुष्य बॉध लिया हो तो भवनपति आदि ठिकानो मे उत्पन्न हो सकते है अथवा इन्द्रादि की पदवी न पाकर अन्य वैमानिक देवो मे उत्पन्न हो सकते है। कषायकुशील अप्रतिसेवी होते है, वे मूलगुण उत्तरगुण मे दोष नहीं लगाते है। इनमे तीर्थंकर देव तो उत्कृष्ट कषायकुशील होते है तथा वे कल्पातीत होते है इसलिये ये तो विराधक होते ही नहीं । सामान्य साधुओ मे जो कषायकुशील होते है वे भी मूलगुण उत्तरगुण के विराधक नही होते। परन्तु कणाय के उदय से परिणामो की धारा मे उतार चढाव होने से विराधक हो सकते है।

स्नातक मरकर मोक्ष मे जाता है । स्नातक आराधक ही होता है, विराधक नहीं होता है ।

१४ सयमस्थान– अहो भगवन् ! पुलाक मे * सयमस्थान कितने हैं ? हे गौतम ! असख्यात हैं । इसी तरह बकुश,

---

इस प्रकार कषायकुशील पहले आयुष्य का बध हो जाने से तथा ऊपर लिखे अनुसार विराधक होने से दूसरे स्थानो मे उत्पन्न हो सकते हैं। निर्ग्रन्थ नियण्ठा निर्ग्रन्थ अवस्था मे तो विराधक हो ही नहीं सकता। उनके परिणाम वड्ढमाण अवट्ठिया होते है तथा वे अजघन्य अनुत्कृष्ट ३३ सागरोपम की आयु वाले अनुत्तर विमान मे ही उत्पन्न होते है, दूसरे स्थान मे नहीं। इनका अन्यतर स्थान मे उत्पन्न होना इस प्रकार सभव है कि उपशमश्रेणी मे जो निर्ग्रन्थ होते है वे उपशमश्रेणी की स्थिति पूरी होने पर नीचे गुणस्थानो मे आते है तब निर्ग्रन्थावस्था छोडकर दूसरे नियण्ठे मे आ सकते है और उस समय दूसरे स्थानो की स्थिति बाध सकते है। इन्हे भूतनय की अपेक्षा से निर्गन्थ मान कर निर्ग्रन्थ का दूसरे स्थानो मे जाना बताया गया है, ऐसा सभव है। तत्त्व केवलीगम्य ।

प्रश्न– पाच शरीर और छ समुद्घात कषायकुशील के होते है फिर उन्हे अप्रतिसेवी–मूलगुण उत्तरगुण का अविराधक कैसे कहा गया है ?

उत्तर– वीतराग के पैरो के नीचे जीव आजावे तो उन्हे ईर्यावहीबन्ध होना कहा गया और सरागी को इस क्रिया से सपराय-बंध होना बतलाया है। क्रिया एकसी होते हुए भी भेद का कारण यह है कि वीतराग के परिणाम बहुत ऊंचे होते है। इसी प्रकार परिणामो की अतिशय शुद्धता के कारण कषायकुशील को ५ शरीर और ६ समुद्घात होते हुए भी अप्रतिसेवी कहा गया है।

** सयम–अर्थात् चारित्र की शुद्धि अशुद्धि की हीनाधिकता के कारण होने वाले भेदो को सयमस्थान कहते है। वे असख्याता होते है। उनमे प्रत्येक सयमस्थान के सर्वाकाश प्रदेश गुणित (गुणा करे)*

प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील का कह देना चाहिये । निर्ग्रन्थ और स्नातक का सयमस्थान एक है ।

इनकी अल्पबहुत्व इस प्रकार है– सब से थोडे निर्ग्रन्थ और स्नातक के सयमस्थान, क्योकि इनका सयमस्थान एक ही है। उससे पुलाक के सयमस्थान असख्यातगुणा, उससे बकुश के सयमस्थान असख्यातगुणा, उससे प्रतिसेवनाकुशील के सयमस्थान असख्यातगुणा, उससे कषायकुशील के सयमस्थान असख्यातगुणा है ।

१५ निकासद्वार– * (सनिकर्षद्वार) – अहो भगवन् ! पुलाक के कितने चारित्रपर्याय होते है ? हे गौतम ! अनन्त होते है । इसी तरह यावत् स्नातक तक कह देना चाहिये । अहो भगवन् ! एक पुलाक दूसरे पुलाक के चारित्र पर्यायो की अपेक्षा हीन, अधिक, तुल्य होता है ? हे गौतम ! पुलाक पुलाक आपस मे — छट्ठाणवडिया षट्स्थानपतित है । कषायकुशील के साथ मे

सर्वाकाशप्रदेश प्रमाण (अनन्तानन्त) पर्याय (अश) होते है। वे सयमस्थान पुलाक के असख्यात होते है, क्योकि चारित्रमोहनीय का क्षयोपशम विचित्र होता है। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील का भी कह देना चाहिए। कषाय का अभाव होने से निर्ग्रन्थ और स्नातक के एक ही सयमस्थान होता है।

** चारित्र की पर्यायो को सनिकर्ष कहते है। पुलाक आदि का अपने स्वजातीय पुलाक आदि के साथ सयोजन (मिलान) करना स्वस्थान-सनिकर्ष कहलाता है।*

— अनन्तभागहीन, असख्यातभागहीन, सख्यातभागहीन, अनन्तगुण-हीन, असख्यातगुणहीन, सख्यातगुणहीन। इसको 'छट्ठाणवडिया' कहते है। यह हीनता की अपेक्षा से छट्ठाणवडिया है। इसी तरह 'वृद्धि' की अपेक्षा से भी 'छट्ठाणवडिया' कह देना चाहिए।

भी छट्ठाणवडिया है । बकुश, प्रतिसेवनाकुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक से अनन्तगुणहीन (अनन्तवे भाग) है ।

एक बकुश दूसरे बकुश के साथ मे (आपस मे) छट्ठाणवडिया है, प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील से छट्ठाणवडिया है, पुलाक से अनन्तगुण अधिक है, निर्ग्रन्थ और स्नातक से अनन्तगुणहीन है ।

प्रतिसेवनाकुशील पतिसेवनाकुशील से छट्ठाणवडिया है । बकुश से छट्ठाणवडिया और कषायकुशील से छट्ठाणवडिया है । पुलाक से अनन्तगुण अधिक और निर्ग्रन्थ, स्नातक से अनन्तगुणहीन है ।

एक कषायकुशील दूसरे कषायकुशील के साथ आपस मे छट्ठाणवडिया है, पुलाक, बकुश और पतिसेवनाकुशील से छट्ठाणवडिया है निर्ग्रन्थ और स्नातक से अनन्तगुणहीन है ।

निर्ग्रन्थ और स्नातक आपस मे तुल्य हैं । पुलाक, बकुश और कषायकुशील और प्रतिसेवनाकुशील से अनन्तगुण अधिक है। अल्पबहुत्व–सब से थोडे पुलाक और कषायकुशील के जघन्य चारित्र के पर्याय, उससे पुलाक के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्तगुणा, उससे बकुश और प्रतिसेवनाकुशील के जघन्य चारित्र के पर्याय परस्परतुल्य अनन्तगुणा, उससे बकुश के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्तगुणा उससे प्रतिसेवनाकुशील के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्तगुणा, उससे कषायकुशील के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्तगुणा, उससे निर्ग्रन्थ और स्नातक के चारित्र के पर्याय परस्पर तुल्य अनन्तगुणा ।

१८ योगद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक सयोगी होता है या अयोगी होता है ? हे गौतम ! सयोगी (मनयोगी वचनयोगी, काययोगी) होता है अयोगी नहीं होता है । इसी तरह बकुश प्रतिसेवना कषायकुशील और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिये ।

स्नातक सयोगी और अयोगी दोनो होता है ।

१७ उपयोगद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक साकार (ज्ञान) उपयोग वाला होता है या अनाकार (दर्शन) उपयोग वाला होता है ? हे गौतम ! साकार - उपयोग वाला भी होता है और अनाकार-उपयोग वाला भी होता है । इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना, कषायकुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक का कह देना चाहिये ।

१८ कषायद्वार – अहो भगवन् ! पुलाक सकषायी होता है या अकषायी होता है ? हे गौतम ! सकषायी होता है, उसमे क्रोध, मान, माया, लोभ, ये चारो कषाय पाये जाते है । इसी तरह बकुश और प्रतिसेवनाकुशील का कह देना चाहिये । कषायकुशील सकषायी होता है । उसमे * चार या तीन या दो या एक कषाय पाये जाते हैं । निर्ग्रन्थ अकषायी (उपशातकषायी या क्षीणकषायी) होता है । स्नातक अकषायी (क्षीणकषायी) होता है ।

१९ लेश्याद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक लेश्या वाला होता है या लेश्यारहित होता है ? हे गौतम ! पुलाक लेश्या वाला होता है, किन्तु लेश्यारहित नहीं होता है । उसमे तेजोलेश्या, पद्मलेश्या और शुक्ललेश्या ये तीन विशुद्ध लेश्या होती है । इसी तरह बकुश और प्रतिसेवनाकुशील का भी कह देना चाहिये ।

' कषायकुशील मे + छहो लेश्या पाई जाती है । निर्ग्रन्थ

** उपशमश्रेणी या क्षपकश्रेणी मे क्रोध का उपशम या क्षय हो तो तीन कषाय पाये जाते हैं। जब माया का उपशम या क्षय होता है तो सूक्ष्मसम्पराय नामक दसवे गुणस्थान मे एक सज्वलन का लोभ पाया जाता है।*

+ यहाँ जो छ लेश्या बताई है, वे द्रव्यलेश्या की अपेक्षा से है। भगवती शतक १, उद्देशा १ मे प्रमत्त अप्रमत्त साधु मे पहली तीन लेश्या का निषेध किया है और टीका मे स्पष्टीकरण दिया है कि कहीं कहीं साधुओ के छ लेश्या होने का जो उल्लेख है, वह द्रव्यलेश्या की अपेक्षा से समझना चाहिए।

मे एक परमशुक्ललेश्या पाई जाती है । स्नातक सलेशी भी होता है और अलेशी भी होता है । यदि सलेशी होता है तो एक * परमशुक्ललेश्या पाई जाती है ।

२० परिणाम– अहो भगवन् ! पुलाक मे कौन सा परिणाम होता है ? – हीयमान, वर्द्धमान या अवट्ठिया (अवस्थित) ? हे गौतम ! उक्त तीनो परिणाम पाये जाते हैं । इसी तरह बकुश, प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील मे भी तीनो परिणाम पाये जाते है । हीयमान, वर्द्धमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है । अवट्ठिया (अवस्थित) की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ७ समय की होती है । निर्ग्रन्थ मे +

** जब जीव मे शुक्लध्यान का तीसरा भेद पाया जाता है, उस समय परमशुक्ललेश्या होती है, बाकी समय शुक्ललेश्या होती है, किन्तु वह दूसरे जीवो की शुक्ललेश्या की अपेक्षा तो परमशुक्ललेश्या ही होती है।*

+ जब पुलाक के परिणाम बढ़ते हो और कषाय के द्वारा बाधित होते हो उस समय वह एकादि समय तक वर्द्धमान परिणाम का अनुभव करता है। इसलिए पुलाक के वर्द्धमान परिणाम की स्थिति जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। इसी तरह बकुश प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील के विषय मे जान लेना चाहिए किन्तु बकुश आदि मे जघन्य एक समय वर्द्धमान परिणाम मरण की अपेक्षा भी घटित हो सकता है। पुलाकपने मे मरण नही होता है, इसलिए पुलाक मे मरण की अपेक्षा एक समय घटित नही होता है।

वर्द्धमान (वड्ढमाण) और अवट्ठिया, ये दो परिणाम पाये जाते हैं । वर्द्धमान की स्थिति जघन्य, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है । अवट्ठिया की स्थिति जघन्य – एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है ।

स्नातक मे वर्द्धमान और अवट्ठिया ये दो परिणाम पाये जाते हैं । * वर्द्धमान की स्थिति जघन्य, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है और अवट्ठिया की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट देशऊणी करोड पूर्व होती है ।

२१ बन्धद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक मे कितने कर्मों का

– निर्ग्रन्थ जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक वर्द्धमान परिणाम वाला होता है। जब उसे केवलज्ञान हो जाता है तब उसके परिणामान्तर (दूसरा परिणाम) हो जाता है। निर्ग्रन्थ का मरण अवट्ठिया परिणाम मे होता है। इसलिए उसके अवट्ठिया परिणाम की स्थिति एक समय की घटित हो सकती है।

** स्नातक जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक वर्द्धमान परिणाम वाला होता है। क्योकि शैलेशी अवस्था मे वर्द्धमान परिणाम अन्तर्मुहूर्त तक होता है। स्नातक के अवट्ठिया परिणाम का समय भी जघन्य अन्तर्मुहूर्त का होता है, इसका कारण यह है कि केवलज्ञान उत्पन्न होने के बाद अन्तर्मुहूर्त तक अवट्ठिया (अवस्थित) परिणाम वाला रहकर शैलेशी अवस्था को स्वीकार करता है, इस अपेक्षा से अवट्ठिया परिणाम का समय जघन्य अन्तर्मुहूर्त का समझना चाहिये। अवट्ठिया परिणाम की उत्कृष्ट स्थिति देशऊणी करोड पूर्व की होती है। इसका कारण यह है कि करोड पूर्व की आयुष्य वाले पुरुष को जन्म से जघन्य नौ वर्ष बीतने पर केवलज्ञान उत्पन्न हो। इस कारण से नौ वर्ष कम करोड पूर्व तक अवट्ठिया परिणाम वाला होकर विचरता है। फिर शैलेशी अवस्था (चौदहवे गुणस्थान) मे 'वर्द्धमान' परिणाम वाला होता है।*

बन्ध होता है ? हे गौतम ! + आयुष्य को छोडकर बाकी ७ कर्मो का बन्ध होता है । बकुश और प्रतिसेवनाकुशील मे ७ या ८ कर्मो का बन्ध होता है । — कषायकुशील ७ या ८ या ६ कर्मो का बन्ध होता है । सात का बन्ध होता है तो आयुष्य को छोडकर बाकी सात का होता है । छह का बन्ध होता है तो आयुष्य और मोहनीय को छोडकर बाकी छह कर्मो का बन्ध होता है ।

= निर्ग्रन्थ मे एक सातावेदनीय का बन्ध होता है । * स्नातक मे बन्ध होता भी है और नहीं भी होता है । यदि बन्ध होता है तो एक सातावेदनीय का बन्ध होता है ।

२२ वेदद्वार— अहो भगवन् ! पुलाक कितने कर्मो को वेदता है ? हे गौतम ! आठ ही कर्मो को वेदता है। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील आठ ही कर्मो को वेदते है । निर्ग्रन्थ सात कर्मो को (मोहनीय वर्ज कर) वेदता है । स्नातक चार अघाती (वेदनीय,आयुष्य, नाम, गोत्र) कर्मो को

+ पुलाक अवस्था मे आयुष्य का बन्ध नहीं होता है क्योकि उसके आयुष्यबन्धयोग्य अध्यवसाय (परिणाम) नहीं होते है।

— कषायकुशील सूक्ष्मसम्पराय गुणस्थान में आयुष्य नहीं बाधता है , क्योंकि आयुष्य का बन्ध अप्रमत्त गुणस्थान तक ही होता है। बादरकषाय के उदय का अभाव होने से मोहनीय को भी नहीं बाधता है। इसलिए आयुष्य और मोहनीय के सिवाय ६ कर्मो को बाधता है।

वेदता है ।

२३ उदीरणाद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक कितने कर्मो की उदीरणा करता है ? हे गौतम ! छह कर्मो की (* आयुष्य और वेदनीय कर्मो को छोडकर) उदीरणा करता है । बकुश और प्रतिसेवनाकुशील सात या आठ या छह कर्मो की उदीरणा करते है । कषायकुशील सात आ आठ या छह या पाच कर्मों (आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय को छोडकर) की उदीरणा करता है । निर्ग्रन्थ पाच या दो (नाम और गोत्र) कर्मों की उदीरणा करता है। स्नातक – दो (नाम और गोत्र) कर्मो की उदीरणा करता है या उदीरणा नहीं करता है ।

२४ उवसपजहण्ण (उपसपदहान) द्वार– अहो भगवन् ! पुलाक पुलाकपणे को त्यागता हुआ किसको स्वीकार करता है ? हे गौतम ! पुलाकपणे को त्यागता हुआ दो स्थानो मे जाता है– कषायकुशील मे या असयम मे । बकुश बकुशपणे को छोडता हुआ चार स्थानो मे जाता है- प्रतिसेवनाकुशील मे या कषायकुशील मे या सयमासयम मे या असयम मे । प्रतिसेवनाकुशील प्रतिसेवनाकुशीलपणे को छोडता हुआ चार स्थानो मे जाता है– बकुश मे या कषायकुशील मे या असयम मे या सयमासयम मे । कषायकुशील कषायकुशीलपणे

** पुलाक आयुष्य और वेदनीय कर्म की उदीरणा नहीं करता है। क्योंकि उसके इस प्रकार के अध्यवसाय स्थानक नहीं होते हैं किन्तु यह पहले उदीरणा करके फिर पुलाकपन को प्राप्त होता है। इसी प्रकार बकुशादि के विषय मे समझना चाहिये, जिन जिन कर्मप्रकृतियो की वह उदीरणा नहीं करता है, उन कर्मप्रकृतियो की उदीरणा वह पहले करके फिर बकुशादिपणे को प्राप्त होता है।*

– स्नातक सयोगी अवस्था मे नाम और गोत्र कर्म की उदीरणा करता है। आयुष्य और वेदनीय की उदीरणा तो वह पहले कर चुका है, फिर स्नातकपणे को प्राप्त होता है।

को छोडता हुआ छह स्थानो मे जाता है– पुलाक, बकुश, प्रतिसेवनाकुशील, निर्ग्रन्थ, असयम, सयमासयम । * निर्ग्रन्थ निर्ग्रन्थपणे को छोडता हुआ तीन स्थानो मे जाता है– कपायकुशील, स्नातक, असयम ।

स्नातक स्नातकपणे को छोडता हुआ सिद्धगति (मोक्ष) को प्राप्त होता है ।

२५ सज्ञाद्वार– अहो भगवन् ! क्या पुलाक सन्नोवउत्ता (आहारादि की अभिलापा वाला) है या नोसन्नोवउत्ता (आहारादि मे आसक्तिरहित) है ? हे गौतम ! – नोसन्नोवउत्ता है । इसी तरह निर्ग्रन्थ और स्नातक भी नोसन्नोवउत्ता हैं ।

बकुश, पतिसेवनाकुशील और कषायकुशील सन्नोवउत्ता, नोसन्नोवउत्ता भी होते हैं । सन्नोवउत्ता होते है तो चारो ही

---

* *उपशम निर्ग्रन्थ उपशमश्रेणी से पडता हुआ कपायकुशील होता है। यदि उपशमश्रेणी के शिखर पर मरण हो जाय तो देवो मे उत्पन्न होता हुआ असयती होता है, देशविरति नहीं होता। क्योकि देवो मे देशविरतिपणा नहीं है। यद्यपि श्रेणी से पड कर देशविरति भी होता है तथापि उसका यहा कथन नहीं किया गया है क्योकि श्रेणी से गिरते ही तुरन्त देशविरति नहीं होता है परन्तु कपायकुशील होकर फिर पीछे देशविरति होता है।*

(आहारसज्ञा, भयसज्ञा, मैथुनसज्ञा, परिग्रहसज्ञा) सज्ञा पाई जाती हैं ।

२६ आहारद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक आहारक होता है या अनाहारक ? हे गौतम ! पुलाक * आहारक होता है । इसी तरह बकुश, प्रतिसेवनाकुशील, कषायकुशील और निर्ग्रन्थ भी आहारक होते है । – स्नातक आहारक भी होता है और अनाहारक भी होता है ।

२७ भवद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक कितने भव करता है ? हे गौतम ! + जघन्य एक भव और उत्कृष्ट तीन भव (मनुष्य के) करता है । इसी तरह निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिये । = बकुश, प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील जघन्य एक भव, उत्कृष्ट ८ भव करते है । स्नातक उसी भव मे मोक्ष जाता है ।

** पुलाक से लेकर निर्ग्रन्थ तक मुनियो को विग्रहगति आदि का कारण नहीं होने से ये अनाहारक नहीं होते किन्तु आहारक ही होते हैं।*
– स्नातक केवलीसमुद्घात के तीसरे, चौथे और पाचवे समय मे तथा अयोगी अवस्था मे अनाहारक होता है, बाकी समय मे आहारक होता है।
+ जघन्यत एक भव मे पुलाक होकर कषायकुशीलपणा आदि किसी को एक बार या अनेक बार उसी भव मे या अन्य भव मे प्राप्त करके मोक्ष जाता है। उत्कृष्ट देवादि भव से अन्तरित मनुष्य मे तीन भव तक पुलाकपणा प्राप्त करता है।
= कोई एक भव मे बकुशपणा और कषायकुशीलपणा प्राप्त करके मोक्ष चला जाता है और कोई एक भव मे बकुशपणा प्राप्त करके भवान्तर मे बकुशपणा प्राप्त किये बिना ही मोक्ष चला जाता है, इसलिए बकुश का जघन्य एक भव कहा गया है। उत्कृष्ट आठ भव कहे गये हैं, इसका कारण यह है कि उत्कृष्ट आठ भव तक चारित्र की प्राप्ति होती है। उनमे से कोई तो आठ भव बकुशपणा द्वारा और अन्तिम भव कषायादि सहित बकुशपणा द्वारा पूर्ण करता है और कोई तो हरेक भव प्रतिसेवनाकुशीलपणा आदि से युक्त बकुशपणा पूर्ण करता है।

२८ आकर्षद्वार– अहो भगवन् । पुलाक एक भव मे कितने बार आता है ? हे गौतम । एक भव मे जघन्य + एक बार, उत्कृष्ट तीन बार आता है । बहुत भव की अपेक्षा * जघन्य दो बार, उत्कृष्ट सात बार आता है ।

बकुश, प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील एक भव की अपेक्षा जघन्य एक बार, – उत्कृष्ट प्रत्येक सो बार आता है । बहुत भव की अपेक्षा जघन्य दो बार, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार बार आता है ।

निर्ग्रन्थ एक भव मे जघन्य एक बार =, उत्कृष्ट दो बार

+ यहाँ चारित्र के परिणाम को आकर्ष कहा है । पुलाक को एक भव मे जघन्य एक बार, उत्कृष्ट तीन बार आकर्ष होता है ।

** पुलाक एक भव मे एक और अन्य भव मे दूसरा इस तरह अनेक भव की अपेक्षा जघन्यत दो बार आता है और उत्कृष्ट सात बार आता है । पुलाकपणा उत्कृष्ट तीन भव मे आता है, इनमे से एक भव मे उत्कृष्ट तीन बार आता है । प्रथम भव मे एक बार आता है और बाकी दो भवो मे तीन तीन बार आता है । इस तरह से सात बार आता है ।*

आता है । अनेक भव की अपेक्षा जघन्य दो बार, – उत्कृष्ट पाच बार आता है ।

स्नातक एक भव मे एक बार आता है । स्नातक के अनेक भव नहीं होते है ।

२९ कालद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक की स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! एक जीव * की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है और अनेक जीव + की अपेक्षा एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है ।

– निर्ग्रन्थ के उत्कृष्ट तीन भव होते है । उनमे से पहले भव मे दो बार, दूसरे भव मे दो बार और तीसरे भव मे एक बार आता है । क्षपकश्रेणी करके मोक्ष चला जाता है । इस प्रकार अनेक भव की अपेक्षा निर्ग्रन्थ पाच बार आता है ।

** पुलाकपणा को प्राप्त करने वाला जीव जब तक अन्तर्मुहूर्त पूरा न हो वहाँ तक मरता नहीं है और पुलाकपणे से गिरता भी नहीं है । इसलिए उसकी स्थिति जघन्य से भी अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट से भी अन्तर्मुहूर्त है ।*

+ एक पुलाक जब अपने अन्तर्मुहूर्त के अन्तिम समय मे होता है, ठीक उसी समय दूसरा जीव पुलाकपणे को प्राप्त होता है । इसलिए दोनो पुलाको का सद्भाव एक समय मे होता है । वे दो होने से अनेक कहलाये । इस प्रकार अनेक पुलाको का जघन्य काल एक समय होता है और उनका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त होता है । क्योकि पुलाक एक समय मे उत्कृष्ट प्रत्येक हजार होते है । वे अनेक होते हुए भी उनका काल अन्तर्मुहूर्त है किन्तु एक पुलाक की स्थिति के अन्तर्मुहूर्त से अनेक पुलाको की स्थिति का अन्तर्मुहूर्त बडा होता है ।

* वकुश प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील की स्थिति एक जीव की अपेक्षा जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट देशऊणी करोड़ पूर्व की होती है । अनेक जीव की अपेक्षा सदाकाल शाश्वत स्थिति है । निर्ग्रन्थ की स्थिति एक जीव की अपेक्षा और अनेक जीव की अपेक्षा जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है । स्नातक की स्थिति एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट देशऊणी करोड पूर्व की होती है । अनेक जीव की अपेक्षा सदाकाल शाश्वत की होती है ।

२० अन्तरद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक का अन्तर काल कितना है ? हे गौतम ! काल की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त का उत्कृष्ट अनन्त काल + का होता है । क्षेत्र की अपेक्षा देशोन अर्धपुद्गलपरावर्तन का होता है । इसी तरह वकुश पतिसेवनाकुशील कषायकुशील और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिये । स्नातक का अन्तर नहीं होता है ।

अनेक जीव की अपेक्षा पुलाक का अन्तर जघन्य एक समय का उत्कृष्ट संख्यात वर्षों का होता है । वकुश प्रतिसेवनाकुशील, कषायकुशील और स्नातक का अन्तर नहीं होता है । निर्ग्रन्थ का जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट छह महीनों का

होता है ।

३१ समुद्घातद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक मे कितनी समुद्घात होती है ? हे गौतम ! = तीन समुद्घात (वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात, मारणान्तिकसमुद्घात) होती है । बकुश और प्रतिसेवनाकुशील मे पाच समुद्घात (आहारकसमुद्घात और केवलीसमुद्घात को छोडकर) होती है। कषायकुशील मे छह समुद्घात (केवलीसमुद्घात् को छोडकर) होती है। निर्ग्रन्थ मे समुद्घात नहीं होती है। स्नातक मे एक केवलीसमुद्घात पाई जाती है।

३२ क्षेत्रद्वार– अहो भगवन् ! पुलाक लोक के सख्यातवे भाग मे, असख्यातवे भागो मे, बहुत सख्यातवे भागो मे बहुत असख्यातवे भागो मे या सारे लोक मे होता है ? हे गौतम ! लोक के असख्यातवे भाग मे होता है, शेष चार बोलो मे नहीं होता। इसी तरह बकुश, कुशील और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिए। + स्नातक लोक के असख्यातवे भाग मे होता है, असख्याता भागो मे होता है तथा सम्पूर्ण लोक मे होता है।

= पुलाक मे सज्वलनकषाय का उदय होता है, इसलिए कषायसमुद्घात का सभव है ।
यद्यपि पुलाक मे मरण नहीं होता है तथापि मारणान्तिकसमुद्घात होती है । इसका कारण यह है कि मारणान्तिकसमुद्घात से निवृत्त होने के बाद कषायकुशीलादि परिणाम मे उसका मरण होता है ।
+ केवलीसमुद्घात के समय जब स्नातक शरीरस्थ होता है अथवा दण्ड, कपाट अवस्था मे होता है तब लोक के असख्यातवे भाग मे रहता है । मन्थान अवस्था मे वह लोक के बहुत भाग को व्याप्त कर लेता है और थोडा भाग अव्याप्त रहता है, इसलिए लोक के असख्याता भागो मे रहता है और जब सम्पूर्ण लोक व्याप्त कर लेता है तब वह सम्पूर्ण लोक मे रहता है ।

हैं।

निर्ग्रन्थ वर्तमान की अपेक्षा कदाचित् होते है और कदाचित् नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट १६२ (क्षपकश्रेणी के १०८, उपशमश्रेणी वाले ५४=१६२) होते है। भूतकाल की अपेक्षा कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते हैं। यदि होते है तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ होते हैं।

स्नातक वर्तमान की अपेक्षा कदाचित् होते हैं और कदाचित् नही होते है। यदि होते है तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट १०८ होते है। भूतकाल की अपेक्षा नियमा प्रत्येक करोड होते है ।

३६ अल्पबहुत्वद्वार–१-सबसे थोडे निर्ग्रन्थ, (प्रत्येक सौ पाये जाते है।) २- उससे पुलाक सख्यातगुणा (प्रत्येक हजार पाये जाते है), ३- उससे स्नातक सख्यातगुणा (प्रत्येक करोड पाये जाते हैं),४- उससे बकुश सख्यातगुणा (प्रत्येक सौ करोड पाये जाते है), ५- उससे प्रतिसेवनाकुशील सख्यातगुणा (+ प्रत्येक सौ करोड पाये जाते है)। ६- उससे कषायकुशील सख्यातगुणा (प्रत्येक हजार करोड पाये जाते हैं) ।

इसका उत्तर यह है कि कषायकुशील का परिमाण जो प्रत्येक हजार करोड कहा है, वह दो हजार करोड या तीन हजार करोड लेना चाहिए । इस सख्या मे पुलाक आदि के सख्या मिला देने पर भी सब सयतो की सख्या नौ हजार करोड से अधिक नहीं होगी ।

+ बकुश और प्रतिसेवनाकुशील का परिमाण प्रत्येक सौ करोड कहा गया है तो बकुश से प्रतिसेवनाकुशील सख्यातगुणा कैसे हुआ ? इसका उत्तर यह है कि बकुश मे जो 'प्रत्येक सौ करोड' कहा गया है, उसका मतलब दो सौ करोड या तीन सौ करोड लेना चाहिए और प्रतिसेवनाकुशील मे जो ' प्रत्येक सौ करोड ' कहा गया है, उसका मतलब चार सौ करोड, पाच सौ करोड, छह सौ करोड इत्यादि है ।

छेदोपस्थानीयचारित्र कहते है ।

जिस चारित्र मे परिहार तप किया जाय, उसे परिहारविशुद्धिचारित्र कहते हैं। नौ साधुओ का गण परिहार तप अगीकार करता है। जैसे नौ व्यक्ति नौ वर्ष की उम्र मे दीक्षा ले, बीस वर्ष तक गुरु महाराज के पास ज्ञान पढे, जघन्य नवमें पूर्व की तीसरी आयारवत्थु (आचारवस्तु) और उत्कृष्ट कुछ कम दस वर्ष पूर्व का ज्ञान पढे, ऐसे नौ साधु गुरु महाराज की आज्ञा लेकर परिहारविशुद्धिचारित्र अगीकार करते है। उनमे से पहले छह महीने तक चार साधु तपस्या करते है, चार साधु वैयावच्च करते है और एक साधु व्याख्यान देता है। दूसरी छमाही मे तपस्या करने वाले साधु वैयावच्च करते है और वैयावच्च करने वाले साधु तपस्या करते है। व्याख्यान देने वाला साधु व्याख्यान देता है। तीसरी छमाही मे व्याख्यान देने वाला साधु तपस्या करता है। बाकी आठ साधुओ मे से एक साधु व्याख्यान देता है, शेष सात साधु वैयावच्च करते हैं। ग्रीष्म ॠतु मे जघन्य एक उपवास, मध्यम बेला (दो उपवास) और उत्कृष्ट तेला (तीन उपवास) तप करते है । शीतकाल मे जघन्य बेला, मध्यम तेला और उत्कृष्ट चौला (चार उपवास) करते है। वर्षाकाल मे जघन्य तेला, मध्यम चौला और उत्कृष्ट पचौला (पाच उपवास) करते है । पारणे मे आयबिल करते है। इस तरह अठारह महीनो मे इस परिहार तप का कल्प पूर्ण होता है। परिहार तप पूरा होने पर वे साधु या तो इसी कल्प को फिर आरम्भ करते है या जिनकल्प धारण कर लेते है या वापिस गच्छ में आ जाते है। यह चारित्र छेदोपस्थापनीयचारित्र वाले के ही होता है, दूसरो के नहीं होता । इसके दो भेद है – णिव्विसमाणए (निर्विशमान) और निव्विट्ठकाइए (निर्विष्टकायिक) जो साधु तप कर चुके हो उन्हे निव्विट्ठकाइए कहते है।

जिस चारित्र मे सूक्ष्मसम्पराय अर्थात् सज्वलनलोभ का

छेदोपस्थानीयचारित्र कहते हैं ।

जिस चारित्र मे परिहार तप किया जाय, उसे परिहारविशुद्धिचारित्र कहते है। नौ साधुओ का गण परिहार तप अगीकार करता है। जैसे नौ व्यक्ति नौ वर्ष की उम्र मे दीक्षा ले, बीस वर्ष तक गुरु महाराज के पास ज्ञान पढे, जघन्य नवमें पूर्व की तीसरी आयारवत्थु (आचारवस्तु) और उत्कृष्ट कुछ कम दस वर्ष पूर्व का ज्ञान पढे, ऐसे नौ साधु गुरु महाराज की आज्ञा लेकर परिहारविशुद्धिचारित्र अगीकार करते है। उनमे से पहले छह महीने तक चार साधु तपस्या करते है, चार साधु वैयावच्च करते हैं और एक साधु व्याख्यान देता है। दूसरी छमाही मे तपस्या करने वाले साधु वैयावच्च करते है और वैयावच्च करने वाले साधु तपस्या करते है। व्याख्यान देने वाला साधु व्याख्यान देता है। तीसरी छमाही मे व्याख्यान देने वाला साधु तपस्या करता है। बाकी आठ साधुओ मे से एक साधु व्याख्यान देता है, शेष सात साधु वैयावच्च करते हैं। ग्रीष्म ऋतु मे जघन्य एक उपवास, मध्यम बेला (दो उपवास) और उत्कृष्ट तेला (तीन उपवास) तप करते है । शीतकाल मे जघन्य बेला, मध्यम तेला और उत्कृष्ट चौला (चार उपवास) करते है। वर्षाकाल मे जघन्य तेला, मध्यम चौला और उत्कृष्ट पचौला (पाच उपवास) करते है । पारणे मे आयबिल करते है। इस तरह अठारह महीनो मे इस परिहार तप का कल्प पूर्ण होता है। परिहार तप पूरा होने पर वे साधु या तो इसी कल्प को फिर आरम्भ करते है या जिनकल्प धारण कर लेते है या वापिस गच्छ में आ जाते है। यह चारित्र छेदोपस्थापनीयचारित्र वाले के ही होता है, दूसरो के नहीं होता । इसके दो भेद है – णिव्विसमाणए (निर्विशमान) और निव्विट्ठकाइए (निर्विष्टकायिक) जो साधु तप कर चुके हो उन्हे निव्विट्ठकाइए कहते है।

जिस चारित्र मे सूक्ष्मसम्पराय अर्थात् सज्वलनलोभ का

सूक्ष्म अश रहता है उसे सूक्ष्मसम्परायचारित्र कहते है । इसके दो भेद हैं-विशुद्धयमान और सक्लिश्यमान। क्षपकश्रेणी और उपशमश्रेणी पर चढते हुए साधु के परिणाम उत्तरोत्तर शुद्ध रहने से उनका सूक्ष्मसम्परायचारित्र विशुद्धयमान कहलाता है। उपशमश्रेणी से गिरते हुए साधु के परिणाम सक्लेश युक्त होते है। इसलिए उनका सूक्ष्मसम्परायचारित्र सक्लिश्यमान कहलाता है।

सर्वथा कषाय का उदय न होने से अतिचार रहित चारित्र को यथाख्यातचारित्र कहते है, इसके दो भेद हैं–उपशान्तमोहवीतराग (प्रतिपाती) और क्षीणमोहवीतराग (अप्रतिपाती)। क्षीणमोहवीतराग के दो भेद हैं–छद्मस्थ और केवली। केवली के दो भेद–सयोगीकेवली और अयोगीकेवली।

२ वेदद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला सवेदी होता है या अवेदी होता है ? हे गौतम ! + सवेदी होता है अथवा अवेदी होता है। सवेदी होता है तो तीन वेद वाला होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीयचारित्र वाला कह देना चाहिए।

परिहारविशुद्धिचारित्र वाला सवेदी होता है। उसमे दो वेद पाये जाते है– पुरुषवेद और पुरुषनपुसकवेद (कृत्रिमनपुसक)।

सूक्ष्मसम्परायचारित्र वाला और यथाख्यातचारित्र वाला * अवेदी होता है।

+ नवमें गुणस्थान तक सामायिकचारित्र होता है । नवमे गुणस्थान मे वेद का उपशम या क्षय होता है । वहाँ सामायिकचारित्र वाला अवेदी होता है । नवमे से पहले के गुणस्थानो मे सवेदी होता है । यदि सवेदी होता है तो तीन वेद वाला होता है और यदि अवेदी होता है तो उपशान्तवेदी या क्षीणवेदी होता है ।

** अवेदी– उपशान्तवेदी अथवा क्षीणवेदी होता है ।*

३ रागद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला सरागी होता है या वीतरागी होता है ? हे गौतम ! सरागी होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय चारित्र वाले सरागी होते है। यथाख्यातचारित्र वाला वीतरागी होता है (उपशान्तकषायवीतरागी या क्षीणकषायवीतरागी)।

४ कल्पद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाले मे कितने कल्प पाये जाते है ? हे गौतम ! + पाच कल्प पाये जाते हैं। छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि चारित्र वाले मे * तीन कल्प पाये जाते है–स्थितकल्प, जिनकल्प, और स्थविरकल्प। सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यातचारित्र वाले मे तीन कल्प पाये जाते हैं–स्थितकल्प, अस्थितकल्प, कल्पातीत।

५ नियठाद्वार (निर्ग्रन्थद्वार)– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाले मे कितने नियठा (निर्ग्रन्थ) पाये जाते हैं ? हे गौतम ! चार नियठा पाये जाते हैं – पुलाक, बकुश, प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील। इसी तरह छेदोपस्थापनीयचारित्र मे भी कह देना चाहिए। परिहारविशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय मे एक नियठा–कषायकुशील पाया जाता है। यथाख्यातचारित्र मे दो नियठा पाये जाते हैं – निर्ग्रन्थ और स्नातक।

६ प्रतिसेवनाद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला प्रतिसेवी (चारित्र मे दोष लगाने वाला) होता है या अप्रतिसेवी

+ कल्प पाच है– १ स्थितकल्प, २ अस्थितकल्प, ३ जिनकल्प, ४ स्थविरकल्प, ५ कल्पातीत ।

** बीच के बाईस तीर्थंकरो के तीर्थ मे और महाविदेह क्षेत्र के तीर्थंकरो के तीर्थ मे अस्थितकल्प होता है । वहाँ छेदोपस्थापनीयचारित्र नहीं होता है । इसलिये छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि चारित्र वाले मे अस्थितकल्प नहीं होता है ।*

(चारित्र मे दोष नहीं लगाने वाला) होता है ? हे गौतम ! प्रतिसेवी भी होता है और अप्रतिसेवी भी होता है। यदि प्रतिसेवी होता है तो मूलगुण और उत्तरगुण दोनो मे दोष लगाने वाला होता है। अप्रतिसेवी होता है तो दोष नहीं लगाता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीयचारित्र मे भी कह देना चाहिए। परिहारविशुद्धिचारित्र, सूक्ष्मसम्परायचारित्र और यथाख्यातचारित्र वाले अप्रतिसेवी होते है।

७ ज्ञानद्वार–अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाले मे कितने ज्ञान होते है ? हे गौतम ! दो या तीन या चार ज्ञान होते है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि और सूक्ष्मसम्राय चारित्र वाले भी दो या तीन या चार ज्ञान वाले होते हैं। यथाख्यातचारित्र वाला दो या तीन या चार अथवा केवलज्ञान वाला होता है।

८ श्रुतद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला कितना श्रुत (ज्ञान) पढता (भणता) है ? हे गौतम ! जघन्य आठ प्रवचनमाता का, उत्कृष्ट १४ पूर्व का ज्ञान पढता है । इसी तरह छेदोपस्थापनीय और सूक्ष्मसम्परायचारित्र का कह देना चाहिए। परिहारविशुद्धिचारित्र वाला जघन्य नवमें पूर्व की तीसरी आयारवत्थु (आचारवस्तु) का, उत्कृष्ट कुछ कम दस पूर्व का ज्ञान पढता है। यथाख्यातचारित्र वाला जघन्य आठ प्रवचनमाता का, उत्कृष्ट चौदह पूर्व का ज्ञान पढता है अथवा श्रुतव्यतिरिक्त (केवली) होता है।

९ तीर्थद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला तीर्थ मे होता है या अतीर्थ मे (तीर्थ के अभाव मे) होता है ? हे गौतम ! तीर्थ मे भी होता है और अतीर्थ मे भी होता है तथा तीर्थंकर और प्रत्येकबुद्ध मे भी होता है । इसी तरह सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात चारित्र का भी कह देना चाहिए । छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि चारित्र तीर्थ मे ही होता है, अतीर्थ इत्यादि मे नहीं होता है ।

१० लिगद्वार– सामायिकचारित्र वाला किस लिग मे होता है ? हे गौतम् ! द्रव्य की अपेक्षा से तीनो ही लिग (स्वलिग, अन्यलिग, गृहस्थलिग) मे होता है और भाव की अपेक्षा स्वलिग मे होता है । इसी तरह छेदोपस्थापनीय, सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात चारित्र का भी कह देना चहिए । परिहारविशुद्धिचारित्र द्रव्य और भाव दोनो की अपेक्षा स्वलिग मे ही होता है ।

११ शरीरद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाले मे कितने शरीर होते हैं ? हे गौतम ! तीन या चार या पाच शरीर पाये जाते है । इसी तरह छेदोपस्थापनीयचारित्र का भी कह देना चाहिए । परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात इन तीन चारित्र वालो मे तीन शरीर (औदारिक, तैजस, कार्मण) पाये जाते है ।

१२ क्षेत्रद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला कर्मभूमि मे होता है या अकर्मभूमि मे ? हे गौतम ! पन्द्रह कर्मभूमि मे होता है । छेदोपस्थापनीयचारित्र वाला भरतादि दस क्षेत्र मे होता है । सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाले पन्द्रह कर्मभूमि मे होते है । साहरण (सहरण) की अपेक्षा ये चारो अढाई द्वीप, दो समुद्र मे होते है । परिहारविशुद्धिचारित्र वाला भरतादि दस क्षेत्र मे होता है । इसका सहरण नहीं होता है ।

१३ कालद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला किस काल मे होता है ? हे गौतम ! जन्म की अपेक्षा अवसर्पिणी काल के तीसरे, चौथे, पाचवे आरे मे होता है, सद्भाव (प्रवृत्ति) की अपेक्षा तीसरे, चौथे, पाचवे आरे मे होता है । इसी तरह छेदापस्थापनीयचारित्र का भी कह देना चाहिए । शेष तीन चारित्र वाले जन्म की अपेक्षा तीसरे, चौथे आरे मे होते है और सद्भाव की अपेक्षा तीसरे, चौथे, पाचवे आरे मे होते है । उत्सर्पिणी काल मे ये पाचो चारित्र वाले जन्म की अपेक्षा दूसरे, तीसरे, चौथे आरे मे

होते है और सद्भाव की अपेक्षा तीसरे, चौथे आरे मे होते है । सहरण की अपेक्षा परिहाविशुद्धिचारित्र वाले का सहरण नहीं होता । शेष चार चारित्र वाले चार पलिभागों (१ देवकुरुउत्तरकुरु, २ हरिवास-रम्यकवास, ३ हेमवत-ऐरणयवत, ४ महाविदेह क्षेत्र) मे होते है । सामायिक, सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात ये तीन चारित्र सहरण की अपेक्षा छहो आरो मे हो सकते है ।नोअव-सर्पिणी-नोउत्सर्पिणी काल की अपेक्षा सामायिक, सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात, ये तीन चारित्र चौथे पलिभाग अर्थात् महाविदेहक्षेत्र मे जन्म की अपेक्षा होते है ।

१४ गतिद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला मर कर कहॉ जाता है ? हे गौतम ! जघन्य पहले देवलोक मे, उत्कृष्ट पाच अनुत्तर विमान मे जाता है । स्थिति जघन्य दो पल्योपम की, उत्कृष्ट तेतीस सागर की होती है । इसी तरह छेदोपस्थापनीयचारित्र का भी कह देना चाहिए । परिहारविशुद्धि वाला जघन्य पहले देवलोक मे, उत्कृष्ट आठवे देवलोक मे जाता है । स्थिति जघन्य दो पल्योपम की, उत्कृष्ट १८ सागर की होती है । सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यातचारित्र वाले सर्वार्थसिद्ध मे जाते हैं, स्थिति अजघन्य-अनुत्कृष्ट तेतीस सागर की होती है तथा यथाख्यातचारित्र वाला मोक्ष मे जाता है ।

सामायिक और छेदोपस्थापनीय चारित्र वाले यदि आराधक होवे तो पाच पदवी (इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग–त्रायस्त्रिश, लोकपाल, अहमिन्द्र) मे से कोई एक पदवी पाता है । परिहारविशुद्धिचारित्र वाला यदि आराधक हो तो चार पदवियो (अहमिन्द्र को छोड कर) मे से कोई एक पदवी पाता है। सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यातचारित्र वाला यदि आराधक हो तो एक 'अहमिन्द्र' की पदवी पाता है * ।

---

* *स्पष्टीकरण निर्ग्रन्थ-नियण्ठा के फुटनोट मे दिया गया है ।*

१५ सयमस्थानद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाले मे कितने सयम के स्थान है ? हे गौतम ! असख्यात है । इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय का भी कह देना चाहिए । यथाख्यात का सयमस्थान एक है ।

अल्पबहुत्व–सब से थोडा यथाख्यातचारित्र का सयमस्थान, (एक), उससे सूक्ष्मसम्पराय के सयमस्थान असख्यातगुणा, उससे परिहारविशुद्धिचारित्र के सयमस्थान असख्यातगुणा, उससे सामायिकचारित्र और छेदोपस्थापनीयचारित्र के सयमस्थान परस्पर तुल्य, असख्यातगुणा है ।

१६ सनिकर्ष (निकास) द्वार– अहो भगवन् ! सामायिक चारित्र के चारित्रपर्याय कितने है ? हे गौतम ! अनन्त है । इसी तरह यावत् यथाख्यातचारित्र तक कह देना चाहिए । सामायिकचारित्र सामायिकचारित्र परस्पर छट्ठाणवडिया है (सख्यातभागहीन, असख्यातभागहीन, अनन्तभागहीन, सख्यातगुणहीन, असख्यातगुणहीन, अनन्तगुणहीन । सख्यातभाग-अधिक, असख्यातभाग-अधिक, अनन्तभाग-अधिक, सख्यातगुण-अधिक, असख्यातगुण-अधिक, अनन्तगुण-अधिक) । सामायिकचारित्र छेदोपस्थापनीयचारित्र के साथ छट्ठाणवडिया है । परिहारविशुद्धिचारित्र के साथ छट्ठाणवडिया है । सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात चारित्र से अनन्तगुणहीन (अनन्तवे भाग) है ।

छेदोपस्थापनीय छेदोपस्थापनीय परस्पर छट्ठाणवडिया है । सामायिकचारित्र और परिहारविशुद्धिचारित्र के साथ छट्ठाणवडिया है । सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यातचारित्र से अनन्तगुणहीन है ।

परिहारविशुद्धि परिहारविशुद्धि परस्पर छट्ठाणवडिया है। सामायिकचारित्र और छेदोपस्थापनीय के साथ छट्ठाणवडिया है । सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात चारित्र से अनन्तगुणहीन है ।

सूक्ष्मसम्पराय सूक्ष्मसम्पराय परस्पर छट्ठाणवडिया है,

सामायिक, छेदोपस्थापनीय और परिहाविशुद्धि से अनन्तगुण- अधिक है । यथाख्यातचारित्र से अनन्तगुणहीन है । यथाख्यातचारित्र यथाख्यातचारित्र परस्पर तुल्य है । बाकी चार चारित्रो से अनन्तगुण अधिक है ।

अल्पबहुत्व– सब से थोडे सामायिकचारित्र और छेदोपस्थापनीय चारित्र के जघन्य चारित्रपर्याय परस्पर तुल्य, उससे परिहारविशुद्धि के जघन्य चारित्रपर्याय अनन्तगुणा, उससे परिहारविशुद्धि के उत्कृष्ट चारित्रपर्याय अनन्तगुणा, उससे सामायिकचारित्र और छेदोपस्थापनीयचारित्र के उत्कृष्ट चारित्रपर्याय परस्पर तुल्य अनन्तगुणा, उससे सूक्ष्मसम्पराय के जघन्य चारित्रपर्याय अनन्तगुणा, उससे इसी चारित्र के उत्कृष्ट चारित्रपर्याय अनन्तगुणा, उससे यथाख्यात के अजघन्य-उत्कृष्टपर्याय अनन्तगुणा हैं ।

१७ योगद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला सयोगी होता है या अयोगी ? हे गौतम ! सयोगी होता है इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय चारित्र वाला भी कह देना चाहिए । यथाख्यातचारित्र वाला सयोगी भी होता है और अयोगी भी होता है ।

१८ उपयोगद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र मे साकार (ज्ञान) उपयोग पाया जाता है या अनाकार (दर्शन) उपयोगी ? हे गौतम ! दोनो उपयोग पाये जाते हैं । इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि और यथाख्यात चारित्र मे भी कह देना चाहिए । सूक्ष्मसम्परायचारित्र मे साकार-उपयोग होता है, अनाकार-उपयोग नहीं होता है ।

१९ कषायद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र मे कितने कषाय होते हैं ? हे गौतम ! सज्वलनकषाय ४,३,२ पाये जाते हैं। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय का भी कह देना चाहिए। परिहारविशुद्धि में सज्वलन के चारो कषाय पाये जाते है। सूक्ष्मसम्पराय

मे एक कषाय (सज्वलन का लोभ) पाया जाता है। यथाख्यातचारित्र वाला अकषायी (उपशान्तकषायी या क्षीणकपायी) होता है।

२० लेश्याद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र मे कितनी लेश्याए पाई जाती है। हे गौतम ! छह लेश्या पाई जाती हैं। इसी तरह छेदोपस्थापनीयचारित्र मे कह देनी चाहिए। परिहारविशुद्धि मे तीन विशुद्ध लेश्या पाई जाती है। सूक्ष्मसम्परायचारित्र मे एक शुक्ललेश्या पाई जाती है। यथाख्यातचारित्र में एक शुक्ललेश्या पाई जाती है, अथवा नहीं पाई जाती है (अलेशी) होता है।

२१ परिणामद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाले मे कितने परिणाम पाये जाते हैं ? हे गौतम ! तीन परिणाम पाये जाते हैं – हीयमान, वर्द्धमान, अवस्थित (अवट्ठिया) । हीयमान वर्द्धमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तमुर्हूर्त की होती है। अवस्थित (अवट्ठिया) की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट सात समय की होती है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि चारित्र का भी कह देना चाहिए। सूक्ष्मसम्पराय-चारित्र मे दो + परिणाम पाये जाते हैं – वर्द्धमान और हीयमान। दोनो परिणामो की स्थिति जघन्य एक समय की उत्कृष्ट अन्र्मुहूर्त की होती है। यथाख्यातचारित्र मे दो परिणाम पाये जाते है वर्द्धमान और अवस्थित (अवट्ठिया) । वर्द्धमान की स्थिति जघन्य, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। अवस्थित की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट देशऊणी (कुछ कम) करोड पूर्व की होती है।

२२ बन्धद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला कितने

+ सूक्ष्मसम्पराय वाला जब श्रेणी पर चढता है तब वर्द्धमान परिमाण वाला होता है और जब श्रेणी से गिरता है तब हीयमान परिमाण वाला होता है । परन्तु स्वाभाविक रूप से वह स्थिर परिमाण वाला (अवट्ठिया) नहीं होता है ।

कर्म बाधता है ? हे गौतम ! सात कर्मों को बाधता है या आठ कर्मों को बाधता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि का भी कह देना चाहिए ।

सूक्ष्मसम्पराय वाला छह कर्म बाधता है। यथाख्यातचारित्र वाला तेरहवे गुणस्थान तक एक सातावेदनीय बाधता है और चौदहवे गुणस्थान मे अबन्धक होता है।

२३ वेदनद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला कितने कर्मो को वेदता है ? हे गौतम ! नियमा आठ कर्मो को वेदता है। इसी तरह सूक्ष्मसम्पराय तक कह देना चाहिए। यथाख्यातचारित्र वाला सात (मोहनीयकर्म को छोड कर) कर्मों को वेदता है अथवा चार (अघाती) कर्मों को वेदता है।

२४ उदीरणाद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला कितने कर्मो को उदीरता है। (उदीरणा करता है) ? हे गौतम ! ७,८,६ कर्मों को उदीरता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धिचारित्र का भी कह देना चाहिए। सूक्ष्मसम्परायचारित्र वाला छह कर्मो को उदीरता है (आयुष्य और वेदनीय को छोड कर) अथवा पाच (मोहनीय, आयुष्य, वेदनीय को छोड कर) कर्मो को उदीरता है। यथाख्यातचारित्र वाला पाच (मोहनीय, वेदनीय, आयुष्य को छोड कर) कर्मों को उदीरता है अथवा दो (नामकर्म, गोत्रकर्म) कर्मों को उदीरता है अथवा उदीरणा नहीं करता है।

२५ उवसपजहण्ण (उपसपदहान) द्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला सामायिकचारित्र को छोडता हुआ किसको प्राप्त करता है ? हे गौतम ! चार स्थानों मे जाता है– छेदोपस्थापनीय मे जाता है, सूक्ष्मसम्पराय मे जाता है, असयम मे जाता है या सयमासयम (देशविरति) मे जाता है। छेदोपस्थापनीयचारित्र वाला छेदोपस्थापनीयचारित्र को छोडता हुआ पाच ठिकाणे जाता

है– + सामायिकचारित्र मे, या परिहारविशुद्धि मे, या सूक्ष्मसम्पराय मे, या असयम मे, या सयमासयम (देशविरति) मे जाता है।

परिहारविशुद्धिचारित्र वाला परिहारविशुद्धि को छोडता हुआ – दो ठिकाणे जाता है– छेदोपस्थापनीयचारित्र मे, या असयम मे जाता है ।

सूक्ष्मसम्परायचारित्र वाला सूक्ष्मसम्पराय को छोडता हुआ – चार ठिकाणे जाता है– सामायिकचारित्र मे, या छेदोपस्थापनीय मे, या यथाख्यात मे, या असयम मे जाता है। यथाख्यातचारित्र वाला यथाख्यातचारित्र को छोडता हुआ * तीन ठिकाणे जाता है–

+ जैसे पहले तीर्थंकर के साधु दूसरे अजितनाथ भगवान् के तीर्थ मे प्रवेश करते है तब छेदोपस्थापनीय चारित्र को छोड कर सामायिकचारित्र को अगीकार करते है । इस अपेक्षा से ऐसा कहा गया है कि छेदोपस्थापनीयचारित्र को छोडता हुआ सामायिकचारित्र को अगीकार करता है ।

– परिहारविशुद्धिचारित्र वाला परिहारविशुद्धिचारित्र को छोड कर यदि वापिस गच्छ मे आता है तो छेदोपस्थापनीयचारित्र को अगीकार करता है । यदि काल कर जाता है तो देवगति मे जाता है, असयतपणा अगीकार करता है ।

– सूक्ष्मसम्परायचारित्र वाला जब श्रेणी से पडता है तो यदि वह पहले सामायिकचारित्र वाला हो तो सामायिकचारित्र को अगीकार करता है और यदि वह पहले छेदोपस्थापनीयचारित्र वाला हो तो छेदोपस्थापनीयचारित्र को अगीकार करता है । जब वह श्रेणी चढता है तब यथाख्यातचारित्र को प्राप्त करता है । यदि काल कर जाता है तो देवगति मे जाता है, असयम अगीकार करता है ।

** यथाख्यातचारित्र वाला यदि श्रेणी से पडे तो यथाख्यातपणे का त्याग करता हुआ सूक्ष्मसम्परायपणे को प्राप्त करता है और यदि उपशमश्रेणी मे (उपशान्तमोह अवस्था मे) काल कर जाता है तो देवगति मे जाता है, असयतपणे को प्राप्त करता है । यदि स्नातक होता है तो सिद्धगति को प्राप्त करता है ।*

सूक्ष्मसम्परायचारित्र मे, या असयम मे या मोक्ष मे जाता है।

२६ सज्ञाद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला सज्ञा (आहारादि मे आसक्ति) युक्त होता है या नोसज्ञायुक्त होता है ? हे गौतम ! सज्ञायुक्त होता है (सज्ञा चारो ही) , या नोसज्ञायुक्त होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि का भी कह देना चाहिये। सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यातचारित्र वाला नोसज्ञायुक्त होता है (इनमे सज्ञा-आहारादि की आसक्ति नहीं होती है) ।

२७ आहारकद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला आहारक होता है या अनाहारक होता है ? हे गौतम ! आहारक होता है । इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय का कह देना चाहिए। यथाख्यातचारित्र वाला आहारक या अनाहारक होता है।

२८ भवद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला कितने भव करता है ? हे गौतम ! जघन्य एक भव करता है, उत्कृष्ट ८ भव करता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीयचारित्र का कह देना चाहिए। परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यातचारित्र वाला जघन्य एक भव, उत्कृष्ट तीन भव करता है अथवा यथाख्यातचारित्र वाला उसी भव मे मोक्ष जाता है।

२९ आकर्ष (आगरिसे) द्वार – अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र कितनी बार आता है ? हे गौतम ! एक भव की अपेक्षा जघन्य एक बार, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ बार आता है। अनेक भव की अपेक्षा जघन्य दो बार, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार बार आता है।

छेदोपस्थापनीयचारित्र एक भव की अपेक्षा जघन्य दो बार, उत्कृष्ट १२० बार आता है। अनेक भव की अपेक्षा जघन्य दो बार, उत्कृष्ट ९६० बार आता है। परिहारविशुद्धिचारित्र एक

भव की अपेक्षा जघन्य एक बार, उत्कृष्ट तीन बार आता है। अनेक भव की अपेक्षा जघन्य दो बार, उत्कृष्ट + सात बार आता है। सूक्ष्मसम्परायचारित्र एक भव की अपेक्षा जघन्य एक बार, उत्कृष्ट * चार बार आता है। अनेक भव की अपेक्षा जघन्य दो बार, उत्कृष्ट — ९ बार आता है। यथाख्यातचारित्र एक भव की अपेक्षा जघन्य एक बार, उत्कृष्ट = २ बार आता है। अनेक भव की अपेक्षा जघन्य दो बार, उत्कृष्ट # ५ बार आता है।

+ परिहारविशुद्धिचारित्र वाले को एक भव मे उत्कृष्ट तीन बार परिहारविशुद्धिचारित्र की प्राप्ति होती है । तीन भव मे परिहारविशुद्धिचारित्र की प्राप्ति हो सकती है । जैसे कि एक भव मे तीन बार, दूसरे भव मे दो बार और तीसरे भव मे दो बार । इस तरह से उसको अनेक भवो मे सात आकर्ष होते है अर्थात् सात बार परिहारविशुद्धिचारित्र की प्राप्ति होती है ।

** सूक्ष्मसम्परायचारित्र वाले के लिये एक भव मे दो बार उपशम-श्रेणी सभव है । प्रत्येक श्रेणी मे सक्लिश्यमान और विशुद्ध्यमान यह दो प्रकार का सूक्ष्मसम्पराय होता है । इसलिए चार बार सूक्ष्मसम्परायचारित्र की प्राप्ति होती है ।*

— सूक्ष्मसम्परायचारित्र एक भव मे चार बार आता है । सूक्ष्मसम्पराय की प्राप्ति तीन भवो तक होती है । एक भव मे चार बार, दूसरे भव मे चार बार और तीसरे भव मे एक बार सूक्ष्मसम्परायचारित्र की प्राप्ति होती है । इस तरह अनेक भवो मे सूक्ष्मसम्परायचारित्र की प्राप्ति ९ बार होती है ।

= यथाख्यातचारित्र वाले के लिये दो बार उपशमश्रेणी सम्भव है । इसलिये दो आकर्ष होते है ।

 # यथाख्यातचारित्र एक भव मे दो बार आता है, दूसरे भव मे दो बार आता है और तीसरे भव मे एक बार आता है । इस तरह तीन भव मे पाच बार आता है ।

३० कालद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र की स्थिति कितने काल की होती है ? हे गौतम ! एक जीव की अपेक्षा जघन्य – एक समय की, उत्कृष्ट देशऊणी करोड पूर्व की होती है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और + यथाख्यातचारित्र की भी कह देनी चाहिए। * परिहारविशुद्धिचारित्र की स्थिति एक जीव की अपेक्षा जघन्य

– सामायिकचारित्र की प्राप्ति के एक समय बाद तुरन्त मरण हो जाय इस अपेक्षा से सामायिकचारित्र की स्थिति जघन्य एक समय है, उत्कृष्ट स्थिति नौ वर्ष कम करोड पूर्व की है । यह स्थिति गर्भ समय से लेकर जाननी चाहिए । यदि जन्म दिन से गणना की जाय तो आठ वर्ष (झाझेरी) कम करोड पूर्व वर्ष की होती है ।

+ यथाख्यातचारित्र वाले की उपशम अवस्था मे मरण की अपेक्षा जघन्य एक समय की स्थिति होती है और स्नातक की यथाख्यातचारित्र की अपेक्षा उत्कृष्ट स्थिति देशऊणी करोड पूर्व वर्ष की होती है ।

** परिहारविशुद्धिचारित्र की स्थिति जघन्य एक समय मरण की अपेक्षा होती है और उत्कृष्ट २९ वर्ष कम करोड पूर्व की होती है । जैसे कि करोड़ पूर्व की आयुष्य वाला कोई मनुष्य कुछ कम नौ वर्ष की उम्र मे दीक्षा ग्रहण करे । उसकी दीक्षापर्याय बीस वर्ष की होवे तब उसको दृष्टिवाद अग पढने की आज्ञा मिलती है । इसके बाद वह परिहारविशुद्धिचारित्र अगीकार करता है । परिहारविशुद्धिचारित्र की जघन्य मर्यादा १८ महीने की है । इसलिए १८ महीने तक उसका पालन कर फिर परिहारविशुद्धिकल्प को ही अगीकार करे । इस प्रकार निरन्तर यावज्जीवन परिहारविशुद्धिकल्प का ही पालन करे । इस प्रकार परिहारविशुद्धिचारित्र की उत्कृष्ट स्थिति २९ वर्ष कम करोड पूर्व वर्ष की होती है ।*

एक समय की, उत्कृष्ट २९ वर्ष कम करोड पूर्व वर्ष की होती है। सूक्ष्मसम्पराय की स्थिति एक जीव की अपेक्षा, अनेक जीव की अपेक्षा जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। अनेक जीव की अपेक्षा सामायिकचारित्र और यथाख्यातचारित्र सव्वद्धा (सर्वकाल मे) पाया जाता है। छेदोपस्थापनीयचारित्र अनेक जीव की अपेक्षा * जघन्य २५० वर्ष, उत्कृष्ट ५० लाख करोड सागर तक होता है। परिहारविशुद्धिचारित्र अनेक जीव की अपेक्षा +

** उत्सर्पिणीकाल मे प्रथम तीर्थंकर का तीर्थ २५० वर्ष तक रहता है । तब तक छेदोपस्थापनीयचारित्र होता है । इसलिए छेदोपस्थापनीयचारित्र का जघन्य काल २५० वर्ष होता है । अवसर्पिणीकाल मे प्रथम तीर्थंकर का तीर्थ ५० लाख करोड सागरोपम तक रहता है । तब तक छेदोपस्थापनीयचारित्र होता है । इसलिए उत्कृष्ट ५० लाख करोड सागरोपम तक होना कहा है ।*

+ परिहारविशुद्धिचारित्र का काल १४२ वर्ष होता है । जैसे कि उत्सर्पिणीकाल मे प्रथम तीर्थंकर के पास सौ वर्ष की आयुष्य वाला मनुष्य परिहारविशुद्धिचारित्र ग्रहण करे और उसके जीवन के अन्तिम समय मे उसके पास सौ वर्ष की आयुष्य वाला मनुष्य परिहारविशुद्धिचारित्र स्वीकार करे । उसके बाद फिर कोई उस चारित्र को ग्रहण न कर सके । इस तरह दो सौ होते है । परन्तु प्रत्येक के उनतीस उनतीस वर्ष जाने के बाद परिहाविशुद्धिचारित्र की प्राप्ति होती है । इसलिए दो सौ वर्ष मे से ५८ वर्ष कम कर देने से १४२ बाकी रहे । इतने वर्ष परिहारविशुद्धिचारित्र का जघन्य काल होता है । चूर्णिकार की व्याख्या भी इसी तरह की है, किन्तु वह अवसर्पिणीकाल के अन्तिम तीर्थंकर की अपेक्षा से है ।

जघन्य १४२ वर्ष, उत्कृष्ट * दो करोड़ पूर्व मे ५८ वर्ष कम होता है।

३१ अन्तरद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र का कितने काल का अन्तर होता है ? हे गौतम ! एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन अर्द्धपुद्गलपरार्वतन का होता है। इसी तरह यथाख्यात तक चारो ही चारित्र का कह देना चाहिए। अनेक जीव की अपेक्षा सामायिकचारित्र और यथाख्यातचारित्र का जघन्य अन्तर + ६३ हजार वर्ष का और उत्कृष्ट अन्तर १८

** परिहारविशुद्धिचारित्र का उत्कृष्ट काल ५८ वर्ष कम दो करोड पूर्व का है । जैसे कि अवसर्पिणीकाल के प्रथम तीर्थंकर के पास करोड पूर्व वर्ष की आयु वाला मनुष्य परिहारविशुद्धिचारित्र अगीकार करे और उसके जीवन के अन्तिम समय मे उसके पास करोड पूर्व की आयु वाला मनुष्य परिहारविशुद्धिचारित्र अगीकार करे । इस तरह दो करोड पूर्व वर्ष हुए । इन मे से प्रत्येक के उनतीस उनतीस वर्ष कम कर देने से ५८ वर्ष कम दो करोड पूर्व परिहारविशुद्धिचारित्र का उत्कृष्ट काल है ।*

+ अवसर्पिणीकाल के दुषमा नामक पाचवे आरे तक छेदोपस्थापनीयचारित्र होता है । इसके बाद छठा आरा जो २१ हजार वर्ष का होता है, उसमे छेदोपस्थापनीयचारित्र का अभाव होता है। इसी तरह उत्सर्पिणीकाल का पहला और दूसरा आरा जो कि २१,२१ हजार वर्ष के होते है, उनमे भी छेदोपस्थापनीयचारित्र का अभाव होता है । इस तरह ६३ हजार वर्ष तक छेदोपस्थापनीयचारित्र का जघन्य अन्तर होता है । इसका उत्कृष्ट अन्तर १८ कोडाकोडी सागरोपम का होता है । वह इस प्रकार है-उत्सर्पिणी काल मे चौबीसवे तीर्थंकर के तीर्थ तक छेदोपस्थापनीयचारित्र होता है । इसके बाद उत्सर्पिणी के चौथा, पाचवा, छठा आरा जो कि क्रम से दो, तीन और चार कोडाकोडी

कोडकोडी सागरोपम का होता है। । * परिहारविशुद्धिचारित्र का जघन्य अतर ८४ हजार वर्ष का है। और उत्कृष्ट १८ कोडा कोडी सागरोपम का होता है। सूक्ष्मसम्परायचारित्र का जघन्य अन्तर एक समय का और उत्कृष्ट अन्तर छह महीने का होता है।

सागरोपम के होते है, उनमे छेदोपस्थापनीयचारित्र का अभाव होता है । इसी तरह अवसर्पिणीकाल का पहला, दूसरा और तीसरा आरा, जो कि क्रमश चार, तीन और दो कोडाकोडी सागरोपम के होते है, उनमे छेदोपस्थापनीयचारित्र का अभाव होता है । इसके बाद अवसर्पिणीकाल के चौथे आरे मे प्रथम तीर्थंकर के तीर्थ मे छेदोपस्थापनीयचारित्र होता है । इसलिए छेदोपस्थापनीयचारित्र का उत्कृष्ट अन्तर उक्त रूप से १८ कोडाकोडी सागरोपम का होता है। उत्कृष्ट अन्तर १८ कोडाकोडी सागरोपम मे कुछ कम रहता है और जघन्य अन्तर मे ६३ हजार वर्ष से कुछ अधिक होता है, किन्तु यह न्यूनाधिकता अल्प होने के कारण यहाँ उसकी विवक्षा नहीं की गई है ।

* *अवसर्पिणीकाल का पाचवा और छठा आरा तथा उत्सर्पिणीकाल का पहला और दूसरा आरा ये प्रत्येक २१,२१ हजार वर्ष के होते हैं । इनमे परिहारविशुद्धिचारित्र नहीं होता है । इसलिए परिहारविशुद्धिचारित्र का जघन्य अन्तर ८४ हजार वर्ष का होता है । अवसर्पिणीकाल मे अन्तिम चौबीसवे तीर्थंकर के बाद पाचवे आरे मे परिहारविशुद्धिचारित्र का काल अल्प है और इसी तरह उत्सर्पिणीकाल के तीसरे आरे मे परिहारविशुद्धिचारित्र स्वीकार करने के पहले का काल अल्प है, इसलिये उसकी यहाँ पर विवक्षा नहीं की गई है । उत्कृष्ट अन्तर १८ कोडाकोडी सागरोपम का होता है । इसका खुलासा छेदोपस्थापनीयचारित्र की तरह समझ लेना चाहिए ।*

३२ समुद्घातद्वार— अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाले मे कितने समुद्घात पाये जाते हैं ? हे गौतम ! छह समुद्घात (केवलीसमुद्घात को छोड कर) पाये जाते है। इसी तरह छेदोपस्थापनीयचारित्र मे पहले के तीन समुद्घात पाये जाते हैं। सूक्ष्मसम्पराय मे समुद्घात नहीं होता हैं। यथाख्यातचारित्र मे एक केवलीसमुद्घात पाया जाता है।

३३ क्षेत्रद्वार— अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला लोक के सख्यातवे भाग मे होता है या असख्यातवें भाग में होता है ? हे गौतम ! लोक के असख्यातवे भाग मे होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय का भी कह देना चाहिए। यथाख्यातचारित्र वाला + लोक के असख्यातवे भाग मे होता है तथा लोक के असख्याता भागो मे होता है अथवा सम्पूर्ण लोक मे भी होता है।

३४ स्पर्शनद्वार— अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला कितने क्षेत्र को स्पर्श करता है ? हे गौतम ! जितने क्षेत्र मे वह रहता है, उतने ही क्षेत्र को स्पर्श करता है अर्थात् जितने क्षेत्र की अवगाहना कही गई है, उतने ही क्षेत्र की स्पर्शना जाननी चाहिए। इसी तरह शेष चार चारित्र का भी जान लेना चाहिए।

सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय चारित्र वाले लोक के असख्यातवे भाग को स्पर्शते हैं। यथाख्यातचारित्र वाले लोक के असख्यातवे भाग को तथा लोक के

+ यथाख्यातचारित्र वाला केवलीसमुद्घात करते समय जब शरीरस्थ होता है या दण्ड कपाटावस्था मे होता है तब लोक के असख्यातवे भाग मे रहता है । मन्थान-अवस्था मे वह लोक का बहुत भाग व्याप्त कर लेता है, थोडा सा भाग अव्याप्त रहता है, तब वह लोक के असख्याता भागो मे रहता है । जब वह सम्पूर्ण लोक को व्याप्त कर लेता है तब सम्पूर्ण लोक मे रहता है ।

असख्यात भागो को अथवा सम्पूर्ण लोक को स्पर्शता है। +

३५ 'भावद्वार'– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाला किस भाव मे होता है ? हे गौतम ! क्षायोपशमिकभाव मे होता है । इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय चारित्र का भी कह देना चाहिए। यथाख्यातचारित्र वाला औपशमिकभाव मे अथवा क्षायिकभाव मे होता है।

३६ परिमाणद्वार– अहो भगवन् ! सामायिकचारित्र वाले एक समय मे कितने होते है ? हे गौतम ! वर्तमान की अपेक्षा सिय होते है और सिय नहीं होते है। यदि होते है तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार होते है। छेदोपस्थापनीय जघन्य एक दो तीन, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ होते है। इसी तरह परिहारविशुद्धिचारित्र का भी कह देना चाहिए। वर्तमान की अपेक्षा सूक्ष्मसम्परायचारित्र वाले सिय होते है, सिय नहीं होते हैं। यदि होते है तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट १६२ (१०८ क्षपकश्रेणी के और ५४ उपशमश्रेणी के)। वर्तमान की अपेक्षा यथाख्यातचारित्र वाले सिय होते है, सिय नहीं होते है। यदि होते है तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट १६२ (१०८ क्षपकश्रेणी के, ५४ उपशमश्रेणी के) होते हैं।

भूतकाल की अपेक्षा सामायिकचारित्र वाले नियमा प्रत्येक हजार करोड होते है।

* भूतकाल की अपेक्षा छेदोपस्थापनीयचारित्र वाले सिय

+ इसका खुलासा क्षेत्रद्वार की तरह जान लेना चाहिये ।

** छेदोपस्थापनीयचारित्र वालो का उत्कृष्ट परिमाण प्रथम तीर्थंकर के तीर्थ की अपेक्षा सभवित होता है । परन्तु जघन्य परिमाण बराबर समझ मे नहीं बैठता है । क्योकि पाचवे आरे के अन्त मे भरतादि दस क्षेत्रो मे प्रत्येक क्षेत्र मे दो दो के हिसाब से बीस छेदोपस्थापनीयचारित्र वाले होते हैं । कोई आचार्य ऐसा कहते हैं कि जघन्य परिमाण भी प्रथम तीर्थंकर के तीर्थ की अपेक्षा ही जानना । जघन्य प्रत्येक सौ करोड मे कुछ कम और उत्कृष्ट प्रत्येक सौ करोड से कुछ अधिक होते हैं ऐसा जाना चाहिए । (टीका)*

होते हैं, सिय नहीं होते है। यदि होते हैं तो जघन्य उत्कृष्ट प्रत्येक सौ करोड होते हैं । भूतकाल की अपेक्षा परिहारविशुद्धिचारित्र वाले सिय होते है, सिय नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार होते हैं। भूतकाल की अपेक्षा सूक्ष्मसम्परायचारित्र वाले सिय होते हैं, सिय नहीं होते है। यदि होते हैं तो जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ होते हैं। भूतकाल की अपेक्षा यथाख्यातचारित्र वाले नियमा प्रत्येक करोड होते हैं।

३७ अल्पबहुत्वद्वार– १ सब से थोडे सूक्ष्मसम्परायचारित्र वाले (प्रत्येक सौ)। २ उससे परिहारविशुद्धिचारित्र वाले सख्यातगुणा (प्रत्येक हजार)। ३ उससे यथाख्यातचारित्र वाले सख्यातगुणा (प्रत्येक करोड)। ४ उससे छेदोपस्थापनीयचारित्र वाले सख्यातगुणा (प्रत्येक सौ करोड) ५ उससे सामायिकचारित्र वाले सख्यातगुणा (प्रत्येक हजार करोड) होते हैं।

९ खुड्डाग कडजुम्मा का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक इकतीसवा, उद्देशा अट्ठाईस)

१ अहो भगवन् ! + खुड्डागजुम्मा (क्षुद्रयुग्म-लघुयुग्म) कितने कहे गये हैं ! हे गौतम ! चार कहे गये हैं, यथा * कडजुम्मा,

+ लघु सख्या वाली राशि विशेष को खुड्डागजुम्मा कहते हैं। आगे 'महाजुम्मा' बतलाये जावेंगी । उनकी अपेक्षा ये क्षुद्र (लघु छोटे) जुम्मा हैं ।

** जिस राशि मे से चार चार बाकी निकालते हुए अन्त मे शेष चार बच जाये उस राशि को खुड्डाग कडजुम्मा कहते हैं । जैसे ४,८,१२,१६,२० आदि । शेष तीन बच जाये उस राशि को खुड्डाग तेओगा कहते हैं, जैसे ७,११,१५ आदि । शेष दो बच जाये उस राशि को खुड्डाग दावरजुम्मा कहते हैं, जैसे ६,१०,१४ आदि । शेष एक बच जाये उस राशि को खुड्डाग कलियोगा कहते हैं, जैसे ५,९,१३ आदि ।*

तेओगा, दावरजुम्मा, कलियोगा।

२ अहो भगवन् ! कडजुम्मा नारकी कहाँ से आकर उत्पन्न होते है ? हे गौतम ! पाच सज्ञी, पाच असज्ञी तिर्यंच और सख्यात वर्ष की आयु वाले मनुष्य, इन ११ स्थानो से आकर उत्पन्न होते है । इस तरह सात ही नारकी मे कह देना चाहिए। किन्तु आगति के स्थान इस प्रकार है–

१-रत्नप्रभा के आगतिस्थान ११ है।

२-शर्कराप्रभा के आगतिस्थान ६ है (असज्ञी तिर्यंच कम हो गये।)

३-बालुकाप्रभा के आगतिस्थान ५ है। (भुजपरिसर्प कम हो गये)।

४-पकप्रभा के आगतिस्थान ४ हैं (खेचर कम हो गये) ।

५-धूमप्रभा के आगतिस्थान ३ हैं (स्थलचर कम हो गये)।

६-तमप्रभा के आगतिस्थान २ है (उरपरिसर्प कम हो गये)।

७-तमतमाप्रभा के आगतिस्थान २ हैं (स्त्री नहीं जाती)।

३ अहो भगवन् ! नारकी मे एक समय मे कितने जीव उत्पन्न होते है ? हे गौतम ! ४, ८, १२, १६, इस तरह चार चार बढाते हुए यावत् असख्याता जीव नारकी मे उत्पन्न होते है।

४ अहो भगवन् ! वे जीव किस तरह से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जैसे कोई * कूदने वाला पुरुष साथी का साथ छूट जाने पर अध्यवसायपूर्वक (इच्छाजन्यकरण अर्थात् क्रियारूप साधन द्वारा) कूदता हुआ पूर्वस्थान को छोडता हुआ आगे के स्थान को ग्रहण करता जाता है, इसी प्रकार नारकी जीव कर्म रूप क्रिया के साधन द्वारा पूर्व भव को छोड कर नारकी मे उत्पन्न होते है।

** भगवतीसूत्र के पच्चीसवे शतक के आठवे उद्देशे मे जिस तरह कहा है, उसी तरह यहाँ भी कह देना चाहिए ।*

इसी तरह तेओगा भी कह देना चाहिए। किन्तु ३,७,११,१५ सख्याता, असख्याता कहना चाहिए। इसी तरह दावरजुम्मा कह देना चाहिए, किन्तु २,६,१०,१४ सख्याता, असख्याता कहना चाहिए। इसी तरह कलियोगा भी कह देना चाहिए किन्तु १,५,९,१३ सख्याता, असख्याता कहना चाहिए।

यह ओघसूत्र (सामान्यसूत्र) हुआ। अब विशेष कहा जाता है–

ओह भगवन् ! कृष्णलेशी खुड्डागकडजुम्मा के नेरीया कितने स्थानो से आकर उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! तीन स्थानो से (सज्ञी तिर्यंच, असज्ञी तिर्यंच और मनुष्य से) आकर उत्पन्न होते हैं। प्रमाण ४,८,१२,१६ यावत् सख्याता असख्याता है। अहो भगवन् ! किस तरह से उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! ओघसूत्र मे कहा उसी तरह से पूर्वस्थान को छोड कर अगले स्थान को ग्रहण करते हुए उत्पन्न होते हैं। पाचवीं, छठी, सातवीं नारकी में कहना । जिस तरह कडजुम्मा कहा उसी तरह तेओगा, दावरजुम्मा, कलियोगा कह देना चाहिए, किन्तु प्रमाण अपना-अपना कहना चाहिए। इसी तरह नीललेशी का भी कह देना चाहिए किन्तु तीसरी, चौथी, पाचवीं नरक मे कहना चाहिए। इसी तरह कापोतलेशी का कह देना चाहिए, किन्तु पहली, दूसरी, तीसरी नरक मे कहना चाहिए।

एक समुच्चय का उद्देशा हुआ और तीन लेश्या के तीन उद्देशे हुए। इन चार उद्देशो को ओघ उद्देशा कहते है। इसी तरह भवी के चार उद्देशा, (एक ओघ उद्देशा, तीन लेश्या के साथ तीन उद्देशा) कह देने चाहिए। भवी की तरह अभवी के भी चार उद्देशा कह देने चाहिए। इसी तरह मिथ्यादृष्टि के भी चार उद्देशा कह देने चाहिए। इसी तरह समदृष्टि के भी चार उद्देशा कह देने चाहिए किन्तु सातवीं नरक मे समदृष्टि नहीं कहना चाहिए, क्योंकि समदृष्टि सातवीं नरक मे उत्पन्न नहीं होता है और वहाँ

से उवटता (निकलता) भी नहीं है। इसी तरह कृष्णपाक्षिक और शुक्लपाक्षिक के चार-चार उद्देशा कह देने चाहिए।

ये सब मिलाकर २८ उद्देशा हुए।

१०. उवटणा-उद्वर्तना का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक बत्तीसवे के उद्देशा अट्ठाईस)

१ अहो भगवन् ! खुड्डागकडजुम्मा नैरयिक उवटकर (नरक से निकल कर) कहाँ उत्पन्न होते है ? हे गौतम ! पाच सज्ञी तिर्यंच मे और सख्यात वर्ष की आयु वाले कर्मभूमि मनुष्य मे, इन छह स्थानो मे उत्पन्न होते है ।

२ अहो भगवन् ! एक समय मे कितने उवटते हैं ? हे गौतम ! चार, आठ, बारह, सोलह यावत् सख्याता, असख्याता उवटते (निकलते) है ।

३ अहो भगवन् ! वे कैसे उवटते है ? हे गौतम ! पहले की तरह अध्यवसाय के निमित्त से तथा योगो के कारण एव स्वकर्मऋद्धि और प्रयोग से उवटते है। इस तरह दूसरी से लेकर छठी नारकी तक के निकले हुए जीव पूर्वोक्त छह स्थानो मे जाते हैं। सातवीं नरक से निकले हुए जीव पाच सज्ञी तिर्यंच मे जाते है, मनुष्य मे नही जाते है। बाकी सारा अधिकार ३१ वे शतक की तरह जान लेना चाहिए। इसी तरह तेओगा, दावरजुम्मा, कलियोगा का परिमाण इकतीसवे शतक के अनुसार जान लेना चाहिए। यह ओघ उद्देशा हुआ। इसी तरह कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या के उद्देशे भी कह देने चाहिए किन्तु कृष्णलेशी पाचवीं, छठी नरक से निकले हुए छह स्थानो (पाच सज्ञी तिर्यंच और मनुष्य) मे जाते हैं और सातवीं से निकले हुए पाच स्थानो (पाच सज्ञी तिर्यंच) मे जाते है। ये चार ओघ उद्देशे हुए। बाकी २४ उद्देशे इकतीसवे

शतक के अनुसार कह देने चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ उवटना (निकलना) कहना चाहिए। उवटन इस शतक के ओघसूत्र के अनुसार कहना चाहिए।

११ एकेन्द्रिय शतक का थोकडा

(भगवतीसूत्र, शतक ३३ वें के १२ अतर शतक के उद्देशा १२४)

भेद पगइ बध वेद ओही भवीया भवी य ।
बारस अतर सया उद्देशा सव चउवीस।

इनमे 'एकेन्द्रिय शतक' का थोकडा चलता है सो कहते हैं–

१ अहो भगवन् ! एकेन्द्रिय के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! बीस भेद हैं–पृथ्वीकाय आदि पाच सूक्ष्म और पाच बादर, इन दस के पर्याप्त और अपर्याप्त, ये बीस भेद हुए।

२ अहो भगवन् ! एकेन्द्रिय के कितने कर्मों की सत्ता होती है ? हे गौतम ! आठ कर्मों की सत्ता है।

३ अहो भगवन् ! एकेन्द्रिय के कितने कर्मों का बन्ध होता है ? हे गौतम ! सात अथवा आठ कर्मों का बन्ध होता है ।

४ अहो भगवन् ! एकेन्द्रिय कितनी कर्म प्रकृतियो को वेदते हैं ? हे गौतम ! चौदह कर्म प्रकृतियो को वेदते हैं, वे ये हैं – ज्ञानावरणीयादि ८ कर्म, * श्रोत्रेन्द्रिय का आवरण, चक्षुरिन्द्रिय का आवरण, घ्राणेन्द्रिय का आवरण, रसनेन्द्रिय का आवरण, पुरुषेवद का आवरण, स्त्रीवेद का आवरण ।

।। प्रथम उद्देशा सम्पूर्ण ।।

** एकेन्द्रिय के ये चार इन्द्रिया, पुरुषवेद, स्त्रीवेद ये नहीं होते हैं । इसलिए अध्यवसाय की अपेक्षा वे इनका दु ख वेदते हैं ।*

अनन्तरोपपन्न, अनन्तरावगाढ, अनन्तराहारक, अनन्तरपर्याप्तक इन चार उद्देशो मे एकेन्द्रिय के १० भेद अपर्याप्ता के पाये जाते है । इनके ८ कर्मों की सत्ता होती है, ७ कर्मों का बन्ध होता है, १४ कर्मप्रकृतियो को वेदते है।

परम्परोपपन्न, परम्परावगाढ, परम्पराहारक, परम्परा पर्याप्तक, चरम और अचरम ये छह उद्देशा औघिक की तरह कह देना चाहिए। इन ११ उद्देशो मे से दूसरा, चौथा, छठा और आठवा इन चार उद्देशो मे ८ कर्मों की सत्ता होती हैं, ७ कर्मों का वन्ध होता है और १४ कर्मप्रकृतिया वेदते है। बाकी ७ उद्देशो मे आठ कर्मो की सत्ता होती है, सात अथवा आठ कर्मो का बन्ध होता है। १४ प्रकृतियो को वेदते हैं। बाकी सारा अधिकार प्रथम उद्देशा के अनुसार कह देना चाहिए।

।। इति तेतीसवे शतक का प्रथम अन्तरशतक।।

कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी इन तीन अन्तर शतको के ११-११ उद्देशा कह देने चाहिए। इनमे से दूसरा, चौथा, छठा, आठवा इन चार उद्देशो मे पृथ्वीकायादि के १०-१० भेद होते है। आठ कर्मों की सत्ता होती है, सात कर्मों का बन्ध होता है। १४ कर्म प्रकृतियो को वेदते है। बाकी ७ उद्देशो मे पृथ्वीकायादि के २०-२० भेद होते है। आठ कर्मों की सत्ता होती है। सात अथवा आठ कर्मों का बन्ध होता है। १४ कर्म प्रकृतियो को वेदते है।

तेतीसवे शतक के अन्दर लेश्यासयुक्त चार अन्तर शतक समुच्चय कहे गये हैं। इसी तरह लेश्यासयुक्त चार अन्तर शतक भवी जीवो के और चार अन्तर शतक अभवी जीवो के कह देने चाहिए किन्तु अभवीशतक के प्रत्येक शतक के ९-९ उद्देशे कहने चाहिए, क्योकि अभवी मे चरम और अचरम ये दो उद्देशे नहीं होते हैं। इन १२ अन्तर शतको के १२४ उद्देशे होते है, जिनमे ४८

उद्देशे अनन्तर समय के होते हैं। जिनमे एकेन्द्रिय के दस-दस बोल अपर्याप्त होने से ४८० बोलो मे (४८ X १० = ४८०) आठ कर्मों की सत्ता होती है। सात कर्मों का बन्ध होता है और १४ कर्मप्रकृतियो को वेदते हैं । बाकी ७६ उद्देशो में एकेन्द्रिय के २०-२० भेद होने से १५२० बोल (७६ X २० = १५२०) होते हैं। इन १५२० बोलो मे आठ कर्मों की सत्ता होती है। सात अथवा आठ कर्मों का बन्ध होता है। १४ कर्मप्रकृतियों को वेदते हैं। कुल २००० आलापक हुए।

इति ३३ वे शतक के १२ अन्तर शतक और उनके १२४ उद्देशे पूर्ण हुए।

नोट- अनन्तरोपपन्न आदि दूसरा, चौथा और आठवा इन चार उद्देशो मे १०-१० आलापक होने से ४० आलापक हुए। बाकी ७ उद्देशो मे २०-२० आलापक होने से १४० आलापक (७ X २० = १४०) हुए। इस प्रकार ये १८० आलापक (४० + १४० = १८०) औघिक के हुए। कृष्णलेशी के १८०, नीललेशी के १८० कापोतलेशी के १८० आलापक हुए। ये सब मिलाकर ७२० आलापक हुए। इसी प्रकार भवी के ७२० आलापक हुए। अभवी मे चरम और अचरम ये दो उद्देशे नहीं होते हैं। इसलिए इन दो उद्देशो के १६० आलापक नहीं होते हैं, बाकी ५६० आलापक होते हैं। ये सब मिलाकर २००० आलापक (७२०+७२०+५६० = २०००) हुए। अर्थात् चार उद्देशो के ४८० आलापक और ७ उद्देशो के १५२० आलापक हुए। सब मिलाकर २००० आलापक (४८०+१५२० = २०००) हुए।

१२. श्रेणीशतक का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक ३४ वे के १२ अतर
शतको के उद्देशा १२४)

भेद सेढी य विग्गहो उववाए समुग्घाय सठाणे ।
बध वेद आगइ य तुल्ल ठिती ए कम्माय।।

भेद, श्रेणी, विग्रहगति, उपपात, समुद्घात, सस्थान, बध, वेद, आगति और समस्थिति वाले कर्मो का बध, ये द्वार इस थोकडे मे चलते है ।

१ अहो भगवन् ! एकेन्द्रिय के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! बीस भेद है-- पृथ्वीकाय आदि पाच सूक्ष्म और पाच बादर, इन दस के पर्याप्त और अपर्याप्त, ये बीस भेद हुए।

रत्नप्रभापृथ्वी के चारो ही दिशा के चरमान्त मे १८-१८ बोल (बादर तेउकाय के पर्याप्त और पर्याप्त को छोडकर) पाये जाते है। बादर तेउकाय के पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो बोल तिर्च्छालोक मे अर्थात् मनुष्यलोक मे पाये जाते है।

२ अहो भगवन् ! क्या रत्नप्रभापृथ्वी के पूर्व चरमान्त के १८ बोलो के जीव मरकर रत्नप्रभापृथ्वी के पश्चिम चरमान्त मे १८ ही बोलपणे उपजते है ? हा गौतम ! उपजते है। अहो भगवन् ! कितने समय की विग्रहगति से उपजते हैं ? हे गौतम ! १,२,३ समय की विग्रहगति से उपजते है।

३ अहो भगवन् ! क्या तिर्च्छालोक के २ बोलो के जीव रत्नप्रभापृथ्वी के पश्चिम चरमान्त के १८ बोलपणे उपजते है ? हा गौतम ! उपजते है। अहो भगवन् ! कितने समय की विग्रहगति से उपजते है ? हे गौतम ! १,२,३ समय की विग्रहगति से उपजते है।

४ अहो भगवन् ! क्या तिर्च्छालोक के २ बोलो के जीव

तिर्च्छालोक मे दो बोलपणे उपजते है ? हा गौतम । उपजते हैं। अहो भगवन् । कितने समय की विग्रहगति से उपजते हैं । हे गौतम । १,२,३ समय की विग्रहगति से उपजते है ।

५ अहो भगवन् । क्या रत्नप्रभापृथ्वी के पूर्व चरमान्त के १८ बोलों के जीव तिर्च्छालोक मे दो बोलपणे (बादर तेउकाय का पर्याप्ता और अपर्याप्ता) उपजते हैं ? हा गौतम । उपजते है। अहो भगवन् । कितने समय की विग्रहगति से उपजते हैं ? हे गौतम । १,२,३ समय की विग्रहगति से उपजते हैं।

ये सब मिलाकर ४०० अलापक (१८ X १८ = ३२४, १८ X २ = ३६, २ X २ = ४, १८ X २ = ३६, =४००) हुए।

जिस तरह पूर्व के चरमान्त से पश्चिम के चरमान्त मे तथा तिर्च्छालोक मे कहने से ४०० आलापक हुए, इसी तरह पश्चिम के चरमान्त से पूर्व चरमान्त तथा तिर्च्छालोक मे कह कर ४०० आलापक कह देने चाहिए। इसी तरह उत्तर चरमान्त से ४०० आलापक और दक्षिण चरमान्त से ४०० आलापक कह देने चाहिए। इस तरह रत्नप्रभापृथ्वी के चारो दिशा के १६०० आलापक हुए।

इसी तरह दूसरी नरक से लेकर सातवीं नरक तक कह देने चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि पूर्व चरमान्त के १८ बोलो के जीव तिर्च्छालोक मे दो बोलपणे उपजते हैं और तिर्च्छालोक के दो बोलो के जीव पश्चिम चरमान्त के १८ बोलो के जीवो मे उपजते हैं। इनकी विग्रहगति दो समय, तीन समय की होती है। ये ७२ आलापक (३६ + ३६ = ७२) हुए। इसी तरह चारो दिशा मे कह देना चाहिए। चारो दिशा के २८८ आलापक (७२ X ४ = २८८ शर्कराप्रभा के) हुए। इसी तरह सातवीं नरक तक कह देने चाहिए। ये १७२८ आलापक (२८८ X ६ = १७२८) आलापक हुए। ये दो समय, तीन समय की विग्रहगति के हुए और

७८७२ आलापक (१६०० मे से २८८ बाकी निकालने से १३१२ रहे । इनको ६ से गुणा करने से ७८७२ आलापक) हुए, ये १,२,३ समय की विग्रहगति के हुए। ये सब मिला कर ११२०० आलापक (१६०० + १७२८ + ७८७२ = ११२००) आलापक हुए।

अहो भगवन् ! अधोलोक की स्थावरनाल से ऊर्ध्वलोक की स्थावरनाल मे १८ बोलो के जीव १८ बोलपणे कितने समय की विग्रहगति से उपजते है ? हे गौतम ! ३,४ समय की विग्रहगति से उपजते है।

अहो भगवन् ! अधोलोक की स्थावरनाल के १८ बोलो के जीव मर कर तिर्च्छालोक के दो बोलपणे उपजते हैं तो कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होते है ? हे गौतम ! दो समय, तीन समय की विग्रहगति से उपजते है।

अहो भगवन् ! तिर्च्छालोक के दो बोलो के जीव मर कर ऊर्ध्वलोक की स्थावरनाल मे १८ बोलपणे उपजते हैं तो कितने समय की विग्रहगति से उपजते है ? हे गौतम ! दो समय, तीन समय की विग्रहगति से उपजते है ।

अहो भगवन् ! तिर्च्छालोक के दो बोलो के जीव तिर्च्छालोक मे दो बोलपणे उपजते हैं तो कितने समय की विग्रहगति से उपजते हैं ? हे गौतम ! १,२,३ समय की विग्रहगति से उपजते हैं। ये सब मिलाकर ४०० आलापक हुए। इसी तरह ऊर्ध्वलोक की स्थावरनाल से अधोलोक की स्थावरनाल के ४०० आलापक कह देने चाहिए। ये ८०० आलापक (४०० + ४०० = ८००) हुए। ११२०० ऊपर कहे है, कुल मिला कर १२००० आलापक हुए। लोक की चारो ही दिशा के चरमान्त मे १२, १२ बोल पाये जाते है (पाच स्थावर सूक्ष्म के पर्याप्त और अपर्याप्त तथा बादर वायुकाय के पर्याप्त और अपर्याप्त, ये १२ बोल पाये जाते है)।

अहो भगवन् ! पूर्व चरमान्त के १२ बोलो के जीव मर

कर पूर्व चरमान्त मे १२ बोलपणे उपजते हैं, सो कितने समय की विग्रहगति से उपजते हैं ? हे गौतम ! १,२,३,४ समय की विग्रहगति से उपजते हैं।

अहो भगवन् ! पूर्व चरमान्त के १२ बोलो के जीव मर कर पश्चिम चरमान्त मे १२ बोलपणे उपजते हैं, सो कितने समय की विग्रहगति से उपजते हैं ! हे गौतम ! १,२,३,४ समय की विग्रहगति से उपजते हैं।

अहो भगवन् ! पूर्व चरमान्त के १२ बोलो के जीव मर कर उत्तर और दक्षिण दिशा के चरमान्त के १२-१२ बोलपणे उपजते हैं सो कितने समय की विग्रहगति से उपजते हैं ? हे गौतम ! दो, तीन, चार समय की विग्रहगति से उपजते हैं। जिस तरह पूर्व के चरमान्त से कहे उसी तरह पश्चिम के चरमान्त से कहना। दक्षिण के चरमान्त के १२ बोलो के जीव पूर्व और पश्चिम के चरमान्त मे १२-१२ बोलपणे उपजते हैं । वे दो, तीन, चार समय की विग्रहगति से उपजते हैं। दक्षिण के चरमान्त के १२ बोलो के जीव दक्षिण चरमान्त मे १२-१२ बोलपणे उपजते हैं, वे १,२,३,४ समय की विग्रहगति से उपजते है । दक्षिण के चरमान्त के १२ बोलो के जीव उत्तर चरमान्त में १२-१२ बोलपणे उपजते हैं, वे भी १,२,३,४ समय की विग्रहगति से उपजते हैं। जिस तरह दक्षिण के चरमान्त से कहे , उसी तरह उत्तर के चरमान्त से कहना।

१२ X १२ = १४४ आलापक हुए। चारो दिशा के ५७६ आलापक (१४४ X४ = ५७६) पूर्व दिशा से हुए। चारो दिशा के गिनने से २३०४ आलापक (५७६ X ४ = २३०४) हुए। इनमे ११५२ आलापक एक, दो, तीन, चार समय की विग्रहगति के हैं और ११५२ आलापक दो, तीन, चार, समय की विग्रहगति के हैं। ये सब आलापक मिला कर १४३०४ (१२००० + २३०४ = १४३०४) आलापक हुए।

अहो भगवन् ! बीस प्रकार के एकेन्द्रिय जीवो मे कितने कर्मो की सत्ता, बध, वेदन और समुद्घात पाई जाती है ? हे गौतम ! आठ कर्मो की सत्ता पाई जाती है। सात आठ कर्म बाधते है, १४ प्रकृतियो को वेदते हैं। ७४ ठिकाणो से (४६ तिर्यंच के, २५ देवता के, ३ मनुष्य के = ७४) से आकर एकेन्द्रियो मे उपजते है।

अहो भगवन् ! बीस प्रकार के एकेन्द्रियो मे समुद्घात कितनी पाई जाती हैं ? हे गौतम ! चार समुद्घात (वेदनीय, कषाय, मारणातिक और वैक्रिय समुद्घात) पाई जाती हैं।

अहो भगवन् ! एकेन्द्रिय जीव किस प्रकार कर्म बाधते हैं ? हे गौतम ! १ कितनेक समस्थिति वाले समविशेषाधिक कर्म बाधते हैं, २ कितनेक समस्थिति वाले विषमविशेषाधिक कर्म बाधते है, ३ कितनेक विषमस्थिति वाले समविशेषाधिक कर्म बाधते है, ४ कितनेक विषमस्थिति वाले विषमविशेषाधिक कर्म बाधते हैं।

अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! एकेन्द्रिय जीव चार प्रकार के है—१ समान आयुष्य वाले साथ उत्पन्न हुए। २ समान आयुष्य वाले विषम (भिन्न-भिन्न समय मे) उत्पन्न हुए, ३ विषम आयुष्य वाले साथ उत्पन्न हुए, ४ विषम आयुष्य वाले विषम (भिन्न-भिन्न समय मे) उत्पन्न हुए। इनमे से १ जो जीव + समान आयुष्य वाले साथ उत्पन्न हुए है वे

+ जो जीव समान आयु वाले और साथ उत्पन्न हुए है वे समान योग वाले होने से परस्पर समान ही कर्म करते है यानी पूर्वबद्ध कर्म की अपेक्षा समान, हीन अथवा अधिक कर्म करते है । अधिक कर्मबध भी पूर्वबद्धकर्म की अपेक्षा असख्यात भाग आदि से विशेष अधिक होता है । फिर भी परस्पर समान ही होता है । (२) जो जीव समान आयु वाले है किन्तु विषम काल मे उत्पन्न हुए है, इनमे योगो की विषमता-भिन्नता होने के कारण ये पूर्वबद्ध कर्म

समस्थिति वाले हैं और समविशेषाधिक कर्म बाधते हैं। २ जो जीव समान आयुष्य वाले हैं और विषम उत्पन्न हुए हैं, वे समस्थिति वाले हैं और विषम विशेषाधिक कर्म बाधते है। ३ जो जीव विषम आयुष्य वाले हैं और सम उत्पन्न हुए हैं, वे विषमस्थिति वाले हैं और समविशेषाधिक कर्म बाधते हैं ४ जो जीव विषम आयुष्य वाले हैं और विषम उत्पन्न हुए हैं, वे विषमस्थिति वाले हैं और विषमविशेषाधिक कर्म बाधते है।

औघिक उद्देशा सम्पूर्ण हुआ।

दूसरा उद्देशा अनन्तरोपन्न, चौथा उद्देशा अनन्तरावगाढ, छठा उद्देशा अनन्तराहारक, आठवा उद्देशा अनन्तरपर्याप्तक, इन चार उद्देशो मे एकेन्द्रिय के दश भेद (अपर्याप्त) पाये जाते हैं। इनमे आठ कर्मो की सत्ता होती है । सात कर्मो का बन्ध होता है । १४ कर्मप्रकृतिया वेदते है, ७४ ठिकाणो से आकर जीव उपजते हैं, दो समुद्घात (वेदनीय, कषाय) पाई जाती है। इन चारो उद्देशों मे दो भागे पाये जाते हैं–१-समस्थिति समविशेषाधिक कर्म बाधते हैं, २-समस्थिति विषमविशेषाधिक कर्म बाधते हैं। क्योकि ये जीव दो प्रकार के हैं–१ समान आयुष्य वाले साथ उत्पन्न हुए, २ समान

की अपेक्षा विषम विशेषाधिक कर्मबध करते है यानी पूर्वबद्ध कर्म की अपेक्षा कोई सख्यात भाग अधिक, कोई असख्यातभाग अधिक इस प्रकार भिन्न-भिन्न रूप से विशेषाधिक कर्मबन्ध करते है । (३) जो विषम यानी भिन्न आयु वाले है, किन्तु साथ उत्पन्न हुए हैं वे समान योग वाले होते है । इसलिये पहले भागे की तरह पूर्वबद्ध कर्म की अपेक्षा परस्पर तुल्य विशेषाधिक कर्म बन्ध करते हैं । (४) जो विषम आयु वाले है और विषम यानी भिन्न भिन्न काल मे ही उत्पन्न हुए है, उनमे योगो की विषमता होती है । इसलिये ये दूसरे भांगे की तरह विषम विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं ।

आयुष्य वाले विषम उत्पन्न हुए। इनमे से जो समान आयुष्य वाले साथ उत्पन्न हुए है, ये समस्थिति वाले है और समविशेषाधिक कर्म बाधते है । जो समान आयुष्य वाले हैं किन्तु विषम उत्पन्न हुए है, वे समस्थिति वाले है और विषमविशेषाधिक कर्म बाधते हैं।

शेष तीसरा, पाचवा, सातवा, नवमा, दशवा और ग्यारहवा उद्देशा औघिक उद्देशे (पहले उद्देशे) की माफक कह देने चाहिए।

पहले १४३०४ आलापक हुए थे, उनको ७ उद्देशो से गुणा करने से १४३०४ X ७ = १००१२८ आलापक हुए।

दूसरा कृष्णलेशी औघिक (समुच्चय) शतक, तीसरा नीललेशी औघिकशतक, चौथा कापोतलेशी औघिकशतक, पाचवा भवी औघिकशतक, छठा भवी कृष्णलेशी शतक, सातवा भवी नीललेशी शतक, आठवा भवी कापोतलेशी और औघिक शतक, इन आठ शतको मे ११-११ उद्देशे हैं। एक एक शतक मे १००१२८-१००१२८ आलापक है। कुल ८०१०२४ आलापक (१००१२८ X ८ = ८०१०२४ आलापक) हुए।

नवमा औघिक अभवी शतक, दसवा कृष्णलेशी अभवी शतक, ग्यारहवा नीललेशी अभवी शतक, बारहवा कापोतलेशी अभवी शतक, इन चार शतको मे ९-९ उद्देशे है (चरम और अचरम के उद्देशे नहीं होते है)। इन ९ उद्देशो मे से पाच उद्देशो के + १४३०४ आलापको से गुणा करने से ७१५२० (५ X १४३०४ = ७१५२०) आलापक एक शतक के हुए। इनको चार शतको से गुणा करने से २८६०८० आलापक (७१५२० X ४ = २८६०८० आलापक) हुए। ये सब मिला कर १०८७१०४ आलापक (८०१०२४ + २८६०८० = १०८७१०४ आलापक) श्रेणीशतक के हुए।

+ चार उद्देशो मे मरते नहीं हैं, इसलिये उनके आलापक नहीं होते ।

१३ एकेन्द्रिय महाजुम्मा का थोकडा

(भगवतीसूत्र, शतक ३५वे के १२ अतरशतको के उद्देशा १३२)

इसके ३३ द्वार है—१ उपपातद्वार २ परिमाणद्वार, ३ अपहारद्वार, ४ अवगाहनाद्वार, ५ बन्धद्वार, ६ वेदकद्वार, ७ उदयद्वार, ८ उदीरणाद्वार, ९ लेश्याद्वार, १० दृष्टिद्वार, ११ ज्ञानद्वार, १२ योगद्वार, १३ उपयोगद्वार, १४ वर्णद्वार, १५ उच्छ्वासद्वार, १६ आहारद्वार, १७ विरतिद्वार, १८ क्रियाद्वार, १९ बन्धकद्वार, २० सञ्ज्ञाद्वार, २१ कषायद्वार, २२ वेदद्वार, २३ वेदबन्धद्वार, २४ सञ्ज्ञीद्वार, २५ इन्द्रियद्वार, २६ अनुबन्धद्वार, २७ कायसवेधद्वार, २८ आहारद्वार, २९ स्थितिद्वार, ३० समुद्घातद्वार, ३१ समोहया-असमोहयाद्वार, ३२ च्यवनद्वार, ३३ उपपातद्वार।*

अहो भगवन् ! + महाजुम्मा (महायुग्म) कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! महाजुम्मा १६ प्रकार के हैं— जैसे—

---

* ३१ वे और ३२ वे शतक मे ' खुड्डागजुम्मा ' कहे गये है, उनकी अपेक्षा ये ' महाजुम्मा ' है ।

+ राशिविशेष को जुम्मा (युग्म) कहते हैं । इसके दो भेद है- खुड्डागजुम्मा (क्षुद्रयुग्म-छोटा युग्म) और महाजुम्मा (महायुग्म- बडा युग्म) खुड्डागजुम्मा तो इकतीसवे और बत्तीसवे शतक मे कह दिये गये है । यहाँ महाजुम्मा बताये जायेगे-जिस राशि मे प्रति समय चार चार अपहरते हुए (निकालते हुए) पूर्व चौकडे आवे और अपहार समय (निकालने के समय) भी चार चार यानी कडजुम्मा हो, उस राशि को ' कडजुम्मा-कडजुम्मा' कहते हैं क्योकि अपहार किये जाने वाले द्रव्य की अपेक्षा से और अपहार समयो की अपेक्षा दोनो अपेक्षा से वह कडजुम्मा है । जैसे १६ की राशि जघन्य 'कडजुम्मा-कडजुम्मा' राशि है क्योकि इसमे चार का अपहार

(१) कडजुम्मा– कडजुम्मा जैसे– १६, ३२, ४८, ६४ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता।

(२) कडजुम्मा–तेओगा, जैसे–१९, ३५, ५१, ६७, यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता।

(३) कडजुम्मा–दावरजुम्मा, जैसे–१८, ३४, ५०, ६६ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता।

(४) कडजुम्मा–कलियोगा, जैसे–१७, ३३, ४९, ६५ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(५) तेओगा–कडजुम्मा, जैसे–१२, २८, ४४, ६० यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(६) तेओगा–तेओगा, जैसे–१५, ३१, ४७, ६३ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(७) तेओगा–दावरजुम्मा, जैसे–१४, ३०, ४६, ६२ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(८) तेओगा-कलियोगा, जैसे–१३, २९, ४५, ६१ यावत्

करने से अन्त मे चार बच जाते है और अपहार समय भी चार है । इसी तरह कडजुम्मा-तेओगा, कडजुम्मा-दावरजुम्मा, कडजुम्मा-कलियोगा भी जान लेना चाहिए अर्थात् जिस राशि मे चार का अपहार करते हुए अन्त मे तीन बाकी बच जावे और अपहार समय चार हो, उस राशि को 'कडजुम्मा-तेओगा' कहते है । जैसे १९ की सख्या मे चार का अपहार करने से अन्त मे ३ बाकी बच जाते है और अपहार समय ४ होते है । इसलिए यह राशि अपहारद्रव्य की अपेक्षा तेओगा है और अपहार-समय की अपेक्षा कडजुम्मा है । इसलिए इस राशि को 'कडजुम्मा-तेओगा' कहते है । इसी तरह १८ की सख्या जघन्य कडजुम्मा-दावरजुम्मा है और १७ की सख्या जघन्य 'कडजुम्मा-कलियोगा' है ।

सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(९) दावरजुम्मा-कडजुम्मा, जैसे– ८, २४, ४०, ५६ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(१०) दावरजुम्मा-तेओगा, जैसे– ११, २७, ४३, ५९ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(११) दावरजुम्मा-दावरजुम्मा, जैसे–१०, २६, ४२, ५८ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(१२) दावरजुम्मा-कलियोगा, जैसे– ९, २५, ४१, ५७ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(१३) कलियोगा-कडजुम्मा, जैसे–४, २०, ३६, ५२ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(१४) कलियोगा-तेओगा, जैसे– ७, २३, ३९, ५५ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(१५) कलियोगा-दावरजुम्मा, जैसे– ६, २२, ३८, ५४ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

(१६) कलियोगा-कलियोगा, जैसे– ५, २१, ३७, ५३ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता ।

१ अहो भगवन् ! कडजुम्मा-कडजुम्मा एकेन्द्रिय कहाँ से आकर उपजते हैं ? हे गौतम ! मनुष्य, तिर्यंच और देवता इन तीन गति से आकर उपजते हैं । ७४ * ठिकाणो से आकर उपजते हैं ।

** ७४ ठिकाणे इस प्रकार है– यहाँ वनस्पति के सूक्ष्म, बादर पर्याप्त अपर्याप्त ये ४ भेद किये गये हैं । इसलिए तिर्यंच के ४६ भेद लिये गये हैं । मनुष्य के ३ भेद, भवनपति के १० वाणव्यन्तर के ८, ज्योतिषी के ५ और पहला दूसरा देवलोक ये सब मिला कर ७४ हुए (४६+३+१०+८+५+२=७४) । इन ७४ ठिकाणो से आकर एकेन्द्रिय उपजते हैं ।*

२ अहो भगवन् ! कडजुम्मा-कडजुम्मा एकेन्द्रिय जीव एक समय मे कितने उपजते है ? हे गौतम ! १६, ३२, ४८, ६४ यावत् सख्याता असख्याता अनन्ता उपजते हैं ।

३ अहो भगवन् ! कडजुम्मा-कडजुम्मा एकेन्द्रिय जीव एक एक समय मे अनन्ता अनन्ता अपहरे (निकाले) तो कितने समय मे निर्लेप होते है । (खाली होते है) ? हे गौतम ! अनन्त उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी पूर्ण होवे तो भी निर्लेप नहीं होते हैं ।

४ अहो भगवन् ! उनकी अवगाहना कितनी है ? हे गौतम ! जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट १००० योजन झाझेरी है ।

५ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मो के बधक हैं ? हे गौतम ! वे सात कर्मो के बधक है, अबन्धक नहीं और कितनेक जीव आयुष्य कर्म के बन्धक भी है और अबन्धक भी है ।

६ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मो के वेदक है ? हे गौतम ! वे आठो कर्मो के वेदक है । साता वेदने वाले भी बहुत है और असाता वेदने वाले भी बहुत हैं ।

७ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मो के उदय वाले हैं ? हे गौतम ! वे आठो कर्मों के उदय वाले है ।

८ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मों की उदीरणा वाले हैं ? हे गौतम ! वे छह कमो की उदीरणा वाले है । आयुष्य और वेदनीय कर्मो की उदीरणा वाले भी है और अनुदीरणा वाले भी है ।

९ अहो भगवन् ! वे जीव कितनी लेश्या वाले है ? हे गौतम ! वे कृष्ण, नील, कापोत और तेजो, ये ४ लेश्या वाले हैं ।

१० अहो भगवन् ! वे जीव मिथ्यादृष्टि है या समदृष्टि हैं ? हे गौतम ! वे मिथ्यादृष्टि है ।

११ अहो भगवन् ! वे ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ? हे गौतम ! वे अज्ञानी है (मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी है) ।

१२ अहो भगवन् ! उन जीवो मे योग कितने पाये जाते हैं ? हे गौतम् ! उनमे एक काययोग पाया जाता है ।

१३ अहो भगवन् ! उनमे उपयोग कितने पाये जाते हैं ? हे गौतम ! उनमे दो उपयोग पाये जाते हैं—साकार-उपयोग, अनाकार-उपयोग ।

१४ अहो भगवन् ! क्या उनमे वर्णादि होते हैं ? हे गौतम ! जीव की अपेक्षा वर्णादि नहीं होते हैं, शरीर की अपेक्षा वर्णादि * होते है ।

१५ अहो भगवन् ! क्या वे उच्छ्वासक-नि श्वासक हैं ? हे गौतम ! वे उच्छ्वासक भी हैं, नि श्वासक भी हैं, नोउच्छ्वासक-नि श्वासक भी हैं ।

१६ अहो भगवन् ! क्या वे आहारक हैं ? हे गौतम ! वे आहारक भी हैं, अनाहारक भी हैं ।

१७ अहो भगवन् ! क्या वे विरति वाले हैं ? हे गौतम ! वे विरति वाले (सर्वविरति वाले और देशविरति वाले) नहीं हैं किन्तु सब अविरति वाले हैं ।

१८ अहो भगवन् ! क्या वे सक्रिय (क्रिया वाले) हैं ? हा, गौतम ! वे सक्रिय हैं, अक्रिय नहीं हैं ।

१९ अहो भगवन् ! क्या वे बन्धक हैं ? हा, गौतम ! वे सात कर्म बाधने वाले बहुत है और आठ कर्म बाधने वाले भी बहुत है ।

२० अहो भगवन् ! उनमे कितनी सज्ञा पाई जाती हैं ? हे गौतम ! उनमे चारो सज्ञा पाई जाती हैं ।

** जीव की अपेक्षा उनमे वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श नहीं होते । दो शरीर (औदारिक, तैजस) की अपेक्षा ५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ८ स्पर्श पाये जाते हैं । कार्मणशरीर की अपेक्षा ५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ४ स्पर्श (शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष) होते हैं ।*

२१ अहो भगवन् ! उनमे कितने कषाय पाये जाते है ? हे गौतम ! उनमे चारो कषाय पाये जाते है ।

२२ अहो भगवन् ! उनमे कितने वेद पाये जाते हैं ? हे गौतम ! उनमे सिर्फ एक नपुसकवेद पाया जाता है ।

२३ अहो भगवन् ! वे कितने वेद बाधते हैं ? हे गौतम ! वे तीनो वेद बाधते है ।

२४ अहो भगवन् ! क्या वे सज्ञी हैं या असज्ञी हैं ? हे गौतम ! वे सब असज्ञी है ।

२५ अहो भगवन् ! क्या वे सइन्द्रिय हैं या अनिन्द्रिय हैं ? हे गौतम ! वे सब सइन्द्रिय हैं, अनिन्द्रिय नहीं है ।

२६ अहो भगवन् ! वे कितने काल तक रहते है ? हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अनन्त काल जाव वनस्पति काल ।

२७ अहो भगवन् ! क्या उनमे कायसवेध * होता है ? हे गौतम ! उनमे कायसवेध नहीं होता है ।

२८ अहो भगवन् ! वे कितनी दिशा का आहार लेते हैं ? हे गौतम ! व्याघात की अपेक्षा सिय तीन दिशा का, सिय चार दिशा का, सिय पाच दिशा का आहार लेते है । निर्व्याघात की अपेक्षा

+ अपनी काया को छोडकर दूसरी काया मे जाना और फिर वापिस उसी काया मे आना कायसवेध कहलाता है ।

उत्पलोद्देशक मे उत्पल के जीवो का उत्पाद विवक्षित है । उत्पल के जीव पृथ्वीकायादि दूसरी काया मे जाकर फिर उत्पल मे आकर उत्पन्न होते है, तब उनका कायसवेध कहलाता है । किन्तु यहॉ तो कडजुम्मा-कडजुम्मा राशि रूप एकेन्द्रियो का उत्पाद विवक्षित है और ये एकेन्द्रिय अनन्त उत्पन्न होते है । वे सब वहॉ से निकल कर सजातीय या विजातीय किसी भी काया मे उत्पन्न होकर फिर एकेन्द्रियपणे उत्पन्न होवे तब कायसवेध होता है ।

नियमा छहो दिशा का, २८८ बोलो + का आहार लेते हैं ।

२९ अहो भगवन् ! उनकी स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट * बाईस हजार वर्ष की है ।

३० अहो भगवन् ! उनमे कितनी समुद्घात पाई जाती हैं ? हे गौतम ! उनमे पहले की चार समुद्घात पाई जाती हैं ।

३१ अहो भगवन् ! वे समोहया मरण करते हैं या असमोहया मरण करते है ? हे गौतम ! वे समोहया और असमोहया दोनो मरण करते हैं ।

३२ अहो भगवन् ! वे वहाँ से मरकर किस गति मे उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! मनुष्य और तिर्यंच इन दो गतियो मे उत्पन्न होते है (मनुष्य के ३ और तिर्यंच के – ४६, इन ४९ ठिकानो मे उत्पन्न होते हैं) ।

किन्तु उन सब एकेन्द्रिय जीवो का वहा से निकलना असभव है । इसलिए सब एकेन्द्रिय जीवो का कायसवेध नहीं होता है । कडजुम्मा-कडजुम्मा राशि रूप एकेन्द्रियो का जो उत्पाद कहा है वह त्रसकाय से आकर उत्पन्न होने की अपेक्षा से कहा है । परन्तु वह वास्तविक उत्पाद नहीं है । क्योकि एकेन्द्रियो मे प्रति समय अनन्त जीवो का उत्पाद होता है । इसलिए वहाँ एकेन्द्रियो की अपेक्षा कायसवेध असम्भव होने से नहीं कहा गया है । (टीका) ।

+२८८ बोलो का वर्णन पन्नवणासूत्र के थोकडो के तृतीय भाग मे है ।

** यह स्थिति उनके कडजुम्मा-कडजुम्मा आदि महाजुम्मा रूप रहने की अपेक्षा से है ।*

– यहाँ वनस्पति के सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त और अपर्याप्त ये चार भेद ही किये गये हैं । इसलिए तिर्यंच के ४६ भेद कहे गये है ।

३३ अहो भगवन् ! क्या सब प्राण, भूत, जीव, सत्त्व पहले कडजुम्मा-कडजुम्मा रूप से एकेन्द्रियपणे उत्पन्न हो चुके हैं ? हा, गौतम ! अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हो चुके हैं । ये ३३ द्वार कडजुम्मा-कडजुम्मा राशि पर कहे गये हैं । इसी तरह शेष १५ जुम्मा पर भी कह देना चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि परिमाणद्वार अपने-अपने परिमाण के अनुसार कहना चाहिए ।

पहला औधिक उद्देशा सम्पूर्ण हुआ ।

ग्यारह उद्देशो के नाम इस प्रकार हैं– १ औघिक (समुच्चय), + पढम (प्रथम), ३ अपढम(अप्रथम), ४ चरम, ५ अचरम, ६ पढमपढम (प्रथम-प्रथम), ७ पढम-अपढम (प्रथम-अप्रथम), ८ पढम-चरम, ९ पढम-अचरम, १० चरम-चरम, ११ चरम-अचरम ।

+ २ पढम– अर्थात् पहले समय के उत्पन्न हुए । ३ अपढम– पहले समय को छोडकर शेष समय के । (४) चरम– अन्तिम समय के । (५) अचरम– अन्तिम समय को छोडकर शेष समय के । (६) पढम– पढम-एकेन्द्रिय उत्पन्न होने का पहला समय और कडजुम्मा बनने का भी पहला समय। (७) पढम- अपढम- एकेन्द्रिय उत्पन्न होने का पहला समय और कडजुम्मा बनने के अपढम यानी पहले समय को छोडकर शेष समय । (८) पढम– चरम-एकेन्द्रिय उत्पन्न होने का पहला समय और कडजुम्मा के बिखरने का अन्तिम समय । (९) पढम– अचरम-एकेन्द्रिय उत्पन्न होने का पहला समय और कडजुम्मा के अचरम अर्थात् अन्तिम के सिवा शेष समय। (१०) चरम– चरम-एकेन्द्रिय का अन्तिम यानी आखिरी मरने का समय और कडजुम्मा बिखरने का भी अन्तिम समय । (११) चरम– अचरम-एकेन्द्रिय का अन्तिम मरने का समय और कडजुम्मा के अन्तिम के सिवा शेष समय । तत्त्व केवलीगम्य ।

प्रथम समय के कडजुम्मा-कडजुम्मा के प्रश्नोत्तर विषयक 'पढमउद्देशा' है । उसमे औघिक उद्देशे के अनुसार ३३ द्वार कह देने चाहिए किन्तु प्रथम समय के उत्पन्न हुए जीवो मे १० नाणत्ता (दश बाते मे फर्क) हैं– १-उनकी अवगाहना जघन्य उत्कृष्ट अगुल के असख्यातवे भाग की होती है । २-वे आयुष्य कर्म के अबन्धक हैं (आयुष्यकर्म को नहीं बाधते हैं) । ३ वे आयुष्यकर्म के अनुदीरक हैं (उदीरणा करने वाले नहीं हैं) । छह कर्मो के उदीरक हैं । वेदनीय कर्म के उदीरक भी हैं और अनुदीरक भी हैं । ४-वे उच्छ्वास वाले भी नही है, नि श्वास वाले भी नहीं है, उच्छ्वास-नि श्वास वाले भी नहीं हैं । ५-वे सात कर्मों के बन्धक है, आठ कर्मो के बधक नहीं हैं । ६-अनुबन्ध (बन्ध) की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट एक समय के होते हैं। ७ उनकी स्थिति जघन्य उत्कृष्ट एक समय की होती है (राशि की अपेक्षा) । ८-उनमे वेदनीयसमुद्घात और कषायसमुद्घात ये दो समुद्घात पाई जाती हैं । ९- उनमे समोहया असमोहया कोई भी मरण नहीं होता है । १०-उनमे चवण नहीं होता अर्थात् वे मरते नहीं हैं ।

इन ग्यारह उद्देशो मे से पहला, तीसरा और पाचवा , ये तीन उद्देशा समान (सरीखा) हैं । बाकी आठ उद्देशा (दूसरा, चौथा, छठा, सातवा, आठवा, नवमा, दसवा, ग्यारहवा) एक समान हैं । इनमे उपर्युक्त दस दस बातो का फर्क है । चौथा, आठवा और दसवा ये तीन उद्देशो मे देव नहीं उपजते है, इनमे तीन लेश्याए पाई जाती हैं ।

जिस तरह 'कडजुम्मा-कडजुम्मा' का कथन किया गया है, उसी तरह बाकी १५ जुम्मा भी कह देना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि परिमाणद्वार अपने-अपने परिमाण के अनुसार कहना चाहिए ।

पैंतीसवे शतक के पहले अन्तरशतक के
ग्यारह उद्देशा सम्पूर्ण हुए।

जिस तरह पहले अन्तरशतक के ११ उद्देशा कहे गये हैं, उसी तरह दूसरे अन्तरशतक मे कृष्णलेशी के ११ उद्देशा कह देने चाहिए, परन्तु ३ बातो का नाणत्ता (फर्क) है–

१-इनमे कृष्णलेश्या कहनी चाहिए । २-अनुबध जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त का कहना चाहिए । ३-स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की कहनी चाहिए । इसके (कृष्णलेशी के) चौथे, छठे और दसवे उद्देशे मे देवता उत्पन्न नहीं होते है ।

नीललेशी शतक के ११ उद्देशा और कापोतलेशी शतक के ११ उद्देशा कृष्णलेशी के समान कह देना चाहिए, किन्तु लेश्या अपनी-अपनी कहनी चाहिये ।

इन चार शतको के ४४ उद्देशा हुए, इसी तरह भवी के चार शतको के ४४ उद्देशा कह देने चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि "सभी जीव भवी एकेन्द्रियपणे उत्पन्न नहीं हुए" ऐसा कहना चाहिए ।

इसी (भवी की) तरह अभवी के चार शतको के ४४ उद्देशे कह देने चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि "सभी जीव अभवी एकेन्द्रियपणे उत्पन्न नहीं हुए" ऐसा कहना चाहिए ।

ये १२ अन्तर शतको के १३२ उद्देशा पूर्ण हुए ।

१४. द्वीन्द्रिय महाजुम्मा का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक ३६वे के १२ अन्तरशतको के उद्देशा १३२)

१ अहो भगवन् ! कडजुम्मा-कडजुम्मा द्वीन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उपजते हैं ? हे गौतम ! मनुष्य और तिर्यंच, इन दो गतियो से आकर उपजते है । ४९ ठिकाणो से (४६ तिर्यंच के, ३ मनुष्य के = ४९) आकर उपजते हैं ।

२ अहो भगवन् ! कडजुम्मा-कडजुम्मा द्वीन्द्रिय जीव एक समय मे कितने उपजते हैं ? हे गौतम ! १६, ३२, ४८ यावत् सख्याता, असख्याता उपजते हैं ।

३ अहो भगवन् ! कडजुम्मा-कडजुम्मा द्वीन्द्रिय जीव एक एक समय मे सख्याता असख्याता अपहरे (निकालें) तो कितने समय मे निर्लेप होते हैं ? हे गौतम ! असख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी पूर्ण होवे तो भी निर्लेप नहीं होते हैं ।

४ अहो भगवन् ! उनकी अवगाहना कितनी है ? हे गौतम ! जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट १२ योजन की होती है ।

५ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मों के बधक हैं । हे गौतम ! वे सात कर्मों के बधक हैं और कितनेक जीव आयुष्य कर्म के बधक भी हैं और अबधक भी हैं ।

६ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मों के वेदक हैं । हे गौतम ! वे आठो कर्मों के वेदक हैं । सातावेदक भी है और असातावेदक भी हैं ।

७ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मो के उदय वाले हैं ? हे गौतम ! वे आठो कर्मों के उदय वाले हैं ।

८ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मों की उदीरणा वाले हैं । हे गौतम ! वे छह कर्मों की उदीरणा वाले हैं । (आयुष्य और वेदनीय कर्मों की उदीरणा वाले भी हैं और अनुदीरणा वाले भी हैं) ।

९ अहो भगवन् ! उनमे कितनी लेश्या पाई जाती हैं ? हे गौतम ! कृष्ण, नील, कापोत ये तीन लेश्या पाई जाती हैं ।

१० अहो भगवन् ! उनमे कितनी दृष्टि पाई जाती है ? हे गौतम ! दो दृष्टि (समदृष्टि और मिथ्यादृष्टि) पाई जाती हैं ।

११ अहो भगवन् ! उनमे ज्ञान कितने पाये जाते हैं ? हे गौतम ! दो ज्ञान और दो अज्ञान पाये जाते है ।

१२ अहो भगवन् ! उनमे योग कितने पाये जाते है ? हे गौतम ! दो योग (काययोग, वचनयोग) पाये जाते है ।

१३ अहो भगवन् ! उनमे उपयोग कितने पाये जाते है ? हे गौतम ! उनमे दो उपयोग पाये जाते हैं– साकार-उपयोग, अनाकार-उपयोग ।

१४ अहो भगवन् ! क्या उनमे वर्णादि होते है ? हे गौतम ! जीव की अपेक्षा वर्णादि नहीं होते है, शरीर की अपेक्षा वर्णादि होते है एकेन्द्रिय के माफक ।

१५ अहो भगवन् ! क्या वे उच्छ्वासक-नि श्वासक हैं ? हे गौतम ! वे उच्छ्वासक भी हैं, नि श्वासक भी है, नो-उच्छ्वासक-नि श्वासक भी है ।

१६ अहो भगवन् ! क्या वे आहारक है ? हे गौतम ! आहारक भी है, अनाहारक भी है ।

१७ अहो भगवन् ! क्या वे विरति वाले है या अविरति वाले हैं ? हे गौतम ! वे विरतिवाले (सर्वविरति और देशविरति वाले) नहीं है, किन्तु सब अविरति वाले है। ।

१८ अहो भगवन् ! क्या वे सक्रिय हैं ? हा, गौतम ! वे सक्रिय हैं, अक्रिय नहीं है ।

१९ अहो भगवन् ! क्या वे बधक है ? हा गौतम ! वे बन्धक है । सात कर्म बाधने वाले बहुत हैं और आठ कर्म बाधने वाले भी बहुत हैं ।

२० अहो भगवन् ! उनमे कितनी सज्ञाए पाई जाती हैं ? हे गौतम ! उनमे चारो सज्ञाए पाई जाती है ।

२१ अहो भगवन् ! उनमे कितने कषाय पाये जाते हैं ? हे गौतम ! उनमे चारो कषाय पाये जाते हैं ।

२२ अहो भगवन् ! उनमे कितने वेद पाये जाते है ? हे गौतम ! उनमे सिर्फ एक नपुसकवेद पाया जाता है ।

२३ अहो भगवन् ! वे कितने वेद बाधते हैं ? हे गौतम ! वे तीनो वेद बाधते हैं ।

२४ अहो भगवन् ! क्या वे सज्ञी हैं या असज्ञी हैं ? हे गौतम ! वे सब असज्ञी हैं ।

२५ अहो भगवन् ! क्या वे सइन्द्रिय हैं ? हे गौतम ! वे सब सइन्द्रिय है, अनिन्द्रिय नहीं है ।

२६ अहो भगवन् ! वे कितने काल तक रहते हैं ? हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट सख्यात काल तक रहते हैं ।

२७ अहो भगवन् ! क्या उनमे कायसवेध होता है ? हे गौतम ! कायसवेध नहीं होता है ।

२८ अहो भगवन् ! वे कितनी दिशा का आहार लेते हैं ? हे गौतम ! वे नियमा छह दिशा का, २८८ बोलो का आहार लेते हैं ।

२९ अहो भगवन् ! उनकी स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट * १२ वर्ष की है ।

३० अहो भगवन् ! उनमे कितनी समुद्घात पाई जाती है ? हे गौतम ! पहले की तीन समुद्घात पाई जाती हैं ।

३१ अहो भगवन् ! वे समोहया मरण करते हैं या असमोहया मरण करते हैं ? हे गौतम ! वे समोहया, असमोहया दोनो मरण मरते हैं ।

३२ अहो भगवन् ! वे वहाँ से मर कर किस गति मे उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! मनुष्य और तिर्यंच इन दो गतियो मे उत्पन्न होते हैं (मनुष्य के ३ और तिर्यंच के ४६, इन ४९ ठिकाने उत्पन्न होते हैं) ।

---

* *यह स्थिति उनके कडजुम्मा-कडजुम्मा आदि महाजुम्मा रूप रहने की अपेक्षा से है ।*

३३ अहो भगवन् ! क्या सब प्राण, भूत, जीव, सत्त्व द्वीन्द्रिय कडजुम्मा-कडजुम्मा रूप से पहले उत्पन्न हो चुके हैं ? हा, गौतम ! अनेक बार अथवा अनत बार उत्पन्न हो चुके है ।

ये सब द्वार कडजुम्मा-कडजुम्मा राशि पर कहे गये हैं । इसी तरह शेष १५ जुम्मा पर भी कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि परिमाणद्वार अपने-अपने परिमाण के अनुसार कहना चाहिए ।

पहला औघिक उद्देशा पूर्ण हुआ ।

दूसरा उद्देशा पढम (प्रथम समय के उत्पन्न हुए) का है । वह भी इसी तरह कह देना चाहिए, किन्तु इसमे ११ बातो का (बोलो का) नाणत्ता (फर्क) है । दस तो एकेन्द्रिय के समान कह देना चाहिए । ग्यारहवा नाणत्ता वचनयोग नहीं होता है । १६ ही महाजुम्मा कह देना चाहिए ।

दूसरा उद्देशा सम्पूर्ण हुआ ।

इन ११ उद्देशो मे से पहला, तीसरा और पाचवा, ये तीन उद्देशे सरीखे है और बाकी ८ उद्देशे (दूसरा, चौथा, छठे से ग्यारहवे तक) सरीखे है । चौथा, छठा, आठवा, दसवा, इन चार उद्देशो मे ज्ञान नहीं, समदृष्टि नहीं होते है ।

छत्तीसवे शतक के पहले अन्तरशतक के ११ उद्देशे सम्पूर्ण हुए ।

इसी तरह दूसरा अन्तरशतक कृष्णलेशी का, तीसरा अन्तरशतक नीललेशी का और चौथा अन्तरशतक कापोतलेशी का कह देना चाहिए, किन्तु लेश्याद्वार मे लेश्या अपनी-अपनी कहनी चाहिए । अनुबन्ध और स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की कहनी चाहिए ।

ये चार अन्तरशतक पूर्ण हुए ।

इसी तरह भवी के चार अन्तरशतक और अभवी के चार अन्तरशतक कह देने चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि भवी के चार अन्तरशतको मे सब जीव पहले भवी रूप से द्वीन्द्रियपणे उत्पन्न नहीं हुए, ऐसा कहना और अभवी के चार अन्तरशतको मे ज्ञान नहीं, समदृष्टि नहीं, सब जीव पहले अभवी रूप से उत्पन्न हुए नहीं, इस तरह कहना चाहिए ।

छत्तीसवे शतक के १२ अन्तरशतको के
१३२ उद्देशे पूर्ण हुए ।

१५ त्रीन्द्रिय महाजुम्मा का थोकडा

(भगवतीसूत्र, शतक ३७ वे के १२ अतरशतको के उद्देशे १३२)

१ जिस प्रकार ३६ वे शतक के १२ अन्तरशतको के १३२ उद्देशो मे 'द्वीन्द्रिय महाजुम्मा' का अधिकार कहा गया है, उसी तरह यहाँ 'त्रीन्द्रिय महाजुम्मा' का अधिकार कह देना चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि इन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग और उत्कृष्ट तीन गाऊ की होती है । स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ४९ अहोरात्रि की होती है । बाकी सारा अधिकार 'द्वीन्द्रिय महाजुम्मा' के समान कह देना चाहिए ।

१६ चतुरिन्द्रिय महाजुम्मा का थोकडा

(भगवतीसूत्र, शतक ३८ वे के १२ अतरशतको के उद्देशा १३२)

१ जिस तरह ३६ वे शतक के १२ अन्तरशतको के १३२ उद्देशो मे द्वीन्द्रिय महाजुम्मा का अधिकार कहा गया है, उसी तरह यहाँ 'चतुरिन्द्रिय महाजुम्मा' का अधिकार कह देना चाहिए , किन्तु इतनी विशेषता है कि चतुरिन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अगुल के

असख्यातवे भाग और उत्कृष्ट चार गाऊ की होती है । स्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट छह महीने की होती है । बाकी सारा अधिकार 'द्वीन्द्रिय महाजुम्मा' के समान कह देना चाहिए ।

१७. असंज्ञी पंचेन्द्रिय महाजुम्मा का थोकडा

(भगवतीसूत्र, शतक ३९ वे के १२ अतरशतकों के उद्देशा १३२)

१ जिस प्रकार ३६ वे शतक १२ अन्तरशतको के १३२ उद्देशाो मे 'द्वीन्द्रिय महाजुम्मा ' का अधिकार कहा गया है, उसी तरह यहाँ 'असज्ञी पचेन्द्रिय महाजुम्मा' का अधिकार कह देना चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि असज्ञी पचेन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग की और उत्कृष्ट १००० योजन की होती है। स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट करोडपूर्व की होती है। अनुबन्ध जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट प्रत्येक करोड पूर्व का होता है ।

अहो भगवन् ! असज्ञी पचेन्द्रिय मर कर कहाँ जाता है ? हे गौतम ! चारो गति मे जाता है, स्थान की अपेक्षा ८७ स्थान मे जाता है (४६ तिर्यंच, ३ मनुष्य ये ४९ और १० भवनपति, ८ वाणव्यन्तर और पहली नारकी, इन १९ के पर्याप्त अपर्याप्त, ये ३८, कुल मिला कर ८७ हुए)। बाकी सारा अधिकार द्वीन्द्रिय महाजुम्मा की तरह कह देना चाहिए।

३६ वे शतक के १२ अन्तरशतको के १३२ उद्देशे पूर्ण हुए।

१८ सन्नी पचेन्द्रिय महाजुम्मा का थोकडा
(भगवतीसूत्र, शतक ४० वे के २१ अतरशतको के उद्देशा २३१)

इसके ३३ द्वार हैं– १ उपपातद्वार, २ परिमाणद्वार, ३ अपहारद्वार, ४अवगाहनाद्वार, ५ बन्धद्वार, ६ वेदकद्वार, ७ उदयद्वार, ८ उदीरणाद्वार, ९ लेश्याद्वार, १० दृष्टिद्वार, ११ ज्ञानद्वार, १२ योगद्वार, १३ उपयोगद्वार, १४ वर्णद्वार, १५ उच्छ्वासद्वार, १६ आहारद्वार, १७ विरतिद्वार, १८ क्रियाद्वार, १९ बन्धकद्वार २० सज्ञाद्वार, २१ कषायद्वार, २२ वेदद्वार, २३ वेदबन्धद्वार, २४ सन्नीद्वार, २५ इन्द्रियद्वार, २६ अनुबन्धद्वार, २७ कायसवेधद्वार, २८ आहारद्वार, २९ स्थितिद्वार, ३० समुद्घातद्वार, ३१ समोहया असमोहयाद्वार, ३२ च्यवनद्वार, ३३ उपपातद्वार।

१ अहो भगवन् ! कडजुम्मा-कडजुम्मा सन्नी पचेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उपजते हैं ? हे गौतम ! चारो ही गति से सब स्थान से आकर उपजते है।

२ अहो भगवन् ! कडजुम्मा-कडजुम्मा सन्नी पचेन्द्रिय जीव एक समय मे कितने उपजते हैं ? हे गौतम ! १६, ३२,४८ यावत् सख्याता असख्याता उपजते है।

३ अहो भगवन् ! कडजुम्मा-कडजुम्मा सन्नी पचेन्द्रिय जीव एक एक समय मे असख्याता असख्याता अपहरे (निकाले) तो कितने समय मे निर्लेप होते हैं ? हे गौतम ! असख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी पूर्ण होवे तो भी निर्लेप नहीं होते हैं।

४ अहो भगवन् ! उनकी अवगाहना कितनी होती है ? हे गौतम ! जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट १००० योजन की होती है।

५ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मो के बन्धक हैं ? हे गौतम ! वे सात कर्मों के बन्धक भी बहुत है और अबन्धक भी बहुत है।

+ वेदनीयकर्म के बन्धक ही होते है, अबन्धक नहीं।

६ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मों के वेदक हैं ? हे गौतम ! * मोहनीयकर्म के वेदक भी बहुत है और अवेदक भी बहुत है। बाकी सात कर्मो के वेदक है और अवेदक नहीं हैं। सातावेदनीय के वेदक भी बहुत है और असातावेदनीय के वेदक भी बहुत है।

७ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मों के उदय वाले है ? हे गौतम ! वे सात कर्मों के उदय वाले बहुत है। — मोहनीय कर्म के उदय वाले भी बहुत है और अनुदयवाले भी बहुत है।

८ अहो भगवन् ! वे कितने कर्मो के उदीरक (उदीरणा

+ यहा वेदनीयकर्म का बध विशेषत कहते है— उपशात-मोहादि जीव वेदनीय के सिवाय सात कर्मों के अबधक है । बाकी यथा-सभव बधक है ।

बारहवे गुणस्थान तक सभी जीव सज्ञी पचेन्द्रिय कहलाते है और वहाँ तक अवश्य ही वेदनीयकर्म के बधक ही होते है, अबधक नहीं होते है ।

** सूक्ष्मसम्परायगुणस्थान तक सज्ञी पचेन्द्रिय जीव मोहनीयकर्म के वेदक होते है और उपशान्तमोहादि अवेदक होते है । जो उपशान्तमोहादि सज्ञी पचेन्द्रिय होते है वे मोहनीयकर्म के सिवाय सात कर्मों के वेदक होते है, परन्तु अवेदक नहीं होते है । केवलज्ञानी चार अघाती कर्मों के वेदक है, वे इन्द्रियो के द्वारा उपयोग नहीं लगाते है, इसलिए उन्हे पचेन्द्रिय नहीं कह कर अनिन्द्रिय कहा है ।*

— दसवे सूक्ष्मसम्परायगुणस्थान तक मोहनीयकर्म के उदय वाले होते है। उपशान्तमोहादि गुणस्थान वाले अनुदय वाले होते है । वेदकपने मे और उदय मे इतना फर्क है कि अनुक्रम और उदीरणाकरण से उदय मे आये हुए (फलोन्मुख- फल देने के लिए सामने आये हुए) कर्म का अनुभव करना वेदकपना है और अनुक्रम से उदय मे आये हुए कर्म का अनुभव करना ' उदय' कहलाता है ।

करने वाले) हैं ? हे गौतम ! + नामकर्म और गोत्रकर्म के उदीरक है । बाकी छह कर्मों के उदीरक भी हैं और अनुदीरक भी है ।

९ अहो भगवन् ! उनमे कितनी लेश्या पाई जाती हैं ? हे गौतम ! छह लेश्या पाई जाती हैं।

१० अहो भगवन् ! उनमे दृष्टि कितनी पाई जाती हैं ? हे गौतम ! तीन दृष्टि पाई जाती हैं।

११ अहो भगवन् ! वे ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ? हे गौतम ! वे ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी है (उनमे चार ज्ञान, तीन अज्ञान पाये जाते है) ।

+ सभी सज्ञी पचेन्द्रिय जीव क्षीणमोहनीयगुणस्थान तक नामकर्म और गोत्रकर्म के उदीरक है । बाकी छह कर्मों के यथासम्भव उदीरक भी है और अनुदीरक भी हैं । उदीरणा का क्रम इस प्रकार है– प्रमत्तसयतगुणस्थान तक सामान्य रूप से आठो कर्मों की उदीरणा होती है । जब आयुष्य कर्म आवलिका मात्र बाकी रह जाता है तब सात कर्मों की उदीरणा होती है । इतनी विशेषता है कि तीसरे गुणस्थान मे आठो ही कर्मों की उदीरणा होती है, क्योकि तीसरे गुणस्थान मे काल नहीं करता । अप्रमत्त आदि चार गुणस्थानो मे वेदनीय और आयुष्य के सिवाय छह कर्मों की उदीरणा होती है । जब सूक्ष्मसम्पराय आवलिका मात्र बाकी रहती है तब मोहनीय, वेदनीय और आयुष्य के सिवाय पाच कर्मों की उदीरणा होती है । उपशान्तमोहगुणस्थान मे पाच कर्मों की उदीरणा होती है । क्षीणमोहगुणस्थान का समय जब आवलिका मात्र बाकी रहता है तब नामकर्म और गोत्रकर्म की उदीरणा होती है । सयोगीकेवली गुणस्थान मे भी इन्हीं दो कर्मों की उदीरणा होती है । अयोगीकेवलीगुणस्थान मे उदीरणा नहीं होती है ।

१२ अहो भगवन् ! उनमे योग कितने पाये जाते है ? हे गौतम ! तीन योग पाये जाते है।

१३ अहो भगवन् ! उनमे उपयोग कितने पाये जाते है ? हे गौतम ! दो उपयोग पाये जाते हैं—साकार-उपयोग, अनाकार-उपयोग ।

१४ अहो भगवन् ! क्या उनमें वर्णादि होते हैं ? हे गौतम ! जीव की अपेक्षा वर्णादि नहीं होते है, शरीर की अपेक्षा वर्णादि होते है । औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस इन चार शरीर की अपेक्षा वर्णादि २० बोल पाये जाते है और कार्मण शरीर की अपेक्षा वर्णादि १६ बोल पाये जाते है ।

१५ अहो भगवन् ! क्या वे उच्छवासक-नि श्वासक है ? हे गौतम ! वे उच्छ्वासक भी है, नि श्वासक भी है, नो-उच्छ्वासक-नि श्वासक भी है ।

१६ अहो भगवन् ! क्या वे आहारक है ? हे गौतम ! वे आहारक भी है, अनाहारक भी है।

१७ अहो भगवन् ! क्या वे विरति वाले है ? हे गौतम ! वे विरति (सर्वविरति) वाले भी हैं, अविरति भी है और विरताविरति वाले भी हैं।

१८ अहो भगवन् ! क्या वे सक्रिय (क्रिया वाले) हैं ? हाँ गौतम ! वे सक्रिय है, अक्रिय नही है।

१९ अहो भगवन् ! क्या वे बन्धक है ? हे गौतम ! वे सात कर्मों के बन्धक है, आठ कर्मों के बन्धक है, छह कर्मों के बन्धक है, एक कर्म के बन्धक भी है । अबन्धक नहीं है ।

२० अहो भगवन् ! वे कितनी सज्ञा वाले है ? हे गौतम ! वे चारो सज्ञा वाले भी है, नोसज्ञा वाले भी है।

२१ अहो भगवन् ! उनमे कितनी कषाय होती है ? हे गौतम ! वे चारो कषाय वाले होते हैं, अकषायी भी होते हैं ।

२२ अहो भगवन् ! वे कितने वेद वाले होते हैं ? हे गौतम !

वे तीनो वेद वाले होते हैं और अवेदी भी होते हैं ।

२३ अहो भगवन् ! वे कितने वेद बाधते हैं ? हे गौतम ! वे तीनो वेद बाधते भी हैं और नहीं भी बाधते हैं।

२४ अहो भगवन् ! क्या वे सज्ञी हैं या असज्ञी हैं ? हे गौतम ! वे सज्ञी हैं, असज्ञी नहीं है ।

२५ अहो भगवन् ! क्या वे सइन्द्रिय हैं या अनिन्द्रिय है ? हे गौतम ! वे सइन्द्रिय है, अनिन्द्रिय नहीं है ।

२६ अहो भगवन् ! वे कितने काल तक रहते हैं ? अर्थात् उनका अनुबध क्या है ? हे गौतम ! वे जघन्य एक समय, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ सागर झाझेरा (अधिक) काल तक रहते हैं।

२७ अहो भगवन् ! क्या उनमे कायसवेध होता है ? हे गौतम ! उनमें कायसवेध नहीं होता है ।

२८ अहो भगवन् ! वे कितनी दिशा का आहार लेते है ? हे गौतम ! वे नियमा छह दिशा का, २८८ बोलों का आहार लेते हैं।

२९ अहो भगवन् ! उनकी स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की है।

३० अहो भगवन् ! उनमे कितने समुद्घात पाए जाते है ? हे गौतम ! उनमे छह समुद्घात (केवलीसमुद्घात को छोडकर) पाए जाते हैं ।

३१ अहो भगवन् ! क्या वे समोहयामरण मरते है या असमोहयामरण मरते हैं ? हे गौतम ! वे समोहया और असमोहया दोनो मरण मरते है ।

३२ अहो भगवन् ! वे वहाँ से मरकर किस गति मे उत्पन्न होते है ? हे गौतम ! वे चारो गतियो मे (सब ठिकाणो मे +) जाते है ।

+ सात नारकी के पर्याप्ता और अपर्याप्ता ये १४ नारकी, ४६ तिर्यच, ३ मनुष्य और ९८ देवता (१० भवनपति, ८ वाणव्यन्तर,

३३ अहो भगवन् ! क्या सब प्राण भूत, जीव, सत्व कडजुम्मा-कडजुम्मा रूप से पहले उत्पन्न हो चुके हैं ? हॉ, गौतम ! अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हो चुके है।

ये सब द्वार कडजुम्मा-कडजुम्मा राशि पर कहे गये हैं। इसी तरह शेष १५ महाजुम्मा पर कह देना चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि परिमाणद्वार मे अपने-अपने परिमाण के अनुसार कहना चाहिए।

पहला औघिक उद्देशा सम्पूर्ण हुआ।

दूसरा उद्देशा पढम (प्रथम समय के उत्पन्न हुए) सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय का है। उसके भी ३३ द्वारो का कथन पहले औघिक उद्देशे के समान कह देना चाहिए, किन्तु इसमे १९ बातो का नाणत्ता (फर्क) है–

१ इनकी अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग होती है।

२ सात कर्मो का बन्ध होता है।

३ आठ कर्मो को वेदते है। सातावेदने वाले भी बहुत और असातावेदने वाले भी बहुत है।

४ आठ कर्मो का उदय होता है।

५ उदीरणा–आयुष्यकर्म के अनुदीरक है । वेदनीयकर्म के उदीरक भी है और अनुदीरक भी है। शेष छह कर्मो के उदीरक है।

६ दृष्टि–दृष्टि दो पाई जाती है-समदृष्टि या मिथ्यादृष्टि।

७ योग–एक काययोग पाया जाता है।

८ श्वासोच्छ्वास–नोउच्छ्वासक-नोनि श्वासक होते है

---

५ ज्योतिषी, १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान, कुल ४९ के पर्याप्ता और अपर्याप्ता) कुल १६१ ठिकाणो मे जाते हैं ।

(उच्छ्वासक और नि श्वासक नहीं होते है)।
९ विरति-अविरति वाले होते हैं। विरति और विरताविरति वाले नहीं होते हैं।
१० बन्धक-सात कर्मों के बन्धक होते हैं, आयुष्यकर्म के अबन्धक होते हैं।
११ सज्ञा-चार सज्ञा वाले होते हैं, नोसज्ञा वाले नहीं होते हैं।
१२ कषाय-चार कषाय वाले होते हैं, अकषायी नहीं होते हैं ।
१३ वेद-तीनो वेद वाले होते है, अवेदी नहीं होते है।
१४ वेदबन्ध-तीनों वेद के बन्धक होते हैं, अबन्धक नहीं होते है।
१५ अनुबन्ध-जघन्य और उत्कृष्ट एक समय का अनुबन्ध होता है।
१६ स्थिति-स्थिति एक समय की होती है।
१७ समुद्घात-वेदनीयसमुद्घात और कषायसमुद्घात, ये दो समुद्घात पाये जाते हैं।
१८ मरण-वे समोहया और असमोहया दोनो मरण नहीं मरते हैं।
१९ च्यवन-उनका च्यवन (मरण) नहीं होता है।

बाकी सारा अधिकार पहले उद्देशे के समान जान लेना चाहिए।

पहला, तीसरा, और पाचवा ये तीन उद्देशे एक समान है। बाकी आठ उद्देशे (दूसरा, चौथा, छठा, सातवा, आठवा, नवमा दसवा, ग्यारहवा) एक समान हैं। चौथा, छठा, आठवा, दसमा, इन चार उद्देशो मे ज्ञान नहीं, समदृष्टि नहीं होते है।

जिस तरह कडजुम्मा-कडजुम्मा राशि का कहा गया है,

उसी तरह बाकी १५ महाजुम्मा भी कह देना चाहिए, किन्तु परिमाणद्वार मे अपना-अपना परिमाण कहना चाहिए।

चालीसवे शतक के प्रथम अन्तरशतक के ११ उद्देशे पूर्ण हुए।

कृष्णलेशी कडजुम्मा-कडजुम्मा पर ३३ द्वार कह देने चाहिए, किन्तु इसमे १२ बातो का नाणत्ता (फर्क) है–१ बन्ध, २ वेदक, ३ उदय, ४ उदीरणा, ५ लेश्या, ६ बन्धक, ७ सज्ञा, ८ कषाय, ९ वेदबन्धक। इन नौ द्वारो का नाणत्ता द्वीन्द्रिय के समान कह देना चाहिए।

१० वेदद्वार–तीनो वेद पाये जाते है, अवेदी नहीं होते हैं।

११ अनुबन्ध–जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक का होता है।

१२ स्थिति–जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ३३ सागर की होती है।

बाकी २१ द्वार सज्ञी पचेन्द्रिय औधिक उद्देशा माफक कह देना चाहिए।

जिस तरह कडजुम्मा-कडजुम्मा कहा गया है, उसी तरह बाकी १५ महाजुम्मा भी कह देना चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि परिमाणद्वार मे अपने अपने परिमाण के अनुसार कहना चाहिए।

यह पहला कृष्णलेशी औधिक उद्देशा सपूर्ण हुआ।

पढम कृष्णलेशी कडजुम्मा-कडजुम्मा सज्ञी पचेन्द्रिय का उद्देशा कृष्णलेशी औधिक उद्देशे की तरह कह देना चाहिए, किन्तु इसमे १३ बातो का नाणत्ता है–

(१) अवगाहना–अवगाहना अगुल के असख्यातवे भाग होती है।
(२) बन्ध–सात कर्मो का बन्ध होता है।
(३) उदीरणा–वे छह कर्मों के उदीरक होते हैं, वेदनीयकर्म के उदीरक भी होते है, और अनुदीरक भी होते है।

आयुष्यकर्म के अनुदीरक होते हैं।

(४) दृष्टि–दृष्टि दो पाई जाती हैं–समदृष्टि और मिथ्यादृष्टि ।

(५) योग–एक काययोग होता है।

(६) वे नोउच्छ्वासक-नि श्वासक होते हैं, उच्छ्वासक नहीं होते, नि श्वासक भी नहीं होते है।

(७) वे अविरति वाले होते हैं, विरति और विरताविरति वाले नहीं होते हैं।

(८) बन्धक–वे सात कर्मो के बन्धक होते हैं, आयुष्यकर्म के अबन्धक होते है।

(९) अनुबन्ध–अनुबन्ध एक समय का होता है।

(१०) स्थिति–स्थिति एक समय की होती है।

(११) समुद्घात–वेदनीयसमुद्घात और कषायसमुद्घात ये दो समुद्घात पाए जाते हैं।

(१२) वे समोहया और असमोहया दोनो मरण नहीं मरते हैं।

(१३) च्यवन–च्यवन नहीं होता है।

इसी तरह बाकी १५ महाजुम्मा कह देना चाहिए, किन्तु परिमाणद्वार मे अपना-अपना परिमाण कहना चाहिए।

पहला,तीसरा, और पाचवा उद्देशा ये तीन उद्देशा एक समान है। बाकी आठ उद्देशा (दूसरा, चौथा, छठा, सातवा, आठवा, नवमा, दसवा, ग्यारहवा) एक समान हैं।

चालीसवे शतक के दूसरे अन्तरशतक के ११ उद्देशे पूर्ण हुए।

जिस तरह कृष्णलेशी का कहा, उसी तरह नीललेशी का तीसरा अन्तरशतक कह देना चाहिए, किन्तु इसमे नीललेश्या कहनी चाहिए। अनुबन्ध जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट दस सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक का होता है। इसी तरह 'स्थिति' भी कह देनी चाहिए।

चालीसवे शतक के तीसरे अन्तरशतक के ग्यारह उद्देशे पूर्ण हुए।

जिस तरह कृष्णलेशी का कहा, उसी तरह कापोतलेशी का चौथा अन्तरशतक कह देना चाहिए, किन्तु इसमे कापोतलेश्या कहनी चाहिए। अनुबध–जघन्य का समय का, उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक का होता है। इसी तरह 'स्थिति' भी कह देनी चाहिए।

चालीसवे शतक के चौथे अन्तरशतक के ग्यारह उद्देशे पूर्ण हुए।

जिस तरह कृष्णलेश्या का कहा उसी तरह तेजोलेश्या का पाचवा अन्तरशतक कह देना चाहिए, किन्तु इसमे तेजोलेश्या कहनी चाहिए । अनुबध–जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक का होता है । इसी तरह 'स्थिति' भी कह देनी चाहिए । पहले, तीसरे और पाचवे उद्देशे मे 'नोसज्ञा' भी कहनी चाहिए, क्योकि तेजोलेश्या सातवे गुणस्थान मे भी होती है, वहाँ पर 'सज्ञा' नहीं होती है । शेष पूर्ववत् कह देना चाहिए ।

चालीसवे शतक के पाचवे अतरशतक के ग्यारह उद्देशे पूर्ण हुए।

जिस तरह तेजोलेश्या का कहा उसी तरह छठा अन्तरशतक पद्मलेश्या का कह देना चाहिए, किन्तु इसमे पद्मलेश्या कहनी चाहिए । अनुबध–जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक का होता है । स्थिति जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम की होती है ।

चालीसवे शतक के छठे अन्तरशतक के ग्यारह उद्देशे पूर्ण हुए ।

जिस तरह सज्ञी पचेन्द्रिय का औघिक शतक कहा गया है, उसी तरह शुक्ललेश्या का सातवा अन्तरशतक कह देना चाहिए । किन्तु इसमे शुक्ललेश्या कहनी चाहिए । अनुबन्ध–जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अतर्मुहूर्त अधिक का होता है । स्थिति जघन्य एक समय, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की होती है ।

चालीसवे शतक के सातवे अतरशतक के ११ उद्देशे पूर्ण हुए ।

जिस तरह औघिक और छह लेश्या, ये सात अन्तरशतक कहे गये हैं, उसी तरह से सात अन्तरशतक भवी जीवो की अपेक्षा कह देना चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि सब प्राण, भूत, जीव, सत्त्व भवीपने उत्पन्न नहीं हुए है । ४०-१४-११ (शतक ४० वा अन्तरशतक ८ से १४ तक, उद्देशा ११-११)

जिस तरह भवी जीव की अपेक्षा सात अन्तरशतक कहे गये हैं, उसी तरह अभवी जीव के भी सात अन्तरशतक कह देने चाहिए । किन्तु इनमे इतनी बातो का नाणत्ता है-

(१) उपपातद्वार–पाच अनुत्तर विमान टल गये अर्थात् पाच अनुत्तर विमानो मे अभवी जीव उत्पन्न नहीं होते हैं ।
(२) दृष्टि–उनमे एक मिथ्यादृष्टि पाई जाती है ।
(३) ज्ञानद्वार– उनमे ज्ञान नहीं पाया जाता है, किन्तु अज्ञान पाया जाता है ।
(४) विरति–उनमे विरति नहीं होते है। सब अविरति होते है ।
(५) अनुबन्ध–जघन्य 'एक समय' उत्कृष्ट प्रत्येक सौ सागर झाझेरा होता है ।
(६) स्थिति– जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम ही होती है (नरक की अपेक्षा) ।
(७) समुद्घात–पहले के पाच समुद्घात पाये जाते हैं ।
(८) लेश्या–छहो लेश्याए पाई जाती हैं ।

नोट– उत्पातद्वार और च्यवनद्वार मे सब स्थानो के जीवो का उपपात और च्यवन कहा है । वह अपनी-अपनी लेश्या के स्थान वाले नारकी और देवता का समझना चाहिए । तात्पर्य यह है कि नारकी, देवता मे सब जगह अपनी-अपनी लेश्या ही समझनी चाहिए ।

(९) च्यवन–पाच अनुत्तर विमान वर्जकर च्यवन होता है ।

सब प्राण, भूत, जीव, सत्त्व अभवीपने उत्पन्न नहीं हुए है ।

पहला, तीसरा, पाचवा, ये तीन उद्देशा एक समान है, बाकी आठ उद्देशा एक समान हैं ।। ४०-१५-११ ।।

अभवी कृष्णीलेशी अन्तरशतक मे ये तीन नाणत्ता है–

(१) लेश्या– एक कृष्णलेश्या पाई जाती है ।

(२) अनुबन्ध–जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक का होता है ।

(३) स्थिति–जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ३३ सागर की होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औघिक अतरशतक के समान कह देना चाहिए ।। ४०-१६-११ ।।

अभवी नीललेशी अन्तरशतक मे तीन नाणत्ता है–

(१) लेश्या–एक नीललेश्या होती है ।

(२) अनुबध–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होता है ।

(३) स्थिति–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औघिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ।।४०-१७-११ ।।

अभवी कापोतलेशी अन्तरशतक मे तीन नाणत्ता है–

(१) लेश्या–एक कापोतलेश्या होती है ।

(२) अनुबध–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होता है ।

(३) स्थिति–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औधिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ।। ४०-१८-११ ।।

अभवी तेजोलेशी अन्तरशतक मे तीन नाणत्ता हैं–

(१) लेश्या–एक तेजोलेश्या होती है ।

(२) अनुबन्ध–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होता है ।

(३) स्थिति–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औधिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ।। ४०-१९-११ ।।

अभवी पद्मलेशी अन्तरशतक मे तीन नाणत्ता है–

(१) लेश्या–एक पद्मलेश्या होती है ।

(२) अनुबन्ध–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक होता है ।

(३) स्थिति–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम की होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औधिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ।।४०-२०-११ ।।

अभवी शुक्ललेशी अन्तरशतक मे तीन नाणत्ता हैं–

(१) लेश्या–एक शुक्ललेश्या होती है ।

(२) अनुबध–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट ३१ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक होता है ।

(३) स्थिति–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट ३१ सागरोपम की होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औधिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ।।४०-२१-११।।

चालीसवे शतक के २१ अतरशतको के २३१ उद्देशा पूर्ण हुए (महाजुम्मा सम्पूर्ण)

(९) च्यवन–पाच अनुत्तर विमान वर्जकर च्यवन होता है ।

सब प्राण, भूत, जीव, सत्त्व अभवीपने उत्पन्न नहीं हुए है ।

पहला, तीसरा, पाचवा, ये तीन उद्देशा एक समान हैं, बाकी आठ उद्देशा एक समान है ।। ४०-१५-११ ।।

अभवी कृष्णीलेशी अन्तरशतक मे ये तीन नाणत्ता है–

(१) लेश्या– एक कृष्णलेश्या पाई जाती है ।

(२) अनुबन्ध–जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक का होता है ।

(३) स्थिति–जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ३३ सागर की होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औघिक अतरशतक के समान कह देना चाहिए ।। ४०-१६-११ ।।

अभवी नीललेशी अन्तरशतक मे तीन नाणत्ता है–

(१) लेश्या–एक नीललेश्या होती है ।

(२) अनुबध–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होता है ।

(३) स्थिति–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औघिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ।।४०-१७-११ ।।

अभवी कापोतलेशी अन्तरशतक मे तीन नाणत्ता है–

(१) लेश्या–एक कापोतलेश्या होती है ।

(२) अनुबध–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होता है ।

(३) स्थिति–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औघिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ।। ४०-१८-११ ।।

अभवी तेजोलेशी अन्तरशतक मे तीन नाणत्ता है-

(१) लेश्या-एक तेजोलेश्या होती है ।

(२) अनुबन्ध-जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होता है ।

(३) स्थिति-जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असख्यातवे भाग अधिक होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औघिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ।। ४०-१९-११ ।।

अभवी पद्मलेशी अन्तरशतक मे तीन नाणत्ता हैं-

(१) लेश्या-एक पद्मलेश्या होती है ।

(२) अनुबन्ध-जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक होता है ।

(३) स्थिति-जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दस सागरोपम की होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औघिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ।।४०-२०-११ ।।

अभवी शुक्ललेशी अन्तरशतक मे तीन नाणत्ता हैं-

(१) लेश्या-एक शुक्ललेश्या होती है ।

(२) अनुबध-जघन्य एक समय, उत्कृष्ट ३१ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक होता है ।

(३) स्थिति-जघन्य एक समय, उत्कृष्ट ३१ सागरोपम की होती है ।

बाकी सारा अधिकार अभवी के औघिक अन्तरशतक के समान कह देना चाहिए ।।४०-२१-११।।

चालीसवे शतक के २१ अतरशतको के २३१ उद्देशा पूर्ण हुए (महाजुम्मा सम्पूर्ण)

१९. राशिजुम्मा का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक ४१ वे के उद्देशा १९६)

अहो भगवन् ! राशिजुम्मा कितने कहे गये हैं ? हे गौतम ! चार कहे गये हैं– १ कडजुम्मा (कृतयुग्म), २ तेओगा (त्र्योज), ३ दावरजुम्मा (द्वापरयुग्म), ४ कलियोगा (कल्योज) ।

१-उपपातद्वार-अहो भगवन् ! राशिकडजुम्मा नैरयिक कहा से आकर उपजते है ? हे गौतम ! ग्यारह स्थानो से आकर उपजते है– पाच सज्ञी तिर्यंच, पाच असज्ञी तिर्यंच, सख्यात वर्ष की आयुष्य वाला कर्मभूमिज मनुष्य, इन ग्यारह स्थानो से आकर उपजते है ।

२-परिमाणद्वार–अहो भगवन् ! राशिकडजुम्मा एक समय मे कितने उपजते हैं ? हे गौतम ! ४, ८, १२, १६ यावत् सख्याता असख्याता उपजते है ।

३-सयतर-निरतरद्वार– अहो भगवन् ! ये सयतर और निरतर कितने उपजते है ? हे गौतम ! यदि सयतर (सान्तर) उपजे तो जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असख्यात समय के अन्तर से उपजते है । यदि निरतर अपजे तो जघन्य दो समय, उत्कृष्ट असख्यात समय तक उपजते है ।

४-अहो भगवन् ! जिस समय वे जीव कडजुम्माराशि रूप होते है क्या उस समय तेओगाराशि रूप होते हैं ? हे गौतम ! जिस समय वे जीव कडजुम्माराशि रूप होते है, उस समय वे तेओगाराशि रूप नहीं होते है और जिस समय तेओगाराशि रूप होते है, उस समय कडजुम्माराशि रूप नहीं होते है । उसी तरह दावरजुम्माराशि और कलियोगाराशि के साथ भी कह देना चाहिए ।

५-अहो भगवन् ! नरक मे नैरयिक किस तरह उपजता है ? हे गौतम ! जैसे कोई कूदने वाला पुरुष कूदता हुआ

अध्यवसाय (इच्छाजन्य) और करण (क्रिया के साधन) द्वारा पूर्व स्थान को छोड कर अगले स्थान को अगीकार करता है, उसी तरह नैरयिक नरक मे उपजता है ।

६-अहो भगवन् ! नरक मे नैरयिक उत्पन्न होता है, सो क्या अपनी आत्मा के सयम से उत्पन्न होता है या असयम से उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! असयम से उत्पन्न होता है, सयम से नहीं ।

७-अहो भगवन् ! क्या नरक मे नैरयिक अपनी आत्मा के असयम से जीता है या सयम से ? हे गौतम ! असयम से जीता है, सयम से नहीं ।

८-अहो भगवन् ! क्या नरक मे नैरयिक सलेशी (लेश्या वाला) है या अलेशी (लेश्यारहित) है ? हे गौतम ! सलेशी है, अलेशी नहीं है ।

९-अहो भगवन् ! क्या नरक मे नैरयिक सक्रिय (क्रिया वाला) है या अक्रिय (क्रिया-रहित) है ? हे गौतम ! सक्रिय है, अक्रिय नहीं है ।

१०-अहो भगवन् ! क्या नैरयिक उसी भव मे मोक्ष जाता है ? हे गौतम ! नैरयिक उसी भव मे मोक्ष नहीं जाता है ।

इसी तरह २४ दण्डक मे प्रश्नोत्तर करने चाहिए । इसमे जो नाणत्ता (फर्क) है सो बतलाया जाता है–

१-वनस्पति मे उपपात अनन्ता कहना चाहिए, विग्रहगति चार समय तक ही होती है ।

२-आगति–श्री पन्नवणा सूत्र के * छठे वक्कति पद के अनुसार आगति कह देनी चाहिए ।

३-मनुष्यगति में जीव अपनी आत्मा के असयम से उत्पन्न

** श्री पन्नवणासूत्र के थोकडो के पहले भाग मे देखिये ।*

होते है , किन्तु जीते है सो आत्मा के सयम से भी जीते है और असयम से भी जीते है । जो आत्मा के सयम से जीते है वे सलेशी और अलेशी दोनो प्रकार के होते है । जो अलेशी होते है वे नियमा (निश्चित रूप से) अक्रिय होते है । जो अक्रिय होते है वे नियमा उसी भव मे मोक्ष जाते है । जो सलेशी होते है वे नियमा सक्रिय होते है । जो सक्रिय होते है उनमे से कितनेक तो उसी भव मे मोक्ष चले जाते है और कितनेक उसी भव मे मोक्ष नहीं जाते है । जो अपनी आत्मा के असयम मे जीते है वे नियमा सलेशी और सक्रिय होते है । वे उसी भव मे मोक्ष नहीं जाते है ।

इकतालीसवे शतक का पहला उद्देशा पूर्ण हुआ ।

जिस तरह कडजुम्माराशि का कहा गया है, उसी तरह तेओगाराशि का भी एक उद्देशा कह देना चाहिए, किन्तु परिमाणद्वार मे ३, ७, ११, १५ यावत् सख्याता असख्याता कहना चाहिए । इसी तरह दावरजुम्माराशि का भी एक उद्देशा कह देना चाहिए, किन्तु परिमाण मे २, ६, १०, १४ यावत् सख्याता असख्याता कहना चाहिए । इसी तरह कलियोगाराशि का एक उद्देशा कह देना चाहिए, किन्तु परिमाण मे १, ५, ९, १३, यावत् सख्याता असख्याता कहना चाहिए ।

ये औघिक चार उद्देशा पूर्ण हुए ।

जिस तरह चार उद्देशा औघिक के कहे गये है, उसी तरह कृष्णलेश्या के चार उद्देशा कह देना चाहिए, किन्तु यहा पर ज्योतिषी और वैमानिक को छोड कर २२ दण्डक ही कहने चाहिए । नारकी मे और देवता मे जितने स्थानो मे कृष्णलेश्या हो और जितनी आगति हो, वह यथासभव कह देनी चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य दण्डक मे सयम, अलेशी, अक्रिय और तद्भवमोक्ष, ये चार बोल नहीं कहने चाहिए क्योकि * कृष्णलेश्या

** यहॉ पर भावलेश्या की अपेक्षा से जानना चाहिए ।*

मे चार बोलो का अभाव होता है । शेष सारा अधिकार औधिक उद्देशे के समान कह देना चाहिए । ४१-८ उद्देशा पूर्ण हुए ।

इसी तरह चार उद्देशा नीललेश्या के कह देना चाहिए । इसमे अपना स्थान और आगति यथासभव कह देनी चाहिए । शेष सारा अधिकार कृष्णलेश्या के चार उद्देशो के अनुसार कह देना चाहिए । । ४१-१२ ।।

इसी तरह चार उद्देशा कापोतलेश्या के कह देना चाहिए । इसमे अपना स्थान और आगति यथासभव कह देनी चाहिए । शेष सारा अधिकार कृष्णलेश्या के चार उद्देशो के अनुसार कह देना चाहिए । । ४१-१६ ।।

इसी तरह तेजोलेश्या के भी चार उद्देशा कह देना चाहिए, किन्तु इनमे १८ दण्डक ही कहने चाहिए, क्योकि नारकी मे तेजोलेश्या नहीं होती है और देवताओ मे भी पहले दूसरे देवलोक तक ही होती है । इनमे आगति यथासभव कह देनी चाहिए ।। ४१-२०।।

इसी तरह पद्मलेश्या के भी चार उद्देशा कह देना चाहिए, किन्तु इनमे तीन दण्डक (तिर्यंचपचेन्द्रिय, मनुष्य और तीसरे से पाचवे देवलोक तक वैमानिक देव) ही कहने चाहिए ।।४१-२४ ।।

इसी तरह शुक्ललेश्या के भी चार उद्देशा कह देने चाहिए । परन्तु इनमे तीन ही दण्डक कहने चाहिए । जिस तरह समुच्चय मे सयम, सलेशी, अलेशी, सक्रिय, अक्रिय, तद्‌भव (उसी भवमे) इत्यादि विस्तार कहा गया है, वह सब यहाँ भी कह देना चाहिए ।। ४१-२८ ।।

इस तरह औधिक के ४ उद्देशे और छह लेश्या के २४ उद्देशे, ये सब मिला कर २८ उद्देशे हुए ।

२८ उद्देशे औधिक (समुच्चय) लेश्या सहित ।

२८ उद्देशा भवी जीवो के औधिक के समान ।

२८ उद्देशा अभवी जीवो के औघिक के समान है । किन्तु सब जगह 'असयम' कहना चाहिए ।
२८ उद्देशा समदृष्टि जीवो के औघिक के समान है ।
२८ उद्देशा मिथ्यादृष्टि जीवो के अभवी के समान है ।
२८ उद्देशा कृष्णपक्षी जीवो के अभवी के समान हैं ।
२८ उद्देशा शुक्लपक्षी जीवो के औघिक के समान हैं ।

१९६
इस तरह से ४१ वे शतक के १९६ उद्देशे हुए ।

अथवा इस तरह से भी गिना जा सकता है– १ जीव और ६ लेश्या, ये ७ हुए । ७ भवी के, ७ अभवी के, ७ समदृष्टि के, ७ मिथ्यादृष्टि के, ७ कृष्णपक्षी के, ७ शुक्लपक्षी के, ये सब ४९ हुए । इनको राशिकडजुम्मा आदि चार से गुणा करने से १९६ हुए ।

२०. गांगेय अणगार के भांगों का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक नौवा उद्देशा बत्तीसवा)

१– तेइसवे तीर्थंकर भगवान् पार्श्वनाथ स्वामी के शिष्य श्री गागेय अणगार ने श्रमण भगवान् श्री महावीर स्वामी से पूछा कि अहो भगवन् ! क्या नारकी के नैरयिक नारकी मे सान्तर * उपजते है या निरन्तर उपजते है ? हे गागेय ! नारकी के नैरयिक + सान्तर भी उपजते हैं और निरन्तर भी उपजते है ।

** जिन जीवो की उत्पत्ति मे समय आदि काल का अन्तर (व्यवधान) हो, उसे सान्तर कहते है और जिन जीवो की उत्पत्ति मे समय आदि काल का अन्तर (व्यवधान) न हो, उसे निरन्तर कहते हैं ।*

+ नरक मे उत्पन्न होने वाले जीव दूसरी गति से आते हुए रास्ते मे (वाटे बहते हुए) नरक का आयुष्य भोगते है, इसलिये उनको नारकी के नैरयिक कहा है ।

इसी तरह पाच स्थावर के सिवा शेष १८ दण्डक और कह देना ।

२-अहो भगवन् ! क्या पाच स्थावर के जीव सान्तर उपजते है या निरन्तर उपजते हे ? हे गागेय ! पाच स्थावर के जीव सान्तर नहीं उपजते, किन्तु निरन्तर उपजते है ।

३-अहो भगवन् ! क्या नारकी के नेरयिक सान्तर उवटते है (नारकी से निकल कर दूसरी गति मे जाते हैं) या निरन्तर उवटते हैं ? हे गागेय ! सान्तर भी उवटते है और निरन्तर भी उवटते है । इसी तरह पाच स्थावर के सिवा शेप १८ दण्डक और कह देना, किन्तु ज्योतिषी और वेमानिक देवो मे चवना कहना ।

४-अहो भगवन् ! क्या पाच स्थावर के जीव सान्तर उवटते हैं या निरन्तर उवटते है ? हे गागेय ! सान्तर नहीं उवटते किन्तु निरन्तर उवटते है ।

५-अहो भगवन् ! * प्रवेशनक (उत्पत्ति) के कितने भेद हैं ? हे गागेय ! प्रवेशनक चार प्रकार का कहा गया है- १ नैरयिकप्रवेशनक, २ तिर्यंचयोनिप्रवेशनक, ३ मनुष्यप्रवेशनक, ४ देवप्रवेशनक ।

६-अहो भगवन् ! नैरयिकप्रवेशनक के कितने भेद कहे गये हैं ? हे गागेय ! नैरयिकप्रवेशनक के ७ भेद कहे गये है- रत्नप्रभापृथ्वीप्रवेशनक यावत् तमतमापृथ्वीप्रवेशनक । इसी तरह तिर्यंचयोनिप्रवेशनक के ५ भेद है- एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पचेन्द्रिय । मनुष्यप्रवेशनक के २ भेद है- सम्मूर्च्छिम और गर्भज । देवप्रवेशनक के ४ भेद हैं- भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक ।

** एक गति से निकल कर दूसरी गति मे उत्पन्न होने को प्रवेशनक कहते हैं ।*

एकादि जीव जिस गति मे प्रवेश करते हैं उनके पदविकल्प—भांगा सक्षेप मे बतलाये जाते हैं—

जीव पद	स्थान के पद	१२ देवलोक सजोगी पद	नरक सजोगी पद	तिर्यंच सजोगी पद	मनुष्य सजोगी पद	देव सजोगी पद
१	१	१२	७	५	२	४
२	३	६६	२१	१०	१	६
३	७	२२०	३५	१०		४
४	१५	४९५	३५	५		१
५	३१	७९२	२१	१		
६	६३	९२४	७			
७	१२७	७९२	१			
८	२५५	४९५				
९	५११	२२०				
१०	१०२३	६६				
११	२०४७	१२				
१२	४०९५	१				

नरक मे १० जीव जावे उनके सजोगी विकल्प ४६६ होते हैं । विकल्प बनाने की रीति यह है— दस जीवो के विकल्प करने हो तो एक ऊपर लिखना और नीचे नौ का अक लिखना । इस तरह दो सजोगी नौ विकल्प हुए । नौ के अक को आठ से गुणा करके दो का भाग देना तो तीन सजोगी ३६ विकल्प हुए । ३६ को ७ से गुणा करके तीन का भाग देना तो चार सजोगी ८४ विकल्प हुए । चौरासी को छह से गुणा करके चार का भाग देना

तो पाच सजोगी १२६ विकल्प हुए । १२६ को पाच से गुणा करके पाच का भाग देना तो ६ सजोगी १२६ विकल्प हुए । १२६ को चार से गुणा करके छह का भाग देना तो सात सजोगी ८४ विकल्प हुए । फिर पद को विकल्प के साथ गुणा करने पर जो सख्या आवे उसको भागा समझ लेना । इस तरह सब जगह जान लेना चाहिए ।

स्थान के पद बनाने की रीति—सात नारकी के असजोगी ७ पद हुए । इन सात को छह से गुणा करके दो का भाग देना, तो दो सजोगी २१ पद हुए । इक्कीस को पाच से गुणा करके तीन का भाग देना तो तीन सजोगी ३५ पद हुए । पैतीस को चार से गुणा करके चार का भाग देना तो चार सजोगी ३५ पद हुए । पैंतीस को तीन से गुणा करके पाच का भाग देना तो पाच सजोगी २१ पद हुए । इक्कीस को दो से गुणा करके छह का भाग देना तो छह सजोगी ७ पद हुए । सात को एक से गुणा करके सात का भाग देना तो सात सजोगी एक पद हुआ ।

चार गति मे एकादि जीवो के भागों का यत्र

जीव	नरक के भागे	तिर्यंच के भागे	मनुष्य के भागे	देवता के भागे
१	७	५	२	४
२	२८	१५	३	१०
३	८४	३५	४	२०
४	२१०	७०	५	३५
५	४६२	१२६	६	५६
६	९२४	२१०	७	
७	१७१६		८	
८	३००३		९	
९	५००५		१०	
१०	८००८		११	
सख्याता	३३३७			
असखयाता	३६५८			
उत्कृष्ट	६४			

जैसे सात नारकी मे १ जीव जावे तो ७ भागा, २ जीव जावे तो २८ भागा, ३ जीव जावे तो ८४ भागा, ४ जीव जावें तो २१० भागा, जाव १० जावें तो ८००८ भागा, सख्याता जीव जावें तो ३३३७ भागा, असख्याता जीव जावे तो ३६५८ भागा, उत्कृष्ट जीव जावे तो ६४ भागा ।

नरक के पद १२७ होते है । असजोगी ७ पद * १, २, ३,४, ५, ६, ७।

** जहॉ १ का अक है वहॉ पहली नरक,*
जहॉ २ का अक है वहाँ दूसरी नरक,
जहॉ ३ का अक है वहॉ तीसरी नरक,
जहाँ ४ का अक है वहॉ चौथी नरक,
जहॉ ५ का अक है वहाँ पाचवी नरक,
जहॉ ६ का अक है वहाँ छठी नरक,
जहॉ ७ का अक है, वहॉ सातवी नरक समझना चाहिए ।

जैसे– एक जीव कोई पहली नरक मे जाता है, कोई दूसरी नरक मे जाता है यावत् कोई सातवीं नरक मे जाता है । इसी तरह दो जीव नरक मे जाते है तो असयोगी भागे तो ऊपर बताये अनुसार बनते है । पहली दूसरी यावत् सातवीं नरक मे जाते है । दो सजोगी जाते है तो एक पहली मे एक दूसरी मे, एक पहली मे एक तीसरी मे, एक पहली मे एक चौथी मे, इसी तरह यावत् एक छठी मे एक सातवीं मे यहॉ तक २१ पद कह देना चाहिये । इसी तरह तीन सयोगी एक पहली मे, एक दूसरी मे, एक तीसरी मे, यावत् एक पाचवीं मे एक छठी मे एक सातवी मे जाते है, यहॉ तक ३५ पद कह देना चाहिए । इसी तरह सात सयोगी कह देना चाहिए ।

दो सजोगी २१ पद– १-२, १-३, १-४, १-५, १-६, १-७, २-३, २-४, २-५, २-६, २-७, ३-४, ३-५, ३-६, ३-७, ४-५, ४-६, ४-७, ५-६, ५-७, ६-७ । दो सजोगी २१ ।

तीन सजोगी ३५ – १-२-३, १-२-४, १-२-५, १-२-६, १-२-७, १-३-४, १-३-५, १-३-६, १-३-७, १-४-५, १-४-६, १-४-७, १-५-६, १-५-७, १-६-७, २-३-४, २-३-५, २-३-६, २-३-७, २-४-५, २-४-६, २-४-७, २-५-६, २-५-७, २-६-७, ३-४-५, ३-४-६, ३-४-७, ३-५-६, ३-५-७, ३-६-७, ४-५-६, ४-५-७, ४-६-७, ५-६-७।

तीन सजोगी ३५ पद हुए।

चार सजोगी ३५ पद–१-२-३-४, १-२-३-५, १-२-३-६, १-२-३-७, १-२-४-५, १-२-४-६, १-२-४-७, १-२-५-६, १-२-५-७, १-२-६-७, १-३-४-५, १-३-४-६, १-३-४-७, १-३-५-६, १-३-५-७, १-३-६-७, १-४-५-६, १-४-५-७, १-४-६-७, १-५-६-७, २-३-४-५, २-३-४-६, २-३-४-७, २-३-५-६, २-३-५-७, २-३-६-७, २-४-५-६, २-४-५-७, २-४-६-७, २-५-६-७, ३-४-५-६, ३-४-५-७, ३-४-६-७, ३-५-६-७, ४-५-६-७ । चार सजोगी ३५ पद हुए।

पाच सजोगी २१ पद–१-२-३-४-५, १-२-३-४-६, १-२-३-४-७, १-२-३-५-६, १-२-३-५-७, १-२-३-६-७, १-२-४-५-६, १-२-४-५-७, १-२-४-६-७, १-२-५-६-७, १-३-४-५-६, १-३-४-५-७, १-३-४-६-७, १-३-५-६-७, १-४-५-६-७, २-३-४-५-६, २-३-४-५-७, २-३-४-६-७, २-३-५-६-७, २-४-५-६-७, ३-४-५-६-७। पाच सजोगी २१ पद हुए।

छह सजोगी ७ पद– १-२-३-४-५-६, १-२-३-४-५-७, १-२-३-४-६-७, १-२-३-५-६-७, १-२-४-५-६-७, १-३-४-५-६-७, २-३-४-५-६-७। छह सजोगी ७ पद हुए।

सात सजोगी १ पद–१-२-३-४-५-६-७ । सात सजोगी १ पद हुआ। ये सब मिलाकर १२७ पद हुए।

इस रीति से अपने-अपने स्थान के पद समझ लेना चाहिए।

सात नारकी मे ७ जीव जाते है, उनके विकल्प ६४ होते हैं–

असजोगी १ विकल्प– ७ जीव एक साथ जावे।

दो सजोगी ६ विकल्प–१-६, २-५, ३-४, ४-३, ५-२, ६-१।

तीन सजोगी १५ विकल्प– १-१-५, १-२-४, २-१-४, १-३-३, २-२-३, ३-१-३, १-४-२, २-३-२, ३-२-२, ४-१-२, १-५-१, २-४-१, ३-३-१, ४-२-१, ५-१-१।

चार सजोगी २० विकल्प हुए–१-१-१-४, १-१-२-३, १-२-१-३, २-१-१-३, १-१-३-२, १-२-२-२, २-१-२-२, १-३-१-२, २-२-१-२, ३-१-१-२, १-१-४-१, १-२-३-१, २-१-३-१, १-३-२-१, २-२-२-१, ३-१-२-१, १-४-१-१, २-३-१-१, ३-२-१-१, ४-१-१-१।

पाच सयोगी १५ विकल्प – १-१-१-१-३, १-१-१-२-२, १-१-२-१-२, १-२-१-१-२, २-१-१-१-२, १-१-१-३-१, १-१-२-२-१, १-२-१-२-१, २-१-१-२-१, १-१-३-१-१, १-२-२-१-१, २-१-२-१-१, १-३-१-१-१, २-२-१-१-१, ३-१-१-१-१।

छह सयोगी ६ विकल्प –१-१-१-१-१-२, १-१-१-१-२-१, १-१-१-२-१-१, १-१-२-१-१-१, १-२-१-१-१-१, २-१-१-१-१-१।

सात सयोगी १ विकल्प–१-१-१-१-१-१-१।

सात जीव सात नारकी मे जावे तो असजोगी ७ भागे बनते हैं जैसे–७ जीव पहली नारकी मे जाते है यावत् ७ जीव सातवीं नारकी मे जाते हैं। इस तरह ७ भागे होते हैं।

सात जीव सात नारकी मे दो सयोगी होकर जावे तो एक जीव पहली नारकी मे, छह जीव दूसरी नारकी मे, एक जीव पहली नारकी मे, छह जीव तीसरी नारकी मे, यावत् एक जीव पहली नारकी मे, छह जीव तीसरी नारकी मे, यावत् एक जीव पहली नारकी में यावत् छह जीव सातवीं नारकी मे। इस तरह १-६ विकल्प से ६ भागे हुए।

दो जीव पहली मे, ५ जीव दूसरी मे, २ जीव पहली मे, ५ जीव तीसरी मे यावत् दो जीव पहली मे ५ जीव सातवीं मे, इस तरह २-५ विकल्प से ६ भागे हुए। इस तरह दो सयोगी ६ विकल्प मे पहली नारकी से ३६ भागे हुए। दूसरी नारकी से ३०, तीसरी से २४, चौथी नारकी से १८, पाचवी नारकी से १२, छठी सातवीं नारकी से ६। इस तरह दो सयोगी १२६ भागे हुए।

इसी तरह तीन सयोगी के ५२५ भागे हुए।

चार सयोगी के ७००, पाच सयोगी के ३१५, छह सयोगी के ४२, सात सयोगी का १। सब मिला कर १७१६ (७ + १२६ + ५२५ + ७०० + ३१५ + ४२ + १ = १७१६) भागे हुए।

सात जीव सात नारकी मे जाते हैं, उनके पद १२७, जीवो के विकल्प ६४ और भागे १७१६ होते हैं।

इसका विशेष खुलासा भगवतीसूत्र के थोकड़े के तीसरे भाग मे थोकडा न० ७० देखिये।

नरक मे एकादि जीवो का असजोगी भागो का यंत्र

जीव	असजोगी	दो सजोगी	तीन सजोगी	चार सजोगी	पाच सजोगी	छह सजोगी	सात सजोगी	भागों का योग
१	७	०	०	०	०	०	०	७
२	७	२१	०	०	०	०	०	२८
३	७	४२	३५	०	०	०	०	८४
४	७	६३	१०५	३५	०	०	०	२१०
५	७	८४	२१०	१४०	२१	०	०	४६२
६	७	१०५	३५०	३५०	१०५	७	०	९२४
७	७	१२६	५२५	७००	३१५	४२	१	१७१६
८	७	१४७	७३५	१२२५	७३५	१४७	७	३००३
९	७	१६८	९८०	१९६०	१४७०	३९२	२८	५००५
१०	७	१८९	१२६०	२९४०	२६४६	८८२	८४	८००८
सख्याता	७	२३१	७३५	१०८५	८६१	३५७	६१	३३३७
असख्याता	७	२५२	८०५	११९०	९४५	३९२	६७	३६५८
उत्कृष्ट	१	६	१५	२०	१५	६	१	६४

इस तरह अपने अपने ठिकाने के सजोगी भागे समझ लेना चाहिए।

एक जीव नरक मे जावे उसके सात भागे होते है। सात को आठ से गुणा करके दो का भाग देने से दो जीवो के २८ भागे होते है। अट्ठाईस को ९ से गुणा करके तीन का भाग देने से तीन जीवो के ८४ भागे होते है। इस तरह सब भागे समझ लेना चाहिए।

जिस तरह से नरक के भागे, पद, विकल्प कहे उसी तरह

से बाकी तीन प्रवेशनक (तिर्यंच, मनुष्य, देव) के भी + भागे, पद, विकल्प कर लेना चाहिए। उत्कृष्ट जीव प्रवेशनक की अपेक्षा नरक मे जावे तो पहली नरक मे जावे। तिर्यंच मे जावे तो एकेन्द्रिय मे जावे, मनुष्य मे जावे तो सम्मूर्च्छिम मनुष्य मे जावे, देव मे जावे तो ज्योतिषी मे जावे।

नरकप्रवेशनक की अल्पबहुत्व–

१ सब से थोडा सातवीं नरकप्रवेशनक।
२ उससे छठी नरक प्रवेशनक असख्यातगुणा।
३ उससे पाचवीं नरकप्रवेशनक असख्यातगुणा।
४ उससे चौथी नरकप्रवेशनक असख्यातगुणा।
५ उससे तीसरी नरकप्रवेशनक असख्यातगुणा।
६ उससे दूसरी नरकप्रवेशनक असख्यातगुणा
७ उससे पहली नरकप्रवेशनक असख्यातगुणा।

तिर्यंचप्रवेशनक की अल्पबहुत्व–

१ सबसे थोडा पचेन्द्रियतिर्यंचप्रवेशनक।
२ उससे चतुरिन्द्रियप्रवेशनक विशेषाहिया।
३ उससे त्रीन्द्रियप्रवेशनक विशेपाहिया।
४ उससे द्वीन्द्रियप्रवेशनक विशेषाहिया।
५ उससे एकेन्द्रियप्रवेशनक विशेषाहिया ।

मनुष्यप्रवेशनक की अल्पबहुत्व–

१ सब से थोडे गर्भज मनुष्यप्रवेशनक।
२ उससे सम्मूर्च्छिम मनुष्यप्रवेशनक असख्यातगुणा।

देवप्रवेशनक की अल्पबहुत्व–

१ सबसे थोडे वैमानिक देवप्रवेशनक।
२ उससे भवनपति देवप्रवेशनक असख्यातगुणा।

+ विशेष विस्तार देखना हो तो प्रस्ताररत्नावली मे देखिये ।

३ उससे वाणव्यन्तर देवप्रवेशनक असख्यातगुणा।

४ उससे ज्योतिषी देवप्रवेशनक सख्यातगुणा ।

चारो गति की शामिल अल्पबहुत्व–

१ सब से थोडे मनुष्यप्रवेशनक।

२ उससे नरकप्रवेशनक असख्यातगुणा।

३ उससे देवप्रवेशनक असख्यातगुणा।

४ उससे तिर्यंचप्रवेशनक असख्यातगुणा ।

लोक शाश्वत है, इसलिये नरकादि २४ ही दण्डक के जीव स्वयमेव उत्पन्न होते है, यह बात श्रमण भगवान् महावीर स्वामी केवलज्ञान के द्वारा स्वयमेव जानते है ।

नरक के जीव अशुभ कर्म के उदय से, देव शुभ कर्म के उदय से, मनुष्य और तिर्यंच शुभाशुभ कर्मो के उदय से स्वयमेव उन गतियो मे उत्पन्न होते है ।

पार्श्वनाथ भगवान् के शिष्य गागेय अनगार ने यह सारा अधिकार श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से सुना, सुन कर यह निश्चित रूप से जान लिया कि श्रमण भगवान् महावीर स्वामी केवलज्ञानी हैं । फिर चतुर्याम (चार महाव्रत) धर्म से पच महाव्रतधर्म स्वीकार किया, यावत् सब दु खो का अन्त कर मोक्ष पधारे ।

२१. सप्रदेशी अप्रदेशी का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक पाचवा, उद्देशा आठवा)

१–श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के शिष्य नियठिपुत्र अनगार ने नारदपुत्र अनगार से पूछा कि हे आर्य ! आपकी धारणा प्रमाणे क्या सब पुद्गल सअड्ढा समज्झा सपएसा हैं अथवा अणड्ढा अमज्झा अपएसा हैं ?

नारदपुत्र अनगार ने जवाब दिया कि हे आर्य ! मेरी

धारणा प्रमाणे सब पुद्गल सअड्ढा समज्झा सपएसा हैं, किन्तु अणड्ढा अमज्झा अपएसा नहीं हैं ।

२-नियठिपुत्र अनगार ने पूछा कि हे आर्य ! आपकी धारणा प्रमाणे क्या सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा सअड्ढा समज्झा सपएसा है ?

नारदपुत्र ने जवाब दिया कि हे आर्य ! सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा सअड्ढा समज्झा सपएसा हैं ।

३-नियठिपुत्र अनगार ने पूछा कि हे आर्य ! यदि सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव से सअड्ढा समज्झा सपएसा हैं तो आपके मतानुसार एक परमाणुपुद्गल, एक प्रदेशावगाढपुद्गल, एक समय की स्थिति वाला पुद्गल, एक गुण काला पुद्गल सअड्ढा समज्झा सपएसा होने चाहिए, अणड्ढा अमज्झा अपएसा नहीं होने चाहिए । यदि आपकी धारणानुसार इस तरह न होवे तो आपका कहना मिथ्या होगा ।

नारदपुत्र अनगार ने नियठिपुत्र अनगार से कहा कि हे देवानुप्रिय ! मैं इस अर्थ को नहीं जानता हू, नहीं देखता हू । इस अर्थ को कहने मे यदि आपको ग्लानि (कष्ट) न होती हो तो आप फरमावे । इसका अर्थ मैं आपके पास से सुनना चाहता हू, धारण करना चाहता हू ।

तब नियठिपुत्र अनगार ने नारदपुत्र अनगार से कहा कि हे आर्य ! मेरी धारणा प्रमाणे सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी हैं । जो पुद्गल द्रव्य से अप्रदेशी है वह क्षेत्र से नियमा (निश्चित रूप से) अप्रदेशी होता है, काल से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है । जो पुद्गल क्षेत्र से अप्रदेशी है वह द्रव्य से, काल से और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है । जो पुद्गल काल से अप्रदेशी है वह द्रव्य से, क्षेत्र से और भाव से सिय

सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है । जो पुद्गल भाव से अप्रदेशी होता है वह द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है । जो पुद्गल द्रव्य से सप्रदेशी है वह पुद्गल क्षेत्र से, काल से, भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है । जो पुद्गल क्षेत्र से सप्रदेशी होता है, वह द्रव्य से नियमा सप्रदेशी होता है । काल से और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल काल से सप्रदेशी होता है वह पुद्गल द्रव्य से, क्षेत्र से और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है । जो पुद्गल भाव से सप्रदेशी होता है वह पुद्गल द्रव्य से, क्षेत्र से और काल से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है ।

फिर नारदपुत्र अनगार ने पूछा कि हे देवानुप्रिय! सप्रदेशी अप्रदेशी मे द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा कौन किससे थोडा, बहुत, सरीखा और विशेषाधिक है ?

तब नियठिपुत्र अनगार ने जवाब दिया कि हे नारदपुत्र! * १ सब से थोडा भाव से अप्रदेशी, २ उससे काल से अप्रदेशी

** सब से थोडे भाव से अप्रदेशी– जैसे एक गुण काला नीला आदि । २ उससे काल से अप्रदेशी असख्यातगुणा– जैसे एक समय की स्थिति वाले पुद्गल । ३ उससे द्रव्य से अप्रदेशी असख्यातगुणा– जैसे सब परमाणुपुद्गल । ४ उससे क्षेत्र से अप्रदेशी असख्यातगुणा– जैसे एक एक आकाशप्रदेश अवगाहे पुद्गल । ५ उससे क्षेत्र से सप्रदेशी असख्यातगुणा– जैसे दो आकाशप्रदेश अवगाहे हुए, तीन आकाशप्रदेश अवगाहे हुए यावत् असख्यात आकाशप्रदेश अवगाहे हुए पुद्गल । ६ उससे द्रव्य से सप्रदेशी विसेसाहिया– जैसे दो प्रदेशी स्कध, तीन प्रदेशी स्कन्ध, यावत् अनन्त प्रेदेशी स्कन्ध । ७ उससे काल से सप्रदेशी विसेसाहिया जैसे– दो समय तीन समय यावत् असख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गल । ८ उससे भाव से सप्रदेशी विसेसाहिया– जैसे दो गुण काले, तीन गुण काले यावत् अनन्त गुण काले आदि पुद्गल ।*

असख्यातगुणा, ३ उससे द्रव्य से अप्रदेशी असख्यातगुणा, ४ उससे क्षेत्र से अप्रदेशी असख्यातगुणा, ५ उससे क्षेत्र से सप्रदेशी असख्यातगुणा, ६ उससे द्रव्य से सप्रदेशी विसेसाहिया (विशेषाधिक), ७ उससे काल से सप्रदेशी विसेसाहिया, ८ उससे भाव से सप्रदेशी विसेसाहिया ।

इस अर्थ को सुनकर नारदपुत्र अनगार ने नियठिपुत्र अनगार को वन्दन नमस्कार किया और अपने निज के द्वारा कहे हुए अर्थ के लिए विनयपूर्वक बारम्बार क्षमा मागी । फिर तप सयम से अपनी आत्मा को भावते हुए विचरने लगे ।

२२ जीव का थोकडा

(भगवतीसूत्र, शतक सातवा ,उद्देशा चोथा)

जीवा १, छव्विह पुढवी २, जीवाण ३, ठिई भवट्ठिई ४ काये ५ ।
णिल्लेवण ६, अणगारे ७, किरियासम्मत्त मिच्छत्त ८ ।।

१ - अहो भगवन् ! ससारी जीव के कितने भेद है ? हे गौतम ! ६ भेद हैं– पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय * ।

२ - अहो भगवन् ! पृथ्वीकाय के कितने भेद है ? हे गौतम ! ६ भेद हैं– १ सण्हा + पृथ्वी, २ शुद्धपृथ्वी, ३ वालुकापृथ्वी, ४

** छहकाय जीवो के भेदानुभेद श्री पन्नवणासूत्र पद पहले के अनुसार जान लेना चाहिए ।*

+ सण्हा य सुद्धबालू य, मणोसिला सक्करा य खरपुढवी ।
इग बार चोद्दस सोलढार बावीससयसहस्सा ।।
इस गाथा मे पृथ्वीकाय के छह भेद और उनकी स्थिति बताई गई है ।

मणेसिला (मन शिला) पृथ्वी, ५ शर्करापृथ्वी, ६ खरपृथ्वी ।

३– अहो भगवन् ! इन छहो पृथ्वी की कितनी स्थिति है ? हे गौतम ! इन छहो पृथ्वी की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त की है, उत्कृष्ट स्थिति सण्हापृथ्वी की १००० एक हजार वर्ष, शुद्धपृथ्वी की १२००० बारह हजार वर्ष, बालुकापृथ्वी की १४००० चौदह हजार वर्ष, मणोसिया (मन शिला-मेनसिल) पृथ्वी की १६००० सोलह हजार वर्ष, शर्करापृथ्वीकी १८००० अठारह हजार वर्ष, खरपृथ्वी की २२००० बाईस हजार वर्ष की है ।

४– अहो भगवन् ! नारकी, देवता, तिर्यंच, मनुष्य की कितनी स्थिति है ? हे गौतम ! नारकी, देवता की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागर की, तिर्यंच और मनुष्य की जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट तीन पल्योपम की है । इस तरह सब जीवो की भवस्थिति प्रज्ञापनासूत्र के स्थितिपद के अनुसार कह देनी चाहिए ।

५– अहो भगवन् ! जीव जीवपने कितने काल तक रहता है ? हे गौतम ! जीव जीवपने सदैव रहता है ।

६– अहो भगवन् ! वर्तमान समय मे तत्काल के उत्पन्न हुए पृथ्वीकाय के जीवो को प्रति समय एक एक अपहरे तो कितने समय मे निर्लेप होवे (खाली होवे) ? हे गौतम ! जघन्य पद मे असख्याता अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल मे और उत्कृष्ट पद मे भी असख्याता अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल मे निर्लेप होवें । जघन्य पद से उत्कृष्ट पद मे असख्यातगुणा काल ज्यादा समझना चाहिए । इसी तरह अप्काय, तेउकाय, वायुकाल का भी कह देना चाहिए । वनस्पति अनन्तानन्त होने से कभी निर्लेप नहीं होती है । त्रसकाय जघन्य प्रत्येक सौ सागर मे और उत्कृष्ट प्रत्येक सौ सागर मे निर्लेप होती है । जघन्य पद से उत्कृष्ट पद विसेसाहिया (विशेषाधिक) है ।

७-अवधिज्ञानी अणगार के शुद्धाशुद्ध लेश्या की अपेक्षा १२

आलापक कहे जाते हैं–

१–अविशुद्धलेशी अणगार समुद्‌घात रहित अविशुद्धलेशी देव देवी को नहीं जानता, नहीं देखता है । २–अविशुद्धलेशी अणगार समुद्‌घातरहित विशुद्धलेशी देव, देवी को नहीं जानता, नहीं देखता है । इसी तरह समुद्‌घातसहित के २ आलापक कह देना । इसी तरह समुद्‌घात-असमुद्‌घात के शामिल २ आलापक कह देना । अविशुद्ध लेश्या की अपेक्षा इन ६ आलापको मे नहीं जानता नहीं देखता है । विशुद्ध लेश्या की अपेक्षा ६ आलापको मे जानता है, देखता है । ये १२ आलापक हुए ।

८– अन्यतीर्थिक की क्रिया की अपेक्षा प्रश्न चलता है सो कहते हैं–

१–अहो भगवन् ! अन्यतीर्थिक कहते हैं कि एक जीव एक समय मे सम्यक्त्व की और मिथ्यात्व की दो क्रिया करता है । क्या उनका यह कहना ठीक है ? हे गौतम ! अन्यतीर्थिको का यह कहना मिथ्या है । एक जीव एक समय मे एक ही क्रिया कर सकता है, दो क्रिया नहीं कर सकता ।

२३. 'कालादेश' का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक छठा, उद्देशा चौथा)

सपएसा आहारग भविया सण्णी लेस्सा दिट्ठि सजय कसाए ।
णाणे जोगुवओगे, वेदे य सरीर पज्जत्ती ।। १ ।।

१ सप्रदेशद्वार २ आहारकद्वार ३ भव्यद्वार ४ सज्ञीद्वार ५ लेश्याद्वार ६ दृष्टिद्वार ७ सयतद्वार ८ कषायद्वार ९ ज्ञानद्वार १० योगद्वार ११ उपयोगद्वार १२ वेदद्वार १३ शरीरद्वार १४ पर्याप्ति-द्वार ।

१ सप्रदेशद्वार– अहो भगवन् ! भगवन् ! क्या जीव + सप्रदेशी है या * अप्रदेशी (पहिले समय का उत्पन्न हुआ) है ? हे गौतम ! सप्रदेशी, अप्रदेशी के ६ भागे होते है– १ सिय सप्रदेशी २ सिय अप्रदेशी ३ सप्रदेशी एक अप्रदेशी एक ४ सप्रदेशी एक अप्रदेशी बहुत ५ सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी एक ६ सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी बहुत ।

समुच्चय जीव काल की अपेक्षा– एक जीव और बहुत जीव नियमा सप्रदेशी । २४ दण्डक के जीव सिद्ध भगवान् काल की अपेक्षा से एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव की अपेक्षा से एकेन्द्रिय को छोडकर तीन भागे होते है– सब सप्रदेशी (सव्वे वि ताव हुज्जा सपएसा) २ सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी एक, ३ सप्रदेशी बहुत, अप्रदेशी बहुत । एकेन्द्रिय मे भागा मिलता है एक तीसरा (सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी बहुत)

२ आहारकद्वार– अहो भगवन् ! क्या आहारक सप्रदेशी है या अप्रदेशी है ? हे गौतम ! आहारक समुच्चय जीव, २४ दण्डक– एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव की अपेक्षा जीव एकेन्द्रिय को छोडकर तीन भागे होते है । जीव एकेन्द्रिय मे भागा मिलता है एक तीसरा (सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी बहुत) । अनाहारक समुच्चय जीव २४ दण्डक– एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव की अपेक्षा जीव एकेन्द्रिय को छोडकर छह भागे होते है । जीव एकेन्द्रिय मे भागा मिलता हे १ तीसरा । सिद्ध भगवान् की अपेक्षा एक जीव सिय सप्रदेशी

+ जिसको उत्पन्न हुए को २-३ या ज्यादा समय हो गया है, उसे सप्रदेशी कहते है ।

** जिसको उत्पन्न हुए एक समय हुआ है, उसे अप्रदेशी कहते है । शाश्वत बोलो मे तीन भागे तथा अशाश्वत बोलो मे छह भागे होते है ।*

सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन भागे होते हैं ।

३ भव्य (भवी) द्वार– अहो भगवन् ! क्या भवी जीव सप्रदेशी है या अप्रदेशी ? हे गौतम ! भवी और अभवी एक जीव और बहुत जीव नियमा सप्रदेशी है । २४ दण्डक के जीव भवी अभवी–एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव की अपेक्षा एकेन्द्रिय को छोड कर तीन भागे पाये जाते हैं । एकेन्द्रिय मे भागा मिलता है १ तीसरा । नोभवी-नोअभवी जीव सिद्ध एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन भागे पाये जाते हैं ।

४ सज्ञीद्वार– सज्ञी समुच्चय जीव, १६ दण्डक-एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा जीव और १६ दण्डक मे तीन तीन भागे होते है । असज्ञी समुच्चय जीव २२ दण्डक–एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव की अपेक्षा समुच्चय जीव तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यंच पचेन्द्रिय इनमे भागा मिलते है तीन तीन । एकेन्द्रिय मे भागा मिलता है तीसरा । नारकी देवता मनुष्य मे भागे होते है छह छह । नोसज्ञी-नोअसज्ञी जीव, मनुष्य, सिद्ध एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव की अपेक्षा जीव, मनुष्य सिद्धो मे तीन तीन भागे होते हैं ।

५ लेश्याद्वार– अहो भगवन् ! क्या सलेशी सप्रदेशी है या अप्रदेशी है ? हे गौतम ! सलेशी समुच्चय जीव मे–एक जीव बहुत जीव की अपेक्षा नियमा सप्रदेशी । २४ दण्डक के जीव और सिद्ध भगवान् मे–एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव की अपेक्षा–एकेन्द्रिय को छोड कर तीन भागे होते है, एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । कृष्ण नील कापोतलेशी समुच्चय जीव, २२ दण्डक में एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव की अपेक्षा जीव एकेन्द्रिय को छोडकर तीन तीन भागे

होते है । जीव एकेन्द्रिय मे भागा होता है १ तीसरा । तेजोलेशी समुच्चय जीव, १८ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव की अपेक्षा समुच्चय जीव और १५ दण्डक मे तीन तीन भागे होते है। । पृथ्वी पानी वनस्पति मे छह छह भागे होते है । पद्मलेशी शुक्ललेशी समुच्चय जीव, ३ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन तीन भागे होते है । अलेशी जीव, मनुष्य सिद्ध मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव की अपेक्षा जीव और सिद्ध मे तीन तीन भागे होते हैं, मनुष्य मे छह भागे होते है ।

६ दृष्टिद्वार– समदृष्टि, समुच्चय जीव १९ दण्डक सिद्ध भगवान् मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन भागे होते है, नवर तीन विकलेन्द्रिय मे छह भागे होते है । मिथ्यादृष्टि, समुच्चय जीव २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव की अपेक्षा एकेन्द्रिय को छोड कर समुच्चय जीव, १९ दण्डक मे तीन तीन भागे होते है । एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि (मिश्रदृष्टि), समुच्चय जीव, १६ दण्डक की अपेक्षा एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा छह छह भागे होते है ।

७ सयतद्वार– सयति मे समुच्चय जीव मनुष्य, सयतासयति मे समुच्चय जीव मनुष्य, तिर्यंच एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन तीन भागे होते है । असयति समुच्चय जीव २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा एकेन्द्रिय को छोड कर समुच्चय जीव, १९ दण्डक मे तीन तीन भागे होते है, एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । नोसयति-नोअसयति-नोसयतासयति

जीव सिद्ध भगवान् मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन भागे होत्ते हैं ।

८ कषायद्वार– सकषायी समुच्चय जीव २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा एकेन्द्रिय को छोड कर + समुच्चय जीव १९ दण्डक मे तीन तीन भागे, एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा । क्रोधकषायी समुच्चय जीव २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी, सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा जीव एकेन्द्रिय को छोड कर तीन तीन भागे, जीव एकेन्द्रिय मे तीसरा भागा नवर देवता मे छह भागे । मानकषायी मायाकषायी समुच्चय जीव २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा जीव एकेन्द्रिय को छोडकर तीन तीन भागे, जीव एकेन्द्रिय मे तीसरा भागा नवर नारकी देवता मे छह छह भागे । लोभकषायी

+ शका– समुच्चय जीव मे सकषायी की अपेक्षा तीन भागे कहे और क्रोध मान माया लोभ की अपेक्षा एक तीसरा भागा ही कहा, इसका क्या कारण ?

समाधान– सकषायी मे अकषायीपणे से आया हुआ एक जीव भी पाया जा सकता है । इस कारण से तीन भागे बनते हैं । क्रोध मान माया लोभ मे एकेन्द्रिय की अपेक्षा अनन्ता ही जीव क्रोध-कषायी के मानकषायी, और मानकषायी के मायाकषायी इत्यादि रूप से अदल बदल रूप से होते रहते हैं । इस कारण से एक जीव क्रोध- कषायी मानकषायी मायाकषायी लोभकषायी नहीं पाया जाता । इसलिए एक तीसरा भागा ही बनता है । इतनी जगह समुच्चय जीव मे एकेन्द्रिय साथ मे होते हुए भी तीन तीन भागे है– १ असज्ञी मे, २ मिथ्यादृष्टि मे, ३ असयति मे, ४ सकषायी मे, ५ समुच्चय अज्ञानी, मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी मे, ६ सवेदी नपुसकवेद मे, ७ काययोगी मे ।

समुच्चय जीव २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा जीव एकेन्द्रिय को छोडकर तीन तीन भागे, जीव एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा नवर नारकी मे छह भागे । अकषायी जीव मनुष्य सिद्ध भगवान् मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन तीन भागे होते है ।

९ ज्ञानद्वार– सज्ञान (समुच्चय ज्ञान) समुच्चय जीव १९ दण्डक सिद्ध भगवान् मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन तीन भागे नवर विकलेन्द्रिय मे छह भागे होते है । मतिज्ञान, श्रुतज्ञान समुच्चय जीव १९ दण्डक मे, अवधिज्ञान समुच्चय जीव १६ दण्डक मे, मन पर्ययज्ञान, केवलज्ञान समुच्चय जीव मनुष्य मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन तीन भागे नवर मतिज्ञान, श्रुतज्ञान मे तीन विकलेन्द्रिय मे छह भागे होते है । समुच्चय अज्ञान, मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान समुच्चय जीव २४ दण्डक मे, विभगज्ञान समुच्चय जीव १६ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा एकेन्द्रिय को छोड कर तीन तीन भागे, एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है ।

१० योगद्वार– सयोगी मे समुच्चय एक जीव की अपेक्षा बहुत जीव की अपेक्षा नियमा सप्रदेशी । २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा एकेन्द्रिय को छोडकर तीन तीन भागे, एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । मनयोगी समुच्चय जीव १६ दण्डक मे, वचनयोगी समुच्चय जीव १९ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन तीन भागे होते है । काययोगी समुच्चय जीव २४ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा समुच्चय जीव और १९ दण्डक मे

तीन तीन भागे होते हैं और एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । अयोगी जीव मनुष्य सिद्ध भगवान् मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा जीव सिद्ध भगवान् मे तीन तीन भागे, मनुष्य मे छह भागे होते है ।

११ उपयोगद्वार– सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता (साकार-उपयोग, अनाकार-उपयोग), समुच्चय जीव २४ दण्डक सिद्ध भगवान् मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा जीव एकेन्द्रिय छोड कर बाकी १९ दण्डक मे तीन तीन भागे, जीव एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है ।

१२ वेदद्वार– सवेदी समुच्चय जीव, २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा एकेन्द्रिय को छोडकर समुच्चय जीव और १९ दण्डक मे तीन तीन भागे, एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । स्त्रीवेद, पुरुषवेद समुच्चय जीव १५ दण्डक मे, नपुसकवेद समुच्चय जीव ११ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा स्त्रीवेद पुरुषवेद मे जीवादि मे (समुच्चय जीव और १५ दण्डक मे) तीन तीन भागे होते हैं । नपुसकवेद मे एकेन्द्रिय को छोडकर समुच्चय जीव और छह दण्डक मे तीन तीन भागे, एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । अवेदी जीव मनुष्य सिद्ध भगवान् मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन तीन भागे होते हैं ।

१३ शरीरद्वार– सशरीरी और तैजस कार्मण शरीर मे समुच्चय एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा नियमा सप्रदेशी । २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा एकेन्द्रिय को छोड कर तीन तीन भागे, एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । अशरीरी समुच्चय जीव, सिद्ध भगवान् मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय

अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन तीन भागे होते हैं । औदारिकशरीर समुच्चय जीव, १० दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा जीव एकेन्द्रिय को छोडकर तीन तीन भागे, जीव एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । वैक्रियशरीर १७ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा १६ दण्डक मे तीन तीन भागे, समुच्चय जीव वायुकाय मे एक तीसरा भागा होता है । आहारकशरीर जीव मनुष्य मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा छह भागे होते है ।

१४ पर्याप्तिद्वार– आहारपर्याप्ति शरीरपर्याप्ति इन्द्रियपर्याप्ति श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति मे समुच्चय जीव, २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा समुच्चय जीव एकेन्द्रिय को छोड कर तीन तीन भागे, समुच्चय जीव एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । भाषापर्याप्ति मे समुच्चय जीव १९ दण्डक मे, मन पर्याप्ति मे समुच्चय जीव १६ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा तीन तीन भागे होते है । आहार-अपर्याप्ति समुच्चय जीव, २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा जीव एकेन्द्रिय को छोडकर छह छह भागे, जीव एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । शरीर - अपर्याप्ति- इन्द्रिय - अपर्याप्ति, श्वासोच्छ्वास -अपर्याप्ति समुच्चय जीव २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव की अपेक्षा जीव एकेन्द्रिय मे एक तीसरा भागा होता है । नारकी देवता मनुष्य मे छह छह भागे होते है । तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यंच पचेन्द्रिय मे तीन तीन भागे होते है । भाषा-अपर्याप्ति मे समुच्चय जीव, १९ दण्डक मे, मन -अपर्याप्ति मे समुच्चय जीव १६ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत

जीव की अपेक्षा तीन तीन भागे नवर नारकी देवता मनुष्य मे छह छह भागे होते हैं ।

२४ आठ कर्म भोगने * के कारणो का थोकडा

(पन्नवणासूत्र, २३ वा पद, उद्देशा १)

कति पगडी कह बधई, कइहिं वि ठाणेहिं बधए जीवो ।
कति वेदेइ य पयडी, अणुभावो कइविहो कस्स ।।

१ कर्म प्रकृतियो के नाम, २ जीव किस प्रकार इन प्रकृतियो को बाधता है ? ३ किन स्थानो से अर्थात् कारणो से जीव कर्म प्रकृतिया बाधता है ? ४ कितनी कर्म प्रकृतिया वेदता है ? ५ किसका कितने प्रकार का विपाक है ? इन पाच द्वारो का इस थोकडे मे वर्णन है ।

(१) कर्म प्रकृतियो के नाम– ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अतराय । पदार्थों के विशेष धर्म का जानना ज्ञान है । जिस कर्म द्वारा ज्ञान का आवरण हो, उसे ज्ञानावरणीयकर्म कहते है । जैसे घाणी के बैल की आखो पर पट्टी बाधने से उसे नहीं दिखाई देता, उसी प्रकार ज्ञानावरणीयकर्म के उदय से आत्मा पदार्थ के विशेष स्वरूप को नहीं जान पाता, उसे ज्ञान प्राप्त नहीं होता । पदार्थ की सत्ता, सामान्यधर्म को जानना दर्शन है । जिस कर्म द्वारा दर्शन का आवरण हो उसे दर्शनावरणीयकर्म कहते हैं । दर्शनावरणीयकर्म द्वारपाल के समान हैं । जैसे द्वारपाल जिस पुरुष से नाराज है उसे राजा के पास जाने से रोक देता है, चाहे राजा उसे देखना भी

** कर्म बधने के ८५ कारण श्री भगवतीसूत्र शतक ८, उद्देशा ९ में है । कर्म भोगने के ९३ कारण श्री पन्नवणासूत्र पद २३, उद्देशा १ मे है ।*

चाहता हो । इसी तरह दर्शनावरणीयकर्म आत्मा के दर्शन मे रुकावट उत्पन्न करता है । अनुकूल और प्रतिकूल विषयो की प्राप्ति होने पर जो सुख-दु ख रूप से अनुभव किया जाये, वह वेदनीयकर्म है । शहद लिपटी तलवार की धार के समान यह वेदनीयकर्म है । शहद को चाटने के समान सातावेदनीय है और धार से जीभ कट जाने के समान असातावेदनीय है । जिस कर्म के उदय से आत्मा अच्छे-बुरे के विवेक को खो देता है, हित-अहित को नहीं समझता, उसे मोहनीयकर्म कहते है । यह कर्म मदिरा के समान है । मदिरा पीने से जैसे प्राणी अपना विवेक खो देता है, अपना भला-बुरा नहीं सोच सकता, इसी प्रकार मोहनीयकर्म के उदय से जीव हित-अहित, अच्छे- बुरे का विवेक खो देता है । जिस कर्म के उदय से जीव स्वकर्मोपार्जित नरकादि गति मे नियत काल तक रहता है उसे आयुकर्म कहते है । यह कर्म कारागार के समान है । जैसे कैदी को कारागार की अवधि समाप्त होने तक कारागार मे रहना पडता है, पहले नहीं छूट सकता, उसी प्रकार जीव को आयुकर्म के उदय से निश्चित काल तक नरकादि गतियो मे रहना पडता है । जिस कर्म से जीव नरकादि गति पाकर विविध पर्यायो को अनुभव करता है, उसे नामकर्म कहते है । यह कर्म चित्रकार के समान है । जैसे चित्रकार विविध रगो से विविध रूप बनाता है, उसी तरह नामकर्म के उदय से जीव अच्छे- बुरे नाना प्रकार के रूप पाता है और विविध पर्यायो का अनुभव करता है । जिस कर्म के उदय से जीव उच्च, नीच कुलो मे जन्म लेकर उच्च, नीच कहलाता है, उसे गोत्रकर्म कहते है । यह कर्म कुम्भकार के समान है । जैसे कुम्भकार अनेक तरह के घडे बनाता है, उनमे कुछ घडे कलश रूप होते है और अक्षत चन्दनादि से पूजने योग्य होते है तथा कुछ घडे शराब आदि घृणित पदार्थो के रखने योग्य होने से घृणास्पद होते है । जिस कर्म के उदय से जीव को दान,

लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य-पराक्रम मे अन्तराय-विघ्न, बाधा उपस्थित होती है, उसे अन्तरायकर्म कहते हैं । यह कर्म भण्डारी के समान है । जैसे राजा किसी याचक को दान देना चाहता है और दान देने के लिए आज्ञा भी देता है, किन्तु भण्डारी उसमे बाधा उत्पन्न कर राजा की इच्छा और आज्ञा को सफल नहीं होने देता, इसी तरह अन्तरायकर्म भी जीव के दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य मे विघ्न रूप होता है और जीव को दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य से वचित कर देता है ।

(२) जीव किस प्रकार इन कर्म प्रकृतियो को बाधता है ? ज्ञानावरणीयकर्म के उदय से दर्शनावरणीयकर्म का उदय होता हैं । दर्शनावरणीयकर्म के उदय से दर्शनमोहनीयकर्म का उदय होता है । दर्शनमोहनीयकर्म के उदय से मिथ्यात्व का उदय होता है और मिथ्यात्व के उदय से जीव आठ कर्म प्रकृतिया बाधता है । बहुधा ऐसा होता है, इसी कारण यह नियम बताया गया है । वैसे सम्यग्दृष्टि भी आठ कर्म बाधता है पर उसके मिथ्यात्व का उदय नहीं होता । सूक्ष्मसम्पराय आदि गुणस्थान वाले आठ कर्म भी नहीं बाधते हैं । तात्पर्य यह है कि पूर्व कर्म के परिणाम से उत्तर कर्म उत्पन्न होता है, जैसे बीज से अकुर और अकुर से पत्र आदि । कहा भी है -

जीव परिणाम हेऊ, कम्मत्ता पोग्गला परिणमति ।
पुग्गलकम्मनिमित्त, जीवो वि तहेव परिणमइ ।।

अर्थात् जीव के परिणाम से पुद्गल कर्म रूप से परिणत होते हैं और कर्म पुद्गलो के कारण जीव का वैसा परिणाम होता है ।

आठ कर्म चार तरह से बधते हैं – प्रकृतिबध, स्थितिबध, अनुभागबध, प्रदेशबध । जीव के साथ सबद्ध कर्मपुद्गलो मे ज्ञान को आवरण करने, दर्शन को आवरण करने, सुख-दु ख देने आदि

जुदा-जुदा स्वभाव का होना प्रकृतिबध है । आठ कर्म एव उनकी १४८ उत्तर प्रकृतियो का पृथक्-पृथक् स्वभाव प्रकृतिबध रूप है । जीव के साथ सबद्ध ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का निश्चित काल तक अपने स्वभाव को न छोडते हुए जीव के साथ रहना स्थितिबध है । कर्मों के शुभ, अशुभ फल देने की तीव्रता, मदता आदि विशेषताओ का न्यूनाधिक होना अनुभागबध है । अनुभागबध को अनुभावबध, अनुभवबध तथा रसबध भी कहते हैं । जीव के साथ बध को प्राप्त कार्मणवर्गणा के स्कन्धो का न्यूनाधिक प्रदेश वाला होना प्रदेशबध है । चार प्रकार के बध का स्वरूप समझाने के लिए मोदक का दृष्टात दिया जाता है । जैसे कोई मोदक सोठ का, कोई मेथी का और कोई अजवायण का होता है । इनमे किसी का स्वभाव वायुनाशक, किसी का पित्तनाशक और किसी का कफनाशक होता है । इसी तरह जीव के साथ बधप्राप्त कर्मपुद्गलो का ज्ञान को रोकना, दर्शन को रोकना, सुख-दु ख देना आदि- पृथक् पृथक् (अलग-अलग) स्वभाव होना प्रकृतिबध है । जैसे कोई मोदक एक सप्ताह तक, कोई एक पक्ष तक और कोई एक माह तक विकृत नहीं होता और निश्चित अवधि के बाद विकृत होकर अपने स्वभाव को छोड देता है, इसी तरह कर्मों मे कोई अन्तर्मुहूर्त तक, कोई बीस कोटि-कोटि सागरोपम तक और कोई सत्तर कोटि-कोटि सागरोपम तक अपने स्वभाव को नहीं छोडते हुए जीव-के साथ सबद्ध रहते हैं, यही स्थितिबध है । जैसे कोई मोदक बहुत मीठा होता है, कोई कम मीठा होता है, कोई मोदक अधिक तिक्त होता है और कोई कम तिक्त होता है, इसी तरह कर्मपुद्गलो की मन्द, मन्दतर, मन्दतम तथा तीव्र, तीव्रतर, तीव्रतम शुभ, अशुभ फल देने की शक्ति अनुभागबध है । अनुभागबध को समझाने के लिए चतु स्थानपतित, त्रिस्थानपतित, द्विस्थानपतित और एकस्थानपतित सोठ और नीम के

रस का * दृष्टात भी दिया जाता है । जैसे कोई मोदक छटाक का, कोई अधपाव और कोई पाव भर, इस प्रकार भिन्न-भिन्न परिमाण का होता है । इसी प्रकार जीव के साथ बध को प्राप्त कार्मणस्कन्धो का न्यूनाधिक प्रदेश वाला होना प्रदेशबध है ।

(३) किन स्थानो से जीव कर्म प्रकृतिया बाधता है ? जीव राग और द्वेष, इन दो स्थानो से कर्मप्रकृतिया बाधता है । माया और लोभ राग रूप है तथा क्रोध और मान द्वेष रूप हैं । आठ कर्म बाधने के ये सामान्य कारण पन्नवणासूत्र मे बताये हैं । भगवतीसूत्र के शतक ८, उद्देशा ९ मे आठ कर्मो के बध के अलग-अलग कारण बताये हैं, जो इस प्रकार हैं–

ज्ञानावरणीयकर्म छह कारणो से बधता है– १ णाणपडिणीययाए– ज्ञान और ज्ञानी का विरोध करना, ज्ञानी से शत्रुता रखना और उसके प्रतिकूल आचरण रखना । २ णाणनिण्हवणयाए– ज्ञान को छिपाना एव मानवश ज्ञानदाता गुरु का नाम छिपाना । ३ णाणतराएण– ज्ञान मे अन्तराय देना । ४ णाणप्पदोसेण– ज्ञान और ज्ञानी से द्वेष करना । ५ णाणच्चासायणाए– ज्ञान और ज्ञानी की आशातना करना । ६ णाणविसवादणाजोगेण– ज्ञानी के साथ विसवाद करना, ज्ञानी मे दोष दिखाना और ज्ञान पर अरुचि रखना ।

दर्शनावरणीय कर्म छह कारणो से बधता है– १ दसणपडिणीययाए– दर्शन और दर्शनवान से विरोध करना, दर्शनवान से शत्रुता रखना और उसके प्रतिकूल आचरण करना । २

** नीम या सोठ का स्वाभाविक एक सेर रस है, वह एकस्थानपतित है । उसे उबाल कर आधा सेर रखना द्विस्थानपतित है । एक सेर रस को उबाल कर उसका तीसरा हिस्सा रखना त्रिस्थानपतित है । एक सेर को उबाल कर पाव सेर रखना चतु स्थानपतित है ।*

दसणणिण्हवणयाए– दर्शन का गोपन करना, दर्शनवान का नाम छिपाना । ३ दसणतराएण– दर्शन मे अन्तराय देना । ४ दसणप्पदोसेण-दर्शन और दर्शनवान से द्वेष रखना । ५ दसणाच्चासायणाए– दर्शन और दर्शनवान की आशातना करना । ६ दसणविसवादणाजोगेण– दर्शन वाले के साथ विसवाद करना, उसमे दोष निकालना और दर्शन मे अरुचि रखना ।

वेदनीयकर्म के दो भेद– सातावेदनीय और असातावेदनीय । सातावेदनीय दस कारणो से बन्धता है– १ पाणाणुकपयाए– प्राण यानी द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय की अनुकम्पा करना, २ भूयाणुकम्पयाए–भूत यानी वनस्पति की अनुकम्पा करना, ३ जीवाणुकम्पयाए– जीव अर्थात् पचेन्द्रिय की अनुकम्पा करना, ४ सत्ताणुकम्पयाए-सत्त्व यानी पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजस्काय और वायुकाय की अनुकम्पा करना, ५ बहूण पाणाण जाव सत्ताण अदुक्खणयाए– बहुत प्राण, भूत, जीव और सत्त्वो को दु ख न पहुचाना, ६ असोयणयाए– इन्हे शोक नहीं कराना, ७ अझूरणयाए– इन्हे नहीं झूराना यानी खेद नहीं पहुचाना, नहीं रुलाना, ८ अतिप्पणयाए– वेदना पहुचाकर इनके टप टप आसू नही गिराना, ९ अपिट्टणयाए–उन्हे नहीं मारना, पीटना १० अपरितावणयाए–इन्हे परिताप उत्पन्न न करना । असातावेदनीय बारह कारणो से बधता है– प्राण, भूत, जीव और सत्त्व को १ दुक्खणयाए– दु ख पहुचाना, २ सोयणयाए– शोक कराना, ३ झूरणयाए-झूराना, रुलाना, पश्चात्ताप कराना, ४ तिप्पणयाए– वेदना पहुँचाकर इनके टप टप आसू गिरवाना, ५ पिट्टणयाए–मारना, पीटना, ६ परितावणयाए– परिताप उपजाना, ७ बहुदुक्खणयाए– बहुत दु ख पहुचाना ८ बहुसोयणयाए– बहुत शोक कराना, ९ बहुझूरणयाए– बहुत झूराना, बहुत रुलाना, १० बहुतिप्पणयाए– बहुत टप टप आसू गिरवाना, ११ बहुपिट्टणयाए– बहुत मारना पीटना, १२

बहुपरितावणयाए– बहुत परिताप उपजाना ।

मोहनीय कर्म छह प्रकार से बधता है– १ तिव्वकोहयाए– तीव्र क्रोध करना, २ तिव्वमाणयाए– तीव्र मान करना, ३ तिव्वमायाए– तीव्र माया का सेवन करना, ४ तिव्वलोभाए– तीव्र लोभ करना, ५ तिव्वदसणमोहणिज्जयाए– तीव्र दर्शनमोहनीय, ६ तिव्वचरित्तमोहणिज्जयाए– तीव्र चारित्रमोहनीय ।

आयुकर्म के चार भेद है– नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु और देवायु । सोलह कारणो से आयुकर्म बधता है । चार कारणो से नरकायु का बध होता है– महारभ, महापरिग्रह, पचेन्द्रियवध और कुणिमाहार अर्थात् मास का आहार । चार कारणो से तिर्यंचायु का बध होता है– मायासेवन करना, गूढ माया सेवन करना, असत्य बोलना, झूठा तोल, झूठा माप रखना अर्थात् खरीदने के तोल विशेष भारी और खरीदने का माप अधिक लम्बा रखना तथा बेचने के तोल और माप हल्के और छोटे रखना । चार कारणो से मनुष्यायु का बध होता है– भद्र प्रकृति होना, स्वभाव से विनीत होना, अनुकम्पाशील अर्थात् दयालु होना तथा मात्सर्य यानी ईर्ष्या न रखना । चार कारणो से देवायु का बध होता है– सरागसयम, सयमासयम यानी श्रावकधर्म का पालन, अकामनिर्जरा और बालतप ।

नामकर्म के दो भेद– शुभनामकर्म और अशुभनामकर्म । शुभनामकर्म चार कारणो से बधता है– काया की सरलता, वचन की सरलता, भावो की सरलता और विसवादरहित योग का होना अर्थात् मन, वचन, काया से एकसा व्यवहार रखना । अशुभनामकर्म चार कारणो से बधता है– काया की वक्रता, वचन मे वक्रता , भावो में वक्रता और विसवादी योग होना अर्थात् करना कुछ, कहना और सोचना कुछ और ही ।

गोत्रकर्म के दो भेद– उच्चगोत्र और नीचगोत्र इनके बध के आठ आठ कारण हैं । जाति, कुल, बल, रूप, तप, श्रुत, लाभ और

ऐश्वर्य इन आठ बोलो का अभिमान न करने से उच्चगोत्र का बन्ध होता है । इन आठ बोलो का अभिमान करने से नीच गोत्र बधता है ।

अन्तरायकर्म पाच कारणो से बधता है– १ दान मे अन्तराय देना, २ लाभ मे अन्तराय देना, ३ भोग मे अन्तराय देना ४ उपभोग मे अन्तराय देना, ५ वीर्य-पराक्रम मे अन्तराय देना ।

(४) कितनी कर्मप्रकृतिया वेदता है ? – क्या जीव ज्ञानावरणीयकर्म को वेदता है ? जिस जीव ने घातीकर्मों का क्षय कर दिया है, वह ज्ञानावरणीयकर्म नहीं वेदता । शेष सभी जीव ज्ञानावरणीयकर्म वेदते है । इसी तरह मनुष्य का कहना । शेष तेईस दडक के जीव नियमपूर्वक ज्ञानावरणीयकर्म वेदते है । ज्ञानावरणीयकर्म की तरह दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्म वेदने का कहना । वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र ये चार कर्म जीव वेदता भी है और नहीं भी वेदता है । सिद्धात्माओ ने इन चारो अघातीकर्मों का क्षय कर दिया है, इसलिये ये इन्हे नहीं वेदते । शेष चौबीस दडक के जीव नियमपूर्वक इन चारो कर्मों को वेदते हैं ।

(५) किस कर्म का कितने प्रकार का विपाक है यानी कौनसा कर्म कितने प्रकार से भोगा जाता है ? – ज्ञानावरणीय कर्म * दस प्रकार से भोगा जाता है– १ श्रोत्रावरण + २ श्रोत्रविज्ञानावरण,

---

** ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मों की १४८ प्रकृतियो का विशेष विवरण सेठिया सस्था द्वारा प्रकाशित ' नव तत्त्व ' के पृष्ठ ५० से ७० तक मे दिया हुआ है ।*

+ श्रोत से श्रोत्रेन्द्रिय विषयक क्षयोपशम ग्रहण किया गया है और श्रोतविज्ञान से श्रोत्रेन्द्रिय का उपयोग ग्रहण किया गया है । इनका आवरण श्रोत्रावरण और श्रोत्रविज्ञानावरण है। इसी तरह शेष चारो इन्द्रियो का आवरण और उनके विज्ञान का आवरण भी समझना चाहिए ।

३ नेत्रावरण, ४ नेत्रविज्ञानावरण, ५ घ्राणावरण, ६ घ्राणविज्ञानावरण, ७ रसावरण, ८ रसविज्ञानावरण, ९ स्पर्शावरण, १० स्पर्शविज्ञानावरण । दर्शनावरणीयकर्म नौ प्रकार से भोगा जाता है- १ निद्रा, २ निद्रा-निद्रा, ३ प्रचला, ४ प्रचला-प्रचला, ५ स्त्यानगृद्धि, ६ चक्षुदर्शनावरण, ७ अचक्षुदर्शनावरण, ८ अवधिदर्शनावरण, ९ केवलदर्शनावरण । सातावेदनीयकर्म आठ प्रकार से भोगा जाता है– १ मनोज्ञ शब्द, २ मनोज्ञ रूप, ३ मनोज्ञ गध, ४ मनोज्ञ रस, ५ मनोज्ञ स्पर्श, ६ मन सुखता अर्थात् मन प्रसन्न रहना, ७ वाक्सुखता (वचन सम्बन्धी सुख), ८ कायसुखता (शरीर का स्वस्थ सुखी होना) । असातावेदनीयकर्म आठ प्रकार से भोगा जाता है- १ अमनोज्ञ शब्द, २ अमनोज्ञ रूप, ३ अमनोज्ञ गन्ध, ४ अमनोज्ञ रस, ५ अमनोज्ञ स्पर्श, ६ मन -दु खता (मन का दु खी होना), ७ वाकदु खता (बोलने मे कष्ट होना), ८ कायदु खता- रोगादि से शरीर का दु खी होना । मोहनीयकर्म पाच प्रकार से भोगा जाता है– १ सम्यक्त्वमोहनीय, २ मिथ्यात्वमोहनीय, ३ मिश्रमोहनीय, ४ कषायमोहनीय, ५ नोकषायमोहनीय । आयुकर्म चार प्रकार से भोगा जाता है– १ नरकायु, २ तिर्यंचायु, ३ मनुष्यायु, ४ देवायु । शुभनामकर्म चौदह प्रकार से भोगा जाता है– १ इष्ट शब्द, २ इष्ट रूप, ३ इष्ट गन्ध, ४ इष्ट रस, ५ इष्ट स्पर्श, ६ इष्ट गति, ७ इष्ट स्थिति, ८ इष्ट लावण्य-शरीर की काति, ९ इष्ट यश कीर्ति, १० इष्ट उत्थान, * कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार, पराक्रम, ११ इष्ट स्वर, १२ कान्त स्वर, १३ प्रिय स्वर, १४ मनोज्ञ स्वर ।

** उत्थान– शरीर की चेष्टा विशेष, कर्म–भ्रमणादि, बल– शारीरिक सामर्थ्य, वीर्य–आत्मा की शक्ति, पुरुषकार–अभिमान विशेष, पराक्रम–अभिमान का कार्यरूप मे परिणत होना ।*

अशुभकर्म चौदह प्रकार से भोगा जाता है– १ अनिष्ट शब्द, २ अनिष्ट रूप, ३ अनिष्ट गध, ४ अनिष्ट रस, ५ अनिष्ट स्पर्श, ६ अनिष्ट गति, ७ अनिष्ट स्थिति, ८ अनिष्ट लावण्य, ९ अनिष्ट यश कीर्ति, १० अनिष्ट उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार, पराक्रम, ११ अनिष्ट स्वर, १२ अकात स्वर, १३ अप्रिय स्वर, १४ अमनोज्ञ स्वर । उच्चगोत्र आठ प्रकार से भोगा जाता है– १ जाति, २ कुल, ३ बल, ४ रूप, ५ तप, ६ श्रुत, ७ लाभ, ८ ऐश्वर्य का विशिष्ट होना । नीचगोत्र आठ प्रकार से भोगा जाता है– १ जाति, २ कुल, ३ बल, ४ रूप, ५ तप, ६ श्रुत, ७ लाभ, ८ ऐश्वर्य से हीन होना । अन्तरायकर्म पाच प्रकार से भोगा जाता है– १ दानान्तराय, २ लाभान्तराय, ३ भोगान्तराय, ४ उपभोगान्तराय, ५ वीर्यान्तराय ।

२५. गम्मा का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक चौबीसवा उद्देशा चौबीसवा)

उववाय परिमाण सघयणुच्चत्तमेव सठाण ।
लेस्सा दिट्ठि णाणे अण्णाणे जोग उवओगे ।। १ ।।
सण्णा कसाय इदिय समुग्घाया वेयणा य वेदे य ।
आउ अज्झवसाणा अणुबधो कायसंवेहो ।। २ ।।
जीवपदे जीवपदे जीवाण दडगम्मि उद्देसो ।
चउवीसतिमम्मि सए चउवीस होति उद्देसा ।। ३ ।।

अर्थ–१ उपपात (जन्म), २ परिमाण, ३ सहनन, ४ ऊचाई अवगाहना, ५ सस्थान (आकार), ६ लेश्या, ७ दृष्टि ८ ज्ञान अज्ञान, ९ योग, १० उपयोग, ११ सज्ञा, १२ कषाय, १३, इन्द्रिय, १४ समुद्घात, १५ वेदना, १६ वेद, १७ आयुष्य, १८ अध्यवसाय, १९

अनुबन्ध, २० कायसवेध ये २० द्वार है ।

एक-एक दण्डक पर ये बीस द्वार कहे जावेगे । इस प्रकार इस चौबीसवे शतक मे चौबीस उद्देशे हैं । शास्त्र मे जिस प्रकार प्रश्नोत्तर है, उस तरह से न देकर इनको थोकडे के रूप से दिया जाता है–

१-पहले बोले घर ४४– सात नारकी के ७ घर, दस भवनपति के १० घर, वाणव्यन्तर का १ घर, ज्योतिषी का १ घर, बारह देवलोको के १२ घर, नवग्रैवेयक का १ घर, चार अनुत्तरविमान का १ घर, सर्वार्थसिद्ध का १ घर, दस औदारिक (पाच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंचपचेन्द्रिय, मनुष्य) के १० घर, ये सब मिला कर ४४ घर हुये ।

२- दूसरे बोले जीव ४८– चवालीस तो ऊपर कहे वे, एक असज्ञी तिर्यंच, एक असज्ञी मनुष्य, एक युगलिया तिर्यंच, एक युगलिया मनुष्य, ये कुल ४८ हुए ।

तीसरे बोले स्थान (ठिकाणा) ३२१ घर– पहला पहली नारकी में तीन स्थानो से जीव आते हैं– असज्ञी तिर्यंच, सज्ञी तिर्यंच, सज्ञी मनुष्य । दूसरी नारकी से सातवीं नारकी तक छह घरो मे दो-दो स्थानो से जीव आते है– सज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य । दस भवनपति, एक वाणाव्यन्तर इन ११ घरो मे पाच-पाच स्थानो से जीव आते हैं– असज्ञी तिर्यंच, सज्ञी तिर्यंच, सज्ञी मनुष्य, युगलिया तिर्यंच, युगलिया मनुष्य, ११ X ५ = ५५, ये ५५ स्थान । ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक इन ३ घरो मे चार-चार स्थानो से जीव आते हैं– सज्ञी तिर्यंच, सज्ञी मनुष्य, युगलिया तिर्यंच, युगलिया मनुष्य, ४ X ३ = १२, ये १२ स्थान । तीसरे देवलोक से आठवे देवलोक तक इन ६ घरो मे दो-दो स्थानो से जीव आते हैं– सज्ञी तिर्यंच, सज्ञी मनुष्य, ६ X २ = १२, ये १२ स्थान । ऊपर के चार देवलोको (नववा, दसवा, ग्यारहवा, बारहवा)

के ४ घर, नव ग्रैवेयक का एक घर, चार अनुत्तर विमानो का एक घर, सर्वार्थसिद्ध का एक घर, इन ७ घरो मे एक-एक स्थान से जीव आता है– सज्ञी मनुष्य, ७ X १ = ७, ये ७ स्थान ।

पृथ्वीकाय, अप्काय, वनस्पतिकाय, इन तीन घरो मे २६-२६ स्थानो से जीव आते है– १४ वैक्रिय के, १२ औदारिक के (१० मे असज्ञी तिर्यंच और असज्ञी मनुष्य बढे), ३ X २६ = ७८, ये ७८ स्थान । तेउकाय, वायुकाय और तीन विकलेन्द्रिय इन पाच घरो मे १२-१२ स्थानो से जीव आते है– १२ औदारिक के ऊपर कहे अनुसार, ५ X १२ = ६०, ये ६० स्थान । तिर्यंच पचेन्द्रिय का एक घर, इसमे ३९ स्थानो से जीव आते है– २७ वैक्रिय के (पहली नारकी से आठवे देवलोक तक) और १२ औदारिक के, २७ + १२ = ३९, ये ३९ स्थान । मनुष्य का एक घर, इसमे ४३ स्थानो से जीव आते है– ३३ वैक्रिय के (सातवीं नारकी को छोड कर), १० औदारिक के (तेउकाय, वायुकाय को छोड कर) ये ४३ स्थान । नारकी के १५ (३+१२ = १५), भवनपति वाणव्यन्तर के ५५, ज्योतिषी और पहले दूसरे देवलोक के १२, तीसरे से आठवे देवलोक तक १२, नववे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक ७, ये वैक्रिय के १०१ स्थान हुए । पृथ्वी पानी वनस्पति के ७८, तेउकाय वायुकाय तीन विकलेन्द्रिय के ६०, तिर्यंच पचेन्द्रिय के ३९, मनुष्य के ४३, ये औदारिक के २२० हुए । वैक्रिय और औदारिक के सब मिला कर ३२१ स्थान हुए ।

चौथे बोले भव के १६ स्थान– (१) असज्ञी तिर्यंच मर कर १२ स्थानो मे जाता है– पहली नारकी, दस भवनपति, एक वाणव्यन्तर । कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति वाला जाता है । वहाँ कितनी स्थिति पाता है ? जघन्य दस हजार वर्ष की, उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यातवे भाग । कितने भव करता है ? जघन्य उत्कृष्ट दो भव

करता है ।

(२) सज्ञी तिर्यंच मर कर २६ स्थानो मे जाता है– ६ नारकी (पहले से छठी नारकी तक), भवनपति से आठवे देवलोक तक २० (दस भवनपति, १ वाणव्यन्तर १ ज्योतिषी, ८ देवलोक–पहले से आठवे तक) । कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति वाला जाता है । वहाँ कितनी स्थिति पाता है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है । कितने भव करता है ? जघन्य २, उत्कृष्ट ८ भव करता है ।

(३) सज्ञी तिर्यंच मर कर सातवीं नरक मे जाता है । कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति वाला जाता है । वहाँ कितनी स्थिति पाता है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है । कितने भव करता है ? (तीजा, छठा, नवमा छोड कर) ६ गम्मा की अपेक्षा जाने सबधी ३ भव और ७ भव । ६ गम्मा (सातवा आठवा नववा छोडकर) आने सबधी २ भव और ६ भव । ३ गम्मा (तीजा, छठा नववा) की अपेक्षा– जाने सबधी ३ भव और ५ भव । ३ गम्मा (सातवा, आठवा नववा) आने सबधी २ भव और ४ भव करता है ।

(४) सज्ञी मनुष्य मर कर १५ स्थान मे जाता है– पहली नारकी, भवनपति से दूसरे देवलोक तक । कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य प्रत्येक मास (दो महीने से नौ महीने तक) और उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति वाला जाता है । वहाँ कितनी स्थिति पाता है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है । कितने भव करता है ? जघन्य २, उत्कृष्ट ८ भव करता है ।
(५) सज्ञी मनुष्य मर कर ११ स्थानो मे जाता है– ५ नारकी (दूसरी से छठी तक), ६ देवलोक (तीसरे से आठवे तक) ।

कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य प्रत्येक वर्ष और उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति वाला जाता है । वहाँ कितनी स्थिति पाता है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है । कितने भव करता है ? जघन्य २ उत्कृष्ट ८ भव करता है ।

(६) सज्ञी मनुष्य मर कर ५ स्थानो मे जाता है– ४ देवलोक (नववे से बारहवे देवलोक तक), एक नवग्रैवेयक । कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य प्रत्येक वर्ष और उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति वाला जाता है । वहाँ कितनी स्थिति पाता है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है । कितने भव करता है ? जाने की अपेक्षा ३ भव और ७ भव, आने की अपेक्षा २ भव और ६ भव करता है ।

(७) सज्ञी मनुष्य मर कर १ स्थान मे जाता है– ४ अनुत्तर विमान मे जाता है । कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य प्रत्येक वर्ष और उत्कृष्ट करोड पूर्व वर्ष की स्थिति वाला जाता है । वहॉ कितनी स्थिति पाता है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है । कितने भव करता है ? जाने की अपेक्षा ३ भव और ५ भव, आने की अपेक्षा २ भव और ४ भव करता है ।

(८) सज्ञी मनुष्य मर कर सर्वार्थसिद्ध मे जाता है । कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य प्रत्येक वर्ष और उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति वाला जाता है । वहाँ कितनी स्थिति पाता है ? तेतीस सागर की स्थिति पाता है । कितने भव करता है ? जाने की अपेक्षा ३, आने की अपेक्षा २ भव करता है ।

(९) सज्ञी मनुष्य मर कर सातवीं नारकी मे जाता है । कितनी स्थिति वाला जाता है ? जघन्य प्रत्येक वर्ष और उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति वाला जाता है ? वहाँ कितनी स्थिति पाता है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाता है ? कितने भव करता है ? जघन्य उत्कृष्ट २ भव करता है ।

(१०) दो प्रकार के युगलिया मर कर १४ प्रकार के देवता मे जाते हैं । दो प्रकार के युगलिया मर कर दस भवनपति, वाणव्यन्तर मे जाते है । कितनी स्थिति वाले जाते हैं ? जघन्य करोड पूर्व झाझेरी और उत्कृष्ट ३ पल्योपम की स्थिति वाले जाते हैं । वहाँ कितनी स्थिति पाते हैं ? असुरकुमार मे जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति पाते हैं । नागकुमार आदि नौ निकाय मे जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट देशऊणी दो पल्योपम की स्थिति पाते हैं, वाणव्यन्तर मे जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट एक पल्योपम की स्थिति पाते हैं । कितने भव करते हैं ? जघन्य उत्कृष्ट २ भव करते है ।

दो प्रकार के युगलिया मरकर ज्योतिषी मे जाते हैं । कितनी स्थिति वाले जाते हैं ? जघन्य पल (पल्योपम) के आठवे भाग और उत्कृष्ट तीन पल की स्थिति वाले जाते है । वहाँ कितनी स्थिति पाते हैं ? जघन्य पल के आठवे भाग और उत्कृष्ट एक पल, लाख वर्ष की स्थिति पाते है । जघन्य उत्कृष्ट दो भव करते हैं ।

दो प्रकार के युगलिया मरकर पहले दूसरे देवलोक मे जाते हैं । कितनी स्थिति वाले जाते हैं ? जघन्य पहले देवलोक मे एक पल, दूसरे देवलोक मे एक पल झाझेरी और उत्कृष्ट तीन पल की स्थिति वाले जाते हैं । वहाँ कितनी स्थिति पाते हैं ? पहले देवलोक मे जघन्य एक पल की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की, दूसरे देवलोक मे जघन्य एक पल झाझेरी, उत्कृष्ट तीन पल की स्थिति पाते हैं। कितने भव करते हैं ? जघन्य उत्कृष्ट दो भव करते हैं ।

(११) चौदह प्रकार (१० भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, पहला दूजा देवलोक) के देवता मरकर पृथ्वी, पानी, वनस्पति मे उत्पन्न होते हैं । कितनी स्थिति वाले उत्पन्न होते है ? अपने

स्थान के अनुसार स्थिति वाले उत्पन्न होते हैं । वहाँ कितनी स्थिति पाते है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाते है । कितने भव करते है ? जघन्य उत्कृष्ट दो भव करते है ।

(१२) पृथ्वीकाय मरकर पाच स्थावर मे उत्पन्न होते हैं । अप्काय मरकर पाच स्थावर में उत्पन्न होते है । तेउकाय मरकर पाच स्थावर मे उत्पन्न होते है । वायुकाय मरकर पाच स्थावर मे उत्पन्न होते है । वनस्पति काय मरकर चार स्थावर मे उत्पन्न होते है । वनस्पतिकाय मरकर वनस्पतिकाय मे उत्पन्न होते है । इनमे से पहले के २४ बोलो मे चार गम्मा (पहला, दूसरा, चौथा, पाचवा) की अपेक्षा दो भव और असख्याता भव करते है । दो अन्तर्मुहूर्त और असख्याता काल । वनस्पति मरकर वनस्पति मे उत्पन्न होते है । ४ गम्मा (पहला, दूसरा, चौथा, पाचवा) की अपेक्षा २ भव और अनन्ता भव करते है । दो अन्तर्मुहूर्त और अनन्ता काल पाच स्थावर मे ५ गम्मा (तीसरा, छठा, सातवा, आठवा, नववा), दो भव और ८ भव करते है ।

(१३) तीन विकलेन्द्रिय मरकर तीन विकलेन्द्रिय मे उत्पन्न होते है । तीन विकलेन्द्रिय मरकर पाच स्थावर मे उत्पन्न होते है । पाच स्थावर मरकर तीन विकलेन्द्रियो मे उत्पन्न होते है । कितनी स्थिति वाले जाते है ? अपने अपने स्थान के अनुसार स्थिति वाले जाते है । वहाँ कितनी स्थिति पाते है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाते है । कितने भव करते है ? ४ गम्मा की अपेक्षा दो भव और सख्याता भव करते है । ५ गम्मा की अपेक्षा दो भव और आठ भव करते है । पाच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय मरकर तिर्यंचपचेन्द्रिय मे उत्पन्न होते है । वहाँ कितनी स्थिति पाते है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाते है । कितने भव करते है ? जघन्य दो, उत्कृष्ट आठ भव करते है ।

(१४) सज्ञी असज्ञी तिर्यंच मरकर १० स्थान मे (पाच

स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंचपचेन्द्रिय और मनुष्य) जाते हैं । कितने स्थिति वाले जाते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति वाले जाते हैं । वहाँ कितनी स्थिति पाते हैं ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाते हैं । कितने भव करते हैं ? जघन्य दो और उत्कृष्ट आठ भव करते है ।

(१५) पृथ्वीकाय, अप्काय, वनस्पतिकाय, तीन विकलेन्द्रिय मरकर मनुष्य मे जाते हैं । सज्ञी असज्ञी मनुष्य मरकर ८ औदारिक (पृथ्वी, पानी, वनस्पति, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंचपचेन्द्रिय, मनुष्य) मे जाते हैं । कितनी स्थिति वाले जाते हैं ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति वाले जाते है । वहाँ कितनी स्थिति पाते है ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाते हैं । कितने भव करते है ? जघन्य २, उत्कृष्ट ८ भव करते हैं ।

(१६) सज्ञी मनुष्य, असज्ञी मनुष्य मरकर तेउकाय वायुकाय मे जाते हैं । कितनी स्थिति वाले जाते हैं ? अपने-अपने स्थान के अनुसार स्थिति वाले जाते हैं । वहाँ कितनी स्थिति पाते हैं ? अपने स्थान के अनुसार स्थिति पाते हैं । कितने भव करते हैं ? २ भव करते हैं ।

५-पाचवे बोले गम्मा २८८९ हैं (३२१ स्थान को ९ गम्मा से गुणा करने से ३२१ X ९ = २८८९ होते हैं)। उनमे से ८४ गम्मा कम हो गये- सम्मूर्च्छिम मनुष्य के ६० । ६ गम्मा उस मनुष्य के जो सर्वार्थसिद्ध मे जाता है । ६ गम्मा उस देवता के जो सर्वार्थसिद्ध से मनुष्य मे आता है । १२ गम्मा (चौथा, छठा, दो-दो गम्मा तीन स्थानो मे तिर्यंच और मनुष्य युगलियो के) दो प्रकार के युगलियो के, जो कि ज्योतिषी और पहले दूसरे देवलोक मे जाते हैं । ये ८४ गम्मा कम हो जाने से बाकी २८०५ गम्मा रहे ।

(१) जघन्य, उत्कृष्ट २ भव के ७७४ गम्मा होते है ।

असञ्ज्ञी तिर्यंच मरकर १२ स्थान मे जाता है । दो प्रकार के युगलिया मरकर १४ प्रकार के देवता मे जाते हैं । १४ प्रकार के देवता मरकर पृथ्वी, पानी, वनस्पति मे जाते है । १२ + २८ + ४२ = ८२ । ८२ X ९ = ७३८ हुए । इनमे से दो प्रकार के युगलिया ज्योतिषी, पहले दूसरे देवलोक मे जाते है, उनमे से दो-दो गम्मा (चौथे और छठा) कम हो गये जिसके १२ गम्मा (२ X ३ = ६ X २ = १२) कम कर देने से ७२६ गम्मा बाकी रहे । सञ्ज्ञी मनुष्य, असञ्ज्ञी मनुष्य मरकर तेउ, वायु मे उत्पन्न होते हैं , जिसके जघन्य, उत्कृष्ट दो भव होते है । सञ्ज्ञी मनुष्य के ९ गम्मा, असञ्ज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा, (चौथा, पाचवा, छठा) ये १२ गम्मा तेउकाय से हुए । इसी तरह १२ गम्मा वायुकाय से हुए । ये २४ गम्मा हुए ।

सञ्ज्ञी मनुष्य मरकर सातवीं नरक मे जाता है । जिसके ९ गम्मा होते है । सर्वार्थसिद्ध के देवता मरकर मनुष्य मे आता है, जिसके ३ गम्मा (सातवा, आठवा, नववा) होते है । सञ्ज्ञी तिर्यंच, सञ्ज्ञी मनुष्य, असञ्ज्ञी तिर्यंच, ये तीन तिर्यंच युगलिया और मनुष्य युगलिया मे उपजते है, जिसके दो-दो भव के दो-दो (तीसरा, नववा) गम्मा होते है, ये १२ गम्मा (३ X २ = ६ X २ = १२ गम्मा) हुए । सब मिलाकर ७७४ गम्मा (७२६ + २४ + ९ + ३ + १२ = ७७४) हुए ।

(२) जघन्य २ भव के और उत्कृष्ट ८ भव के १६४६ गम्मा होते है । वे इस प्रकार है—

सञ्ज्ञी तिर्यय और सञ्ज्ञी मनुष्य मरकर २६ स्थान मे जाते है (सातवीं नारकी को छोड कर बाकी नारकियो से लेकर आठवे देवलोक तक) और २६ स्थान के आते है । इस प्रकार तिर्यंच के ५२ और मनुष्य के ५२ ये १०४ X ९ गम्मा से गुणा करने से ९३६ गम्मा हुए ।

पृथ्वीकाय के जीव मरकर १० औदारिक मे जाते हैं और बारह के आते हैं । पाच स्थावर और तीन विकलेन्द्रिय, इन आठ स्थान के ५-५ गम्मा (३-६-७-८-९) करने से ४० गम्मा होते हैं । सज्ञी तिर्यंच असज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य इन तीन स्थान के ९-९ गम्मा करने से २७ गम्मा होते हैं । असज्ञी मनुष्य पृथ्वीकाय में आते हैं, उसके ३ गम्मा (३-५-६) होते है । ये सब मिला कर पृथ्वीकाय के ७० गम्मा (४०+२७+३ = ७०) होते है । इसी तरह बाकी ४ स्थावर और ३ विकलेन्द्रिय के भी ७०-७० गम्मा कह देना चाहिए । इस प्रकार ७० X ८ = ५६० गम्मा हुए । इनमे से तेउकाय और वायुकाय सज्ञी मनुष्य और असज्ञी मनुष्य मे नहीं आते, जिसके २४ गम्मा (९+३ = १२ X २ = २४) कम कर देने से ५३६ गम्मा रहे ।

घर एक तिर्यंच का– तिर्यंच मे १२ औदारिक के आते हैं, जिनमे से पाच स्थावर और तीन विकलेन्द्रिय इन आठ के ९-९ गम्मा करने से ७२ गम्मा हुए । सज्ञी तिर्यंच, सज्ञी मनुष्य और असज्ञी तिर्यंच, इनके ७-७ गम्मा (तीसरा, नवमा गम्मा वर्जकर) करने से २१ गम्मा हुए । असज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा (४-५-६) हुए । ७२+२१+३ = ९६ गम्मा हुए ।

घर एक मनुष्य का– मनुष्य मे १० औदारिक के (तेउकाय, वायुकाय छोड कर) आते हैं, जिनमे से पृथ्वीकाय, अप्काय और वनस्पतिकाय तथा तीन विकलेन्द्रिय, इन छह स्थानो के ९-९ गम्मा करने से ५४ गम्मा होते हैं । सज्ञी तिर्यंच, सज्ञी मनुष्य और असज्ञी तिर्यंच, इनके ७-७ गम्मा (तीसरा, नवमा वर्जकर) करने से २१ गम्मा होते हैं । असज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा (चौथा, पाचवा, छठा) होते है । ये सब मिलाकर ७८ गम्मा (५४+२१+३=७८) होते हैं । आगे के सब गम्मा मिलाकर १६४६ (९३६ + ५३६ + ९६ + ७८ = १६४६) गम्मा होते है ।

(३) दो भव और असख्याता भव के ९६ गम्मा होते है– चार स्थावर मरकर पाच स्थावर मे जाते है और वनस्पतिकाय जीव मरकर चार स्थावर मे जाते है । इन २४ स्थानो मे दो भव और असख्याता भवो के ४-४ गम्मा (१-२-४-५) होते है, इस प्रकार ९६ गम्मा (२४ X ४ = ९६) होते है ।

(४) दो भव और अनन्ता भव के ४ गम्मा होते है– वनस्पतिकाय मरकर वनस्पतिकाय मे उत्पन्न होती है, जिसके ४ गम्मा (१-२-४-५) होते है ।

(५) दो भव और सख्याता भवो के १५६ गम्मा होते हैं– तीन विकलेन्द्रिय मरकर द्वीन्द्रिय मे उपजते हैं । द्वीन्द्रिय मरकर पाच स्थावर मे उपजते है । पाच स्थावर मरकर द्वीन्द्रिय मे उपजते है । इन तेरह स्थानो के ४-४ गम्मा (१-२-४-५) करने से द्वीन्द्रिय के ५२ गम्मा होते है । इसी प्रकार त्रीन्द्रिय के ५२ गम्मा और चतुरिन्द्रिय के ५२ गम्मा होते है । ये सब मिला कर १५६ गम्मा (५२ X ३ = १५६) होते है ।

(६) तीन भव और सात भव जाने सबधी, दो भव और छह भव आने सबधी के १०२ गम्मा होते है– मनुष्य मरकर पाच स्थान में (४ देवलोक, १ नवग्रैवेयक) जाता है, उसके ९-९ गम्मा करने से ४५ गम्मा होते है । तिर्यंच मरकर सातवीं नरक मे जाता है, उसके ६ गम्मा * होते है–४५ + ६ = ५१ । ये ५१ गम्मा जाने सबधी और ५१ गम्मा आने सबधी, ये सब १०२ गम्मा होते है ।

(७) तीन भव और पाच भव जाने सबधी तथा दो भव और चार भव आने सबधी, इनके २४ गम्मा होते है– मनुष्य

** नोट– ७ वीं नरक मे जाने सबधी ६ गम्मा (१-२-४-५-७-८), ७ वीं नरक से जाने सबधी ६ गम्मा (१-२-३-४-५-६) ।*

मरकर चार अनुत्तर विमान मे जाता है, जिसके ९ गम्मा होते हैं । तिर्यंच मरकर सातवीं नरक मे जाता है, जिसके ३ गम्मा * होते हैं । ये १२ गम्मा (९ + ३ = १२) जाने की अपेक्षा और १२ गम्मा आने की अपेक्षा, कुल २४ गम्मा होते है ।

(८) तीन भव जाने की अपेक्षा ३ गम्मा होते हैं– मनुष्य सर्वार्थसिद्ध मे जाता है, उसके ३ गम्मा (तीसरा, छठा, नवमा) होते है ।

ये सब मिलाकर २८०५ गम्मा (७७४ + १६४६ + ९६ + ४ + १५६ + १०२ + २४ + ३ = २८०५ गम्मा) हुए ।

६-छठे बोले नाणत्ता १९९८, अर्थात् १९९८ बोलो का नाणत्ता (फर्क) पडता है–

असज्ञी तिर्यंच मरकर १२ स्थानो मे जाता है, जिसमे ५-५ बोलो का नाणत्ता (फर्क) पडता है– जघन्य गम्मा (जघन्य स्थितिवाले जाते हैं उनको जघन्य गम्मा कहते हैं) ३, हैं जिनमे ३ बोलो का फर्क पडता है । जैसे कि अन्तर्मुहूर्त का आयुष्य, जो जीव नारकी मे जाता है उसके अध्यवसाय (परिणाम) अशुभ होते हैं और जो देवता मे जाता है उसके अध्यवसाय शुभ होते हैं । जितना आयुष्य होता है, उतना ही अनुबन्ध (गति, जाति, अवगाहना, स्थिति अनुभाग और प्रदेश) होता है । उत्कृष्ट गम्मा (उत्कृष्ट स्थिति वाले जाते है उनको उत्कृष्ट गम्मा कहते हैं) ३ हैं, जिनमे दो बोलो का नाणत्ता (फर्क) पडता है– करोड पूर्व का आयुष्य होता है और आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । इस प्रकार नाणत्ता (फर्क) के ६० बोल (१२ X ५ = ६०) हुए ।

सज्ञी तिर्यंच मरकर २७ स्थानो मे जाता है, जिसमे १०-१० बोलो का फर्क (नाणत्ता) पडता है– जघन्य गम्मा ३,

---

** ७ वीं नरक मे जाने सबधी ३ गम्मा (३-६-९), ७ वीं नरक से आने सबधी ३ गम्मा (७-८-९)*

जिनमे ८ बोलो का फर्क पडता है (नाणत्ता होता है)– (१) अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट प्रत्येक धनुष की । (२) जो नारकी मे जाता है उसमे ३ लेश्या होती है । जो भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, पहले दूसरे देवलोक मे जाता है, उसमे ४ लेश्या होती है । जो तीसरे चौथे पाचवे देवलोक मे जाता है उसमे ५ लेश्या होती हैं । ऊपर के तीन देवलोक मे (छठे, सातवे, आठवे मे) लेश्या मे फर्क नहीं पडता है (३) ज्योतिषी तक जाने वालो मे एक मिथ्यादृष्टि पाई जाती है । उससे आगे दो दृष्टि पाई जाती है । (४) ज्ञान– ज्योतिषी तक जाने वालो मे दो अज्ञान पाये जाते है, उससे ऊपर जाने वालो मे दो ज्ञान, दो अज्ञान पाये जाते हैं । (५) समुद्घात– समुद्घात तीन पाई जाती है । (६) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का । (७) अध्यवसाय– जो जीव नारकी मे जाता है, उसके अध्यवसाय अशुभ होते है और जो जीव देवता मे जाता है, उसके अध्यवसाय शुभ होते है । (८) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है । उत्कृष्ट गम्मा तीन होते है– उनमे दो बोलो का फर्क पडता है (नाणत्ता है)। करोड पूर्व का आयुष्य होता है और आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । २७ X १० = २७० । छठे, सातवे, आठवे देवलोक मे लेश्या का फर्क नहीं है, इसलिए तीन बोल बाकी निकालने पर शेष २६७ रहे ।

सज्ञी मनुष्य मरकर १५ स्थानो मे (पहली नारकी, १० भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक) जाता है, उसमे ८-८ बोलो का नाणत्ता (फर्क) पडता है– जघन्य गम्मा ३ है, उनमे ५ बोलो का फर्क पडता है– (१) प्रत्येक अगुल की अवगाहना, (२) तीन ज्ञान, तीन अज्ञान की भजना, (३) समुद्घात ५, (४) प्रत्येक मास का आयुष्य, (५) आयुष्य के अनुसार अनुबध । उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमे ३ बोलो का फर्क (नाणत्ता) पडता है– (१) पाच सौ धनुष की अवगाहना, (२) करोड पूर्व का आयुष्य,

(३) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध । १५ X ८ = १२० ।

सन्नी मनुष्य मरकर १९ स्थानो मे (दूसरे से सातवीं तक ६ नारकी, तीसरे से बारहवे तक १० देवलोक, नव ग्रैवेयक, चार अनुत्तर विमान, सर्वार्थसिद्ध) जाता है, उनमे ६-६ बोलो का फर्क पडता है– जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमे तीन बोलो का फर्क पडता है– (१) प्रत्येक हाथ की अवगाहना, (२) प्रत्येक वर्ष का आयुष्य, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध । उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमे ३ बोलो का फर्क पडता है– (१) पाच सौ धनुष की अवगाहना, (२) करोड पूर्व का आयुष्य, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबध । १९ X ६ = ११४ ।

दो प्रकार के युगलिया (मनुष्य, तिर्यंच) मरकर १४ प्रकार के देवता (१० भवनपति, वाणव्यन्तर ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक) मे जाते है । दो प्रकार के युगलिया मरकर दस भवनपति, वाणव्यन्तर मे जाते है, उनमे तिर्यंच युगलिया मे ५ बोलो का फर्क पडता है– जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमे ३ बोलो का फर्क पडता है– (१) अवगाहना– जघन्य प्रत्येक धनुष की, उत्कृष्ट १००० धनुष झाझेरी । (२) करोड पूर्व झाझेरी आयुष्य । (३) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ है, उनमे दो बोलो का फर्क पडता है– (१) तीन पल्य का आयुष्य, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है ।

मनुष्य युगलिया मे ६ बोलो का फर्क पडता है । जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमे ३ बोलो का फर्क पडता है– (१) अवगाहना ५०० धनुष झाझेरी, (२) करोड पूर्व झाझेरा आयुष्य, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमे ३ बोलो का फर्क पडता है– (१) अवगाहना तीन गाऊ की, (२) आयुष्य ३ पल का, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है ।

दो प्रकार के युगलिया मरकर ज्योतिषी देवो मे जाते हैं ।

तिर्यंच युगलिया मे ५ बोलो का फर्क पडता है और मनुष्य युगलिया मे ६ बोलो का फर्क पडता है । तिर्यंच युगलिया मे जघन्य गम्मा ३ है, उनमे ३ बोलो का फर्क पडता है–(१) अवगाहना– जघन्य प्रत्येक धनुष की, उत्कृष्ट १००० धनुष झाझेरी है । (२) आयुष्य– आयुष्य पल का आठवा भाग । (३) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ है, उनमे दो बोलो का फर्क पडता है– (१) आयुष्य तीन पल का । (२) आयुष्य के अनुसार अनुबंध होता है । मनुष्य युगलिया मे ६ बोलो का फर्क पडता है– जघन्य गम्मा ३ है, उनमे ३ बोलो का फर्क पडता है – (१) अवगाहना– ९०० धनुष झाझेरी (२) आयुष्य पल का आठवा भाग । (३) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमे ३ बोलो का फर्क पडता है– (१) अवगाहना– तीन गाऊ की । (२) आयुष्य– तीन पल का । (३) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है ।

दो प्रकार के युगलिया मरकर पहले दूसरे देवलोक मे जाते है । तिर्यंच युगलिया मे ५ बोलो का फर्क पडता है और मनुष्य युगलिया मे ६ बोलो का फर्क पडता है । तिर्यंच युगलिया मे जघन्य गम्मा ३ है, उनमे ३ बोलो का फर्क पडता है– (१) अवगाहना– जघन्य प्रत्येक मनुष्य की, उत्कृष्ट पहले देवलोक मे दो गाऊ की, दूसरे देवलोक मे दो गाऊ झाझेरी । (२) आयुष्य– पहले देवलोक की अपेक्षा एक पल्योपम, दूसरे देवलोक की अपेक्षा एक पल्योपम झाझेरी । (३) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ है, उनमे दो बोलो का फर्क पडता है– (१) आयुष्य तीन पल्योपम का, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । मनुष्य युगलिया मे ६ बोलो का फर्क पडता है। जघन्य गम्मा ३ है, उनमे ३ बोलो का फर्क पडता है– (१) अवगाहना– जघन्य उत्कृष्ट एक गाऊ की पहले देवलोक की अपेक्षा , दूसरे देवलोक की जघन्य

उत्कृष्ट एक गाऊ झाझेरी । (२) आयुष्य पहले देवलोक की अपेक्षा एक पल्योपम का, दूसरे देवलोक की अपेक्षा एक पल्योपम झाझेरा । (३) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें ३ बोलो का फर्क पडता है– (१) अवगाहना– तीन गाऊ की । (२) आयुष्य ३ पल का, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबद्द ा होता है ।

तिर्यंच युगलिया मरकर १४ स्थानो मे जाता है, जिसके ७० नाणत्ता (१४ X ५ = ७० बोलो का फर्क) है । मनुष्य युगलिया मरकर १४ स्थानो मे जाता है, जिसके ८४ नाणत्ता (१४ X ६ = ८४ बोलो का फर्क) है । दोनो का मिलाकर १५४ नाणत्ता (७० + ८४ = १५४) होते हैं ।

पृथ्वीकाय मरकर पृथ्वीकायपने उपजती है, उसमे ६ बोलो का फर्क पडता है । जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमे ४ बोलो का फर्क पडता है– (१) लेश्या ३ होती हैं । (२) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का, (३) अध्यवसाय बुरे होते हैं । (४) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमें २ बोलो का फर्क पडता है– (१) २२००० वर्ष का आयुष्य (स्थिति) होता है, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है ।

अप्काय मरकर पृथ्वीकाय मे उपजती है, उसमे ६ बोलो का फर्क पडता है । जघन्य गम्मा ३ है, उनमे ४ बोलो का फर्क पडता है– (१) लेश्या ३ होती हैं, (२) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का, (३) अध्यवसाय अशुभ, (४) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमे २ बोलो का फर्क पडता है– (१) ७००० वर्ष का आयुष्य, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है ।

तेउकाय मरकर पृथ्वीकाय मे उपजती है, उसमे ५ बोलो का फर्क पडता है । जघन्य गम्मा ३ है, उनमे ३ बोलो का फर्क पडता है– (१) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का, (२) अध्यवसाय अशुभ, (३)

आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमे २ बोलो का फर्क पडता है– (१) आयुष्य तीन अहोरात्रि का, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है ।

वायुकाय मरकर पृथ्वीकाय मे उपजती है, उसमे ५ बोलो का फर्क पडता है । जघन्य गम्मा ३ है, उनमे ४ बोलो का फर्क पडता है– (१) समुद्घात ३ होती है, (२) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का, (३) अध्यवसाय अशुभ होते है, (४) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ है, उनमे २ बोलो का फर्क पडता है– (१) आयुष्य ३००० वर्ष का (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है ।

वनस्पति मरकर पृथ्वीकाय में उपजती है– उसमे ७ बोलो का फर्क पडता है । जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमे ५ बोलो का फर्क पडता है– (१) अवगाहना, अगुल के असख्यातवे भाग, (२) लेश्या ३, (३) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का, (४) अध्यवसाय अशुभ होते है, (५) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ है, उनमे २ बोलो का फर्क पडता है– (१) आयुष्य १०००० वर्ष का, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है ।

तीन विकलेन्द्रिय (द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय) और असज्ञी तिर्यंच मरकर पृथ्वीकाय में उत्पन्न होते है, उनमे ९-९ बोलो का फर्क पडता है । जघन्य गम्मा ३ है, उनमे ७ बोलो का फर्क पडता है– (१) अवगाहना अगुल के असख्यातवे भाग, (२) दृष्टि एक मिथ्यादृष्टि, (३) दो अज्ञान, (४) योग एक-काययोग, (५) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का, (६) अध्यवसाय अशुभ, (७) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ है, उनमे दो बोलो का फर्क पडता है– (१) द्वीन्द्रिय की स्थिति १२ वर्ष की, त्रीन्द्रिय की स्थिति ४९ दिन की, चतुरिन्द्रिय की स्थिति छह महीने की और असज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय की स्थिति करोड पूर्व की है । (२) आयुष्य

के अनुसार अनुबन्ध होता है । ४ X ९ = ३६ बोलो का फर्क है ।

सज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य मर कर पृथ्वीकाय मे उत्पन्न होते हैं । उनमे तिर्यंच मे ११ बोलो का और मनुष्य मे १२ बोलो का फर्क पडता है । जघन्य गम्मा ३ हैं, उन दोनो मे (तिर्यंच और मनुष्य मे) ९-९ बोलो का फर्क पडता है– (१) अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग (२) लेश्या तीन (३) दृष्टि एक मिथ्यादृष्टि (४) ज्ञान नहीं, अज्ञान दो (५) योग एक काय का (६) समुद्घात तीन (७) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का (८) अध्यवसाय-अशुभ * (९) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमे तिर्यंच मे दो बोलो का फर्क पडता है– (१) करोड पूर्व का आयुष्य, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । मनुष्य में उत्कृष्ट गम्मा ३ में तीन बोलों का फर्क पडता है – (१) अवगाहना ५०० धनुष की + (२) करोड़ पूर्व का आयुष्य, (३) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है । तिर्यंच मे ११ बोलो का और मनुष्य मे १२ बोलो का फर्क पडता है, ये दोनो मिला कर २३ हुए ।

चौदह प्रकार के देवता मरकर पृथ्वीकाय मे उत्पन्न होते हैं, उनमे ४-४ बोलो का फर्क पडता है । जघन्य गम्मा ३ हैं,

---

** मनुष्य के चौथा गम्मा मे अध्यवसाय शुभ और अशुभ दोनो होते हैं । पाचवे गम्मे मे अध्यवसाय अशुभ होते हैं और छठे गम्मे मे अध्यवसाय शुभ होते हैं ।*

+ अगुल के असख्यातवे भाग की अवगाहना वाले सज्ञी तिर्यंच का आयुष्य करोड पूर्व का हो सकता है । इसलिए तिर्यंच के उत्कृष्ट गम्मो मे दो बोलो का फर्क पडा है। अगुल के असख्यातवे भाग की अवगाहना वाले मनुष्य का आयुष्य करोड पूर्व नहीं हो सकता है, इसलिए मनुष्य के उत्कृष्ट गम्मो मे तीन बोलो का फर्क पडा है ।

उनमे दो बोलो का फर्क पडता है– (१) जघन्य स्थिति अपने-अपने स्थान के अनुसार होती है, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ है, उनमे दो बोलो का फर्क पडता है– (१) उत्कृष्ट स्थिति अपने-अपने स्थान के अनुसार होती है । (२) आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है । १४ X ४ = ५६ नाणत्ता (फर्क) ।

पाच स्थावर के ३०, तीन विकलेन्द्रिय और असज्ञी तिर्यंच के ३६, सज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य के २३ और चौदह प्रकार के देवता के ५६, ये सब मिलाकर १४५ (३० + ३६ + २३ + ५६ = १४५) नाणत्ता (फर्क) हुए ।

जिस तरह पृथ्वीकाय के १४५ नाणत्ता (फर्क) कहे गये है, उसी तरह अप्काय के १४५ और वनस्पतिकाय के १४५ नाणत्ता कह देने चाहिए । तेउकाय, वायुकाय और तीन विकलेन्द्रिय मे ८९-८९ नाणत्ता कह देने चाहिए अर्थात् पृथ्वीकाय मे जो १४५ नाणत्ता कहे गये है उनमे से चौदह प्रकार के देवता के ५६ नाणत्ता (फर्क) कम कर देने चाहिए, क्योकि तेउकाय, वायुकाय और तीन विकलेन्द्रियो मे देवता उत्पन्न नहीं होते है ।

तिर्यंच पचेन्द्रिय मे १९७ नाणत्ता होते है । जिनमे १४५ तो पृथ्वीकाय मे कहे अनुसार कह देने चाहिए । सात नारकी, ६ देवलोक (तीसरा से आठवे देवलोक तक) इन १३ स्थानो के जीव तिर्यंच पचेन्द्रिय मे उपजते हैं, उनमे दो बोलो का फर्क है– (१) जघन्य स्थिति अपने अपने स्थान के अनुसार होती है, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमे दो बोलो का फर्क पडता है– (१) उत्कृष्ट स्थिति अपने अपने स्थान के अनुसार होती है, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । १३ X ४ = ५२ । ये सब मिलाकर १९७ (१४५ + ५२ = १९७) नाणत्ता हुए ।

मनुष्य मे २०६ नाणत्ता होते हैं– पृथ्वीकाय के ६, अप्काय के ६, वनस्पतिकाय के ७, तीन विकलेन्द्रिय के २७, असज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय के ९, सज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय के ११, सज्ञी मनुष्य के १२, वैक्रिय के ३२ स्थानो के १२८ (पहली से लेकर छठी नारकी तक ६ नारकी, १० भवनपति, १ वाणव्यन्तर, १ ज्योतिषी, १२ देवलोक, १ नवग्रैवेयक, १ चार अनुत्तर विमान) इन ३२ स्थानो मे ४-४ बोलो का फर्क पडता है । जघन्य गम्मा ३ हैं, उनमे दो बोलो का फर्क पडता है– (१) जघन्य स्थिति अपने अपने स्थान के अनुसार होती है, (२) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । उत्कृष्ट गम्मा ३ हैं, उनमे दो बोलो का फर्क पडता है– (१) उत्कृष्ट स्थिति अपने-अपने स्थान के अनुसार होती है । (२) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । (३२ X ४ = १२८) । ये सब मिलाकर मनुष्य के २०६ नाणत्ता (६ + ६ + ७ + २७ + ९ + ११ + १२ + १२८ = २०६) हुए ।

शुरू से लेकर सब नाणत्तो (फर्क) को मिलाने से १९९८ नाणत्ता (६० + २६७ + १२० + ११४ + १५४ + १४५ + १४५ + १४५ + ८९ + ८९ + ८९ + ८९ + ८९ + १९७ + २०६ = १९९८) हुए ।

७-सातवा बोल * १ अवगाहना , २ लेश्या, ३ दृष्टि, ४ ज्ञान, ५ योग, ६ समुद्घात, ७ आयुष्य, ८ अध्यवसाय, ९ अनुबन्ध, इन ९ बोलो मे फर्क पडता है ।

८-आठवे बोले गम्मा ९ होते हैं– १ औघिक को औघिक से (जीव जहॉ से मरकर जाता है, वहॉं की स्थिति और जहॉं जाकर उत्पन्न होता है वहॉं की स्थिति से कहना चाहिए । एक बार

** उच्चत्त मेव लेस्सा दिट्ठी, नाण जोग समुग्घाओ ।*
आउ अणुबध अज्झवसाणा, नव ठाणे नाणत्ता होइ ।।

जघन्य स्थिति से कहना चाहिए और एक बार उत्कृष्ट स्थिति से कहना चाहिए) । २ औघिक को जघन्य से (जहॉ से मरकर जाता है वहॉ की औघिक और जहाँ उत्पन्न होता है वहॉ की जघन्य) । ३ औघिक को उत्कृष्ट से (यहॉ की औघिक और उत्पत्तिस्थान की उत्कृष्ट) । ४ जघन्य को औघिक से (यहॉ की जघन्य और उत्पत्तिस्थान की औघिक) । ५ जघन्य को जघन्य से (दोनो जगह की जघन्य) । ६ जघन्य को उत्कृष्ट से (यहाँ की जघन्य और उत्पत्तिस्थान की उत्कृष्ट) । ७ उत्कृष्ट को औघिक से (यहॉ की उत्कृष्ट और उत्पत्तिस्थान की औघिक) । ८ उत्कृष्ट को जघन्य से (यहॉ की उत्कृष्ट और उत्पत्तिस्थान की जघन्य) । ९ उत्कृष्ट को उत्कृष्ट से (यहॉ की और उत्पत्तिस्थान दोनो जगह की उत्कृष्ट) कह देनी चाहिए ।

९-नवमे बोले बीस द्वारो की दो गाथाए–

उववाय परिमाण, सघयणुच्चत्तमेव सठाण ।
लेस्सा दिट्ठी णाणे, अण्णाणे जोग उवओगे ।। १ ।।
सण्णा कसाय इदिय, समुग्घाया वेयण य वेदे य ।
आउ अज्झवसाणा, अणुबधो कायसवेहो ।। २ ।।

घर एक पहली नारकी का-असज्ञी तिर्यंच आकर उत्पन्न होता है । (१) कितनी स्थिति मे उत्पन्न होता है ? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट पल के असख्यातवे भाग की स्थिति मे उत्पन्न होता है । (२) परिमाण– एक समय मे १, २, ३, यावत् सख्याता असख्याता उत्पन्न होते है । (३) सहनन (सघयण)– एक छेवट्ठ(सेवार्त) पाया जाता है। (४) अवगाहना– जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट १००० योजन की होती है । (५) सस्थान (सठाण)– एक हुण्डक होता है । (६) लेश्या– ३ कृष्ण, नील, कापोत । (७) दृष्टि– एक मिथ्यादृष्टि । (८) ज्ञान–ज्ञान नहीं होते हैं, मति-अज्ञान श्रुत-अज्ञान दो अज्ञान होते है । (९)

योग– वचनयोग और काययोग, दो योग होते हैं । (१०) उपयोग– साकार-उपयोग और अनाकारोपयोग, ये दो उपयोग होते हैं । (११) सज्ञा–४ सज्ञाए । (१२) कषाय–कषाय ४ । (१३) इन्द्रिय–इन्द्रिय ५ । (१४) समुद्घात–समुद्घात ३ । (१५) वेदना– साता और असाता, ये दो वेदनाए । (१६) वेद– वेद एक नपुसक । (१७) आयुष्य– आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड पूर्व । (१८) अध्यवसाय– शुभ और अशुभ, ये दो अध्यवसाय । (१९) आयुष्य के अनुसार अनुबध होता है । (२०) कायसवेध– कायसवेध के दो भेद हैं- भवादेश (भव की अपेक्षा) और कालादेश (काल की अपेक्षा) । भवादेश से (भव की अपेक्षा से)- जघन्य उत्कृष्ट दो भव करता है। * कालादेश से (काल की अपेक्षा) ९ गम्मा होते हैं– (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक– अन्तर्मुहूर्त दस हजार वर्ष, करोड पूर्व के पल असख्यातवे भाग + । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य– अन्तर्मुहूर्त दस हजार वर्ष, करोड पूर्व दस हजार वर्ष । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट– अतर्मुहूर्त पल का असख्यातवा भाग, करोड पूर्व का असख्यातवा भाग । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक–

** प्रथम भव मे असज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय होता है और दूसरे भव मे नैरयिक होता है । वहाँ से निकल कर असज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रियपणा प्राप्त नहीं करता है किन्तु सज्ञीपणा अवश्य प्राप्त करता है । इसलिए भव की अपेक्षा दो भव का कायसवेध होता है ।*

+ काल की अपेक्षा– जघन्य कायसवेध असज्ञी का जघन्य आयुष्य अन्तर्मुहूर्त सहित, नरक का जघन्य आयुष्य दस हजार वर्ष होता है और उत्कृष्ट कायसवेध– असज्ञी का उत्कृष्ट आयुष्य करोड पूर्व वर्ष सहित रत्नप्रभा का उत्कृष्ट आयुष्य पल्योपम का असख्यातवा भाग प्रमाण होता है ।

अतर्मुहूर्त दस हजार वर्ष, अतर्मुहूर्त पल का असख्यातवा भाग । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– अतर्मुहूर्त दस हजार वर्ष, अतर्मुहूर्त दस हजार वर्ष । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट–अतर्मुहूर्त पल का असख्यातवा भाग, अतर्मुहूर्त पल का असख्यातवा भाग । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक–करोड पूर्व दस हजार वर्ष, करोड पूर्व पल का असख्यातवा भाग । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– करोड पूर्व दस हजार वर्ष, करोड पूर्व दस हजार वर्ष । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–करोड पूर्व पल का असख्यातवा भाग, करोड पूर्व पल का असख्यातवा भाग ।

घर एक – पहली नारकी से सातवीं नारकी तक–सज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य आकर उत्पन्न होते हैं । कितनी स्थिति मे उत्पन्न होते है ? पहली नारकी मे जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक सागर । दूसरी नारकी मे जघन्य एक सागर, उत्कृष्ट तीन सागर । तीसरी नारकी मे जघन्य तीन सागर, उत्कृष्ट सात सागर । चौथी नारकी मे जघन्य सात सागर, उत्कृष्ट दस सागर । पाचवीं नारकी मे जघन्य दस सागर, उत्कृष्ट सतरह सागर । छठी नारकी मे जघन्य १७ सागर, उत्कृष्ट २२ सागर । सातवीं नारकी मे जघन्य २२ सागर उत्कृष्ट ३३ सागर की स्थिति मे उत्पन्न होते है । (२) परिमाण– मनुष्य एक समय मे १, २, ३ यावत् सख्याता उत्पन्न होते है । तिर्यंच एक समय मे १, २, ३ यावत् असख्याता उत्पन्न होते है, किन्तु इतनी विशेषता है कि सातवीं नरक मे तीसरे और नवमे गम्मा मे सख्याता उत्पन्न होते हैं । (३) सहनन (सघयण)– पहली दूसरी नारकी मे ६ सहनन वाला जाता है । तीसरी मे ५ सहनन वाला, चौथी मे ४ सहनन वाला, पाचवीं मे ३ सहनन वाला, छठी मे २ सहनन वाला और सातवी मे एक

वज्रऋषभनाराचसहनन वाला जीव जाता है ।

(४) अवगाहना– तिर्यंच जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट १००० योजन की अवगाहना वाला जाता है । पहली नारकी मे जाने वाले मनुष्य की अवगाहना जघन्य प्रत्येक अगुल की होती है और दूसरी से सातवीं नारकी तक जघन्य प्रत्येक हाथ की, उत्कृष्ट ५०० धनुष की होती है । (५) सस्थान (सठाण)– छहो सस्थान वाला जीव सातो नारकियो में जाता है । (६) लेश्या– जानेवालो मे छह-छह लेश्या पाई जाती हैं । (७) दृष्टि– जानेवालो मे दृष्टि तीन-तीन होती हैं । (८) ज्ञान– जानेवाले तिर्यंच मे ३ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना, जानेवाले मनुष्य मे ४ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना । (९) योग– जानेवालो मे योग तीन-तीन । (१०) उपयोग– जानेवालो मे उपयोग दो-दो साकार-उपयोग और निराकार-उपयोग । (११) सज्ञा– जानेवालो में सज्ञा चार-चार । (१२) कषाय– जानेवालो में कषाय चार-चार । (१३) इन्द्रिय– जानेवालो मे इन्द्रिय पाच-पाच । (१४) समुद्घात– जानेवाले तिर्यंच मे ५ और मनुष्य मे ६ । (१५) वेदना– जानेवालो मे वेदना दोनो साता और असाता । (१६) वेद– पहली से छठी नारकी तक तीन-तीन वेद वाले जाते हैं, सातवीं मे दो वेद (पुरुषवेद, पुरुषनपुसकवेद) वाले जाते है । (१७) आयुष्य– जाने वाले तिर्यंच का जघन्य अन्तर्मुहूर्त, पहली नारकी मे जाने वाले मनुष्य का जघन्य प्रत्येक मास, दूसरी से सातवीं तक जघन्य प्रत्येक वर्ष, उत्कृष्ट मनुष्य तिर्यंच का करोड पूर्व का होता है । (१८) अध्यवसाय– जानेवालो मे शुभ और अशुभ दोनो होते है । (१९) अनुबन्ध– आयुष्य के अनुसार अनुबन्ध होता है । (२०) कायसंवेध– कायसवेध के दो भेद– भवादेश (भव की अपेक्षा), कालादेश (काल की अपेक्षा) । भवादेश से– तिर्यंच और मनुष्य पहली नारकी से छठी नारकी तक जघन्य दो भव करते है और उत्कृष्ट ८ भव

करते है । सातवीं नारकी मे तिर्यंच छह गम्मा (तीजा, छठा, नवमा टल्या) की अपेक्षा जाने सबधी तीन भव, सात भव करते है और आने सबधी दो भव छह भव करते है । तीन गम्मा (तीजा, छठा, नवमा) जाने सबधी तीन भव, पाच भव करते है और आने सबधी तीन गम्मा (सातवा, आठवा, नवमा) दो भव चार भव करते है । मनुष्य सातवीं नारकी के दो भव करता है । कालादेश (काल की अपेक्षा) से ९ गम्मे कह देने चाहिए * (१) पहला गम्मा–औघिक और औघिक-(तिर्यंच का) अन्तर्मुहूर्त (मनुष्य का) प्रत्येक मास दस हजार वर्ष, चार करोड पूर्व चार सागरोपम । (२) दूसरा गम्मा–औघिक और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास दस हजार वर्ष, चार करोड पूर्व ४० हजार वर्ष । (३) तीसरा गम्मा–औघिक और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास एक सागरोपम, चार करोड पूर्व चार सागरोपम । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास दस हजार वर्ष, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक मास चार सागरोपम । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास दस हजार वर्प, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक मास ४० हजार वर्ष । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास एक सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक मास चार सागरोगपम । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– करोड पूर्व दस हजार वर्प, चार करोड पूर्व चार सागरोपम । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– करोड पूर्व दस हजार वर्प, चार करोड पूर्व ४० हजार वर्प । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–करोड पूर्व एक सागरोपम, चार करोड पूर्व चार सागरोपम । दूसरी नारकी ९ गम्मे–(१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक– (तिर्यंच

** पहली नारकी मे जघन्य मे तिर्यंच का अन्तर्मुहूर्त से कहना, मनुप्य का प्रत्येक मास से कहना ।*

का) अन्तर्मुहूर्त (मनुष्य का) प्रत्येक वर्ष * एक सागरोपम चार करोड पूर्व बारह सागरोपम । (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष एक सागरोपम, चार करोड पूर्व चार सागरोपम । (३) तीसरा गम्मा– औधिक और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार करोड पूर्व बारह सागरोपम । (४) चौथा गम्मा–जघन्य और औधिक–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष एक सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष बारह सागरोपम । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष एक सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष चार सागरोपम । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष बारह सागरोपम । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औधिक–करोड पूर्व एक सागरोपम, चार करोड पूर्व बारह सागरोपम । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य–करोड पूर्व एक सागरोपम, चार करोड पूर्व चार सागरोपम, (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–करोड पूर्व तीन सागरोपम, चार करोड पूर्व बारह सागरोपम । तीसरी नारकी से ९ गम्मे इस प्रकार कहने चाहिए– (१) पहला गम्मा– औधिक और औधिक–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार करोड पूर्व अट्ठाईस सागरोपम । (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार करोड पूर्व बारह सागरोपम । (३) तीसरा गम्मा– औधिक और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार करोड पूर्व अट्ठाईस सागरोपम । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औधिक – अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष अट्ठाईस सागरोपम । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– अन्तर्मुहूर्त

** दूसरी नारकी से सातवीं नारकी तक जघन्य से तिर्यंच का अन्तर्मुहूर्त से, मनुष्य का प्रत्येक वर्ष से कहना ।*

प्रत्येक वर्ष तीन सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष बारह सागरोपम (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष अट्ठाईस सागरोपम । (७) सातवा गम्मा–उत्कृष्ट और औघिक– करोड पूर्व तीन सागरोपम, चार करोड पूर्व अट्ठाईस सागरोपम । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य–करोड पूर्व तीन सागरोपम, चार करोड पूर्व बारह सागरोपम । (९) नवा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–करोड पूर्व सात सागरोपम, चार करोड पूर्व अट्ठाईस सागरोपम ।

चौथी नारकी से सात सागरोपम और दस सागरोपम से ९ गम्मे कह देने चाहिए– (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार करोड पूर्व चालीस सागरोपम । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य–अतर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार करोड पूर्व अट्ठाईस सागरोपम । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष दस सागरोपम, चार करोड पूर्व चालीस सागरोपम । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष ४० सागरोपम । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष सात सागरोपम, चार अतर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष अट्ठाईस सागरोपम । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष दस सागरोपम, चार अतर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष चालीस सागरोपम । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक–करोड पूर्व सात सागरोपम, चार करोड पूर्व चालीस सागरोपम । (८) आठवा गम्मा–उत्कृष्ट और जघन्य–करोड पूर्व सात सागरोपम, चार करोड पूर्व अट्ठाईस सागरोपम । (९) नवा गम्मा–उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–करोड पूर्व दस सागरोपम, चार

करोड़ पूर्व चालीस सागरोपम ।

पाचवीं नारकी से १० सागरोपम और १७ सागरोपम से ९ गम्मा कह देना चाहिए । (१) पहला गम्मा– औधिक और औधिक–अतर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष दस सागरोपम, चार करोड ६८ सागरोपम । (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य–अतर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष दस सागरोपम, चार करोड पूर्व चालीस सागरोपम । (३) तीसरा गम्मा– औधिक और उत्कृष्ट– अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष १७ सागरोपम, चार करोड पूर्व ६८ सागरोपम । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औधिक–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष दस सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष ६८ सागरोपम । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष दस सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष चालीस सागरोपम । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष १७ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार प्रत्येक वर्ष ६८ सागरोपम। (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औधिक–करोड़ पूर्व दस सागर, चार करोड पूर्व ६८ सागरोपम । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य–करोड पूर्व दस सागरोपम, चार करोड पूर्व चालीस सागरोपम । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– करोड पूर्व १७ सागरोपम, चार करोड पूर्व ६८ सागरोपम ।

छठी नारकी से १७ सागरोपम और २२ सागरोपम से ९ गम्मे कह देने चाहिए। (१) पहला गम्मा– औधिक और औधिक–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष १७ सागरोपम, चार करोड पूर्व ८८ सागरोपम । (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य– अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष १७ सागरोपम, चार करोड पूर्व ६८ सागरोपम । (३) तीसरा गम्मा– औधिक और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष बाईस सागरोपम, चार करोड पूर्व ८८ सागरोपम । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औधिक– अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष १७ सागरोपम, ४

अन्तर्मुहूर्त ४ प्रत्येक वर्ष ८८ सागरोपम । (५) पाचवा गम्मा–जघन्य और जघन्य– अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष १७ सागरोपम, ४ अन्तर्मुहूर्त ४ प्रत्येक वर्ष ६८ सागरोपम । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, ४ अन्तर्मुहूर्त ४ प्रत्येक वर्ष ८८ सागरोपम । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक–करोड पूर्व १७ सागरोपम, ४ करोड पूर्व ८८ सागरोपम । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य–करोड पूर्व १७ सागरोपम, चार करोड पूर्व ६८ सागरोपम । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–करोड पूर्व २२ सागरोपम, चार करोड पूर्व ८८ सागरोपम ।

सातवीं नारकी से ९ गम्मे २२ सागरोपम और ३३ सागरोपम से कह देने चाहिए। तिर्यंच से इस प्रकार कहने चाहिए- (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक– २ अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, ४ करोड पूर्व ६६ सागरोपम । (२) दूसरा गम्मा- औघिक और जघन्य–दो अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, ४ करोड पूर्व ६६ सागरोपम । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट–दो अन्तर्मुहूर्त तेतीस सागर, तीन करोड पूर्व ६६ सागरोपम । (४) जघन्य और औघिक– दो अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त ६६ सागरोपम । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य–दो अन्तर्मुहूर्त २२ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त ६६ सागरोपम । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट–दो अन्तर्मुहूर्त ३३ सागरोपम, तीन अन्तर्मुहूर्त ६६ सागरोपम । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक–दो करोड पूर्व २२ सागरोपम, चार करोड पूर्व ६६ सागरोपम । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य–दो करोड पूर्व २२ सागरोपम, चार करोड पूर्व ६६ सागरोपम । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–दो करोड पूर्व ३३ सागरोपम, तीन करोड पूर्व ६६ सागरोपम ।

मनुष्य से ९ गम्मे इस प्रकार कहने चाहिए– (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक–प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, करोड पूर्व ३३ सागरोपम । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य–प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, करोड पूर्व २२ सागरोपम । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट–प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, करोड पूर्व ३३ सागरोपम । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक–प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य-प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम, प्रत्येक वर्ष २२ सागरोपम । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट–प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक–करोड पूर्व २२ सागरोपम, करोड पूर्व ३३ सागरोपम । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य–करोड़ पूर्व २२ सागरोपम, करोड पूर्व २२ सागरोपम । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– करोड पूर्व ३३ सागरोपम, करोड पूर्व ३३ सागरोपम । यहाँ जो ऋद्धि के २० द्वार बताये हैं, ये मनुष्य तिर्यंच के सारे भव की अपेक्षा से है ।

पहला उद्देशा सपूर्ण ।

गम्मा १३५ नाणत्ता (फर्क) ११९ (असन्नी तिर्यंच के ५, सन्नी तिर्यंच के ७० तथा मनुष्य के ४४ कुल ११९) ।

दूसरा उद्देशा– घर १ असुरकुमार का–असज्ञी तिर्यंच आकर उत्पन्न होता है । कितनी स्थिति मे उत्पन्न होता है ? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट पल के असख्यातवे भाग । अध्यवसाय जघन्य स्थिति मे प्रशस्त कहना * बाकी रत्नप्रभापृथ्वी (पहली नरक) मे उत्पन्न होने वाले असज्ञी तिर्यंच मे कही, उस तरह कह देनी चाहिए और गम्मे भी उसी तरह कह देने चाहिए ।

---

* *सब देवताओं में जघन्य गम्मा मे अध्यवसाय प्रशस्त कहना चाहिए ।*

सज्ञी तिर्यंच सज्ञी मनुष्य आकर उत्पन्न होते है, कितनी स्थिति मे उत्पन्न होते है ? जघन्य दस हजार वर्ष की स्थिति मे, उत्कृष्ट एक सागरोपम झाझेरी स्थिति मे उत्पन्न होते है । बाकी परिमाण ऋद्धि गम्मे रत्नप्रभापृथ्वी मे उत्पन्न होने वाले सज्ञी तिर्यंच सज्ञी मनुष्य मे कहे उसी तरह कह देने चाहिए किन्तु उत्कृष्ट स्थिति मे एक सागर झाझेरी से कहनी चाहिए व तिर्यंच मे जघन्य स्थिति मे अध्यवसाय प्रशस्त कहना चाहिए और लेश्या चार कहनी चाहिये । तिर्यंच युगलिया और मनुष्य युगलिया ये दो प्रकार के युगलिया उत्पन्न होते है । कितनी स्थिति मे उत्पन्न होते है ? जघन्य दस हजार वर्ष की स्थिति मे, उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति मे उत्पन्न होते है । परिमाण- एक समम मे कितने उपजते है ? १, २, ३, यावत् सख्याता । सहनन (सघयण) वज्रऋषभनाराच । अवगाहना-तिर्यंच की जघन्य प्रत्येक धनुष की, उत्कृष्ट ६ गाऊ की । मनुष्य की जघन्य ५०० धनुष झाझेरी, उत्कृष्ट ३ गाऊ की । किन्तु तीसरे गम्मे मे मनुष्य की जघन्य उत्कृष्ट तीन गाऊ की। सस्थान (सठाण) समचतुरस्र । लेश्या ४ (कृष्ण, नील, कापोत, तेजो लेश्या) । दृष्टि एक मिथ्यादृष्टि । ज्ञान नहीं, २ अज्ञान । योग ३ । उपयोग २ । सज्ञा ४ । कषाय ४ । इन्द्रिय ५ । समुद्घात ३ । वेदना २ (साता, असाता) । वेद २ (स्त्रीवेद, पुरुषवेद) । आयुष्य--जघन्य करोड पूर्व झाझेरा, उत्कृष्ट तीन पल्योपम किन्तु तीसरे गम्मा मे जघन्य उत्कृष्ट तीन पल्योपम का । अध्यवसाय २ (शुभ-अशुभ) । अनुबन्ध आयुष्य के अनुसार होता है । कायसवेध के दो भेद– भवादेश और कालादेश । भवादेश की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट दो भव करता है । कालादेश की अपेक्षा ९ गम्मे होते हैं–औघिक और औघिक--करोड पूर्व झाझेरा दस हजार वर्ष का, तीन पल्योपम और तीन पल्योपम का । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य करोड पूर्व झाझेरा दस हजार वर्ष का, तीन पल्योपम दस हजार वर्ष का । (३) तीसरा

गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट–तीन पल्योपम और तीन पल्योपम, तीन पल्योपम और तीन पल्योपम (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक– करोड पूर्व झाझेरा दस हजार वर्ष का, करोड पूर्व झाझेरा करोड पूर्व झाझेरा (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य–करोड पूर्व झाझेरा दस हजार वर्ष, करोड पूर्व झाझेरा दस हजार वर्ष का । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट–करोड पूर्व झाझेरा करोड पूर्व झाझेरा, करोड पूर्व झाझेरा करोड पूर्व झाझेरा । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक–तीन पल्योपम दस हजार वर्ष, तीन पल्योपम और तीन पल्योपम । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य–तीन पल्योपम दस हजार वर्ष, तीन पल्योपम दस हजार वर्ष । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–तीन पल्योपम और तीन पल्योपम, तीन पल्योपम और तीन पल्योपम । ५ X ९ = ४५ गम्मा । नाणत्ता (फर्क) ३४ (असज्ञी तिर्यंच के ५, सज्ञी तिर्यंच के १०, सज्ञी मनुष्य के ८, युगलिया तिर्यंच के ५, युगलिया मनुष्य के ६) ।

दूसरा उद्देशा सपूर्ण ।

तीसरे से ग्यारहवे उद्देशे तक– नागकुमार से लेकर स्तनितकुमार तक नवनिकाय के ९ उद्देशे–असज्ञी तिर्यंच आकर उपजता है । कितनी स्थिति मे उपजता है ? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यातवे भाग की स्थिति मे उपजता है । परिमाण, ऋद्धि, गम्मा, नाणत्ता आदि रत्नप्रभा नरक मे असज्ञी तिर्यंच उपजते, जिनके कहे, उस तरह कह देना चाहिए । सज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य आकर उपजते हैं । कितनी स्थिति मे उपजते है ? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट देशऊणी दो पल्योपम की स्थिति मे उपजते है । परिमाण ऋद्धि गम्मा नाणत्ता रत्नप्रभा पृथ्वी मे उपजते सज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य मे कहे, उसी तरह कह देना चाहिए, किन्तु देवता की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष

उत्कृष्ट देशऊणी दो पल्योपम से कहनी चाहिए ।

दो प्रकार के युगलिया आकर उपजते है । कितनी स्थिति मे उपजते है ? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट देश ऊणी दो पल्योपम की स्थिति मे उपजते हैं । परिमाण, ऋद्धि, गम्मा, नाणत्ता (फर्क) असुरकुमार मे उपजने वाले दो प्रकार के युगलियो मे कहे, उसी तरह कह देना चाहिए, किन्तु तीसरे गम्मे मे युगलियो की स्थिति देश ऊणी दो पल की कहनी चाहिये । अवगाहना मनुष्य युगलिया की देश ऊणी दो गाऊ की कहनी चाहिये । ५ X ९ = ४५ गम्मा हुए। असुरकुमार की तरह एक-एक उद्देशे के ४५, ४५ गम्मा और ३४, ३४ नाणत्ता कह देना चाहिये । ४५ X ९ = ४०५ गम्मा हुए । ३४ X ९ = ३०६ नाणत्ता (फर्क) हुए ।

बारहवा उद्देशा—घर एक पृथ्वीकाय का, पाच स्थावर और असज्ञी मनुष्य आकर उपजते है ? कितनी स्थिति मे उपजते है ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट २२००० वर्ष की स्थिति मे उपजते है । परिमाण पाच स्थावर चार गम्मा की अपेक्षा (१-२-४-५) समय समय असख्याता उपजते है । पाच गम्मा की अपेक्षा एक समय मे १, २, ३, यावत् सख्याता असख्याता अपजते हैं । सहनन (सघयण) -पाच स्थावर असज्ञी मनुष्य मे एक छेवटिया (सेवार्त) । अवगाहना-चार स्थावर असज्ञी मनुष्य की जघन्य उत्कृष्ट अगुल के असख्यातवे भाग, वनस्पतिकाय की अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन झाझेरी होती है । सस्थान (सठाण) पृथ्वीकाय का चन्द्र तथा मसूर की दाल के आकार । अप्काय का पानी के परपोटे (बुलबुले) के आकार । तेउकाय का सस्थान सूइयो की भारी के आकार । वायुकाय का सस्थान ध्वजा, पताका के आकार । वनस्पतिकाय का सस्थान नाना प्रकार का है । असज्ञी मनुष्य का सस्थान हुण्डक होता है । लेश्या

पृथ्वीकाय, अप्काय, वनस्पतिकाय मे ४ । तेउकाय, वायुकाय और असज्ञी मनुष्य मे ३ लेश्या होती हैं । दृष्टि एक मिथ्यादृष्टि । ज्ञान नहीं, दो अज्ञान पाये जाते हैं । योग एक काया का । उपयोग दो । सज्ञा ४ । कषाय ४ । इन्द्रिय पाच स्थावर मे इन्द्रिय १, असज्ञी मनुष्य मे इन्द्रिया ५ । समुद्घात स्थावर मे चार असज्ञी मनुष्य मे ३, वायुकाय मे समुद्घात ४ । वेदना २ साता और असाता । वेद १ नपुसक । आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पृथ्वीकाय का २२००० वर्ष का, अप्काय का ७ हजार वर्ष का, तेउकाय का तीन अहोरात्रि का, वायुकाय का ३००० वर्ष का, वनस्पतिकाय का दस हजार वर्ष का, असज्ञी मनुष्य का अन्तर्मुहूर्त का है । अध्यवसाय २ शुभ, अशुभ । अनुबन्ध आयुष्य के अनुसार होता है । कायसंवेध के दो भेद–भवादेश और कालादेश । भवादेश की अपेक्षा पाच स्थावर चार गम्मा की अपेक्षा दो भव, असख्याता भव करते हैं । पाच गम्मा की अपेक्षा दो भव, आठ भव करते हैं । असज्ञी मनुष्य दो भव, आठ भव करता है । कालादेश से पाच स्थावर का काल ९ गम्मा का है । (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक– दो भव और असख्याता भव, दो अन्तर्मुहूर्त और असख्याता काल । जिस तरह पहला गम्मा कहा उसी तरह पाच ही स्थावर में दूसरा, चौथा और पाचवा गम्मा कह देना चाहिये । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट– पृथ्वीकाय पृथ्वीकाय मे उपजे अन्तर्मुहूर्त और २२००० वर्ष, ८८००० वर्ष, ८८००० वर्ष । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– अन्तर्मुहूर्त और २२००० वर्ष, ४ अन्तर्मुहूर्त ८८००० वर्ष । (७) सातवा गम्मा–उत्कृष्ट और औघिक– २२००० वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ८८००० वर्ष ८८००० वर्ष । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– २२००० वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ८८००० वर्ष और ४ अन्तर्मुहूर्त । (९) नववा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–२२००० वर्ष और २२००० वर्ष, ८८००० वर्ष और ८८०००

वर्ष ।

अप्काय पृथ्वीकाय मे उपजे- (३) तीसरा गम्मा- औघिक और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त और २२००० वर्ष, २८००० वर्ष और ८८००० वर्ष । (६) छठा गम्मा- जघन्य और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त और २२००० वर्ष, ४ अन्तर्मुहूर्त २८००० वर्ष । (७) सातवा गम्मा- उत्कृष्ट और औघिक- ७००० वर्ष अन्तर्मुहूर्त २८००० वर्ष ८८००० वर्ष । (८) आठवा गम्मा- उत्कृष्ट और जघन्य- ७००० वर्ष अन्तर्मुहूर्त २८००० वर्ष ४ अन्तर्मुहूर्त । (९) नववा गम्मा- उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-७००० वर्ष २२००० वर्ष, २८००० वर्ष ८८ हजार वर्ष । तेउकाय पृथ्वीकाय मे उपजे- (३) तीसरा गम्मा-औघिक और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त २२ हजार वर्ष, १२ अहोरात्रि ८८ हजार वर्ष । (६) छठा गम्मा- जघन्य और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त और २२ हजार वर्ष, ४ अन्तर्मुहूर्त और ८८ हजार वर्ष । (७) सातवा गम्मा- उत्कृष्ट और औघिक- ३ अहोरात्रि और अन्तर्मुहूर्त, १२ अहोरात्रि ८८ हजार वर्ष । (८) आठवां गम्मा- उत्कृष्ट और जघन्य- ३ अहोरात्रि अन्तर्मुहूर्त, १२ अहोरात्रि ४ अन्तर्मुहूर्त । (९) नववा गम्मा- उत्कृष्ट और उत्कृष्ट- ३ अहोरात्रि २२ हजार वर्ष, १२ अहोरात्रि ८८ हजार वर्ष ।

पृथ्वीकाय मे उपजे– (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त और २२ हजार वर्ष, ४० हजार वर्ष ८८ हजार वर्ष । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त और २२ हजार वर्ष, ४ अन्तर्मुहूर्त ८८ हजार वर्ष । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– १० हजार वर्ष और अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष ८८ हजार वर्ष । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य १० हजार वर्ष और अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष और ४ अन्तर्मुहूर्त । (९) नववा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– १० हजार वर्ष और २२ हजार वर्ष, ४० हजार वर्ष ८८ हजार वर्ष ।

असज्ञी मनुष्य का काल ३ गम्मा का है– (१) पहला गम्मा– जघन्य और औघिक– अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त , चार अन्तर्मुहूर्त और ८८ हजार वर्ष । (२) दूसरा गम्मा– जघन्य और जघन्य अन्तर्मुहूर्त और अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त और चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त २२ हजार वर्ष, चार अन्तर्मुहूर्त ८८ हजार वर्ष । पाच स्थावर के ४५ (५ X ९ = ४५) गम्मा, असज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा हुए । पाच स्थावर के ३० नाणत्ता (फर्क) हुए । असज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय पृथ्वीकाय मे आकर उत्पन्न होते हैं । कितनी स्थिति मे उत्पन्न होते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट २२ हजार वर्ष की स्थिति मे उपजते है । परिमाण ४ (१-२-४-५) गम्मो मे जघन्य उत्कृष्ट असख्याता उपजते हैं और शेष ५ गम्मो मे एक समय १, २, ३, यावत् सख्याता असख्याता उपजते है । सहनन एक छेवटिया (सेवार्त) । अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट द्वीन्द्रिय की १२ योजन, त्रीन्द्रिय की तीन गाऊ, चतुरिन्द्रिय की ४ गाऊ, असज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय की एक हजार योजन की होती है । सस्थान (सठाण) एक हुण्डक । लेश्या ३ पहले की । दृष्टि २ समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि । ज्ञान २, अज्ञान २ ।

योग २ । उपयोग २ । सज्ञा ४ । कषाय ४ । इद्रिय द्वीन्द्रिय मे २, त्रीन्द्रिय मे ३, चतुरिन्द्रिय मे ४, असज्ञी तिर्यंच पचेद्रिय मे ५ होती है । समुद्घात ३ (वेदनीय, कषाय, मारणान्तिक) । वेदना २ साता और असाता । वेद १ नपुसक । आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट द्वीन्द्रिय १२ वर्ष, त्रीन्द्रिय का ४९ दिन, चतुरिन्द्रिय का छह महिना, असज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय का करोड पूर्व का होता है । अध्यवसाय २ शुभ और अशुभ । अनुबन्ध आयुष्य के अनुसार होता है । कायसवेध के दो भेद भवादेश और कालादेश । भवादेश की अपेक्षा-तीन विकलेन्द्रिय चार गम्मा की अपेक्षा जघन्य दो भव उत्कृष्ट सख्याता भव करते है । पाच गम्मा की अपेक्षा जघन्य दो भव उत्कृष्ट ८ भव करते है । असज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय-नव ही गम्मा की अपेक्षा दो भव आठ भव करता है । कालादेश की अपेक्षा-तीन विकलेद्रिय जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट सख्याता काल का है । असज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय जघन्य दो अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट प्रत्येक करोड पूर्व वर्ष का है ।

तीन विकलेन्द्रिय पृथ्वीकाय मे जाकर उपजते है, उसके ९ गम्मा इस प्रकार है– (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक-जघन्य दो भव, उत्कृष्ट सख्याता भव, दो अतर्मुहूर्त और सख्याता काल । इसी तरह दूसरा, चौथा और पाचवा गम्मा कह देना चाहिए । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त २२ हजार वर्ष, (द्वीन्द्रिय का) ४८ वर्प, (त्रीन्द्रिय) का १९६ दिन, (चतुरिन्द्रिय का) २४ महिना ८८ हजार वर्ष । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट- अतर्मुहूर्त २२ हजार वर्ष, ४ अतर्मुहूर्त ८८ हजार वर्ष (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक-(द्वीन्द्रिय का) १२ वर्प, (त्रीन्द्रिय का) ४९ दिन, (चतुरिन्द्रिय का) छह महिना अन्तर्मुहूर्त, ४८ वर्प १९६ दिन २४ महिना ८८ हजार वर्प । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य-(द्वीन्द्रिय का) १२ वर्प

(त्रीन्द्रिय का) ४९ दिन (चतुरिन्द्रिय का) छह महीना अन्तर्मुहूर्त (द्वीन्द्रिय का) ४८ वर्ष (त्रीन्द्रिय का) १९६ दिन (चतुरिन्द्रिय का) २४ महीना चार अन्तर्मुहूर्त (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट (द्वीन्द्रिय का) १२ वर्ष (त्रीन्द्रिय का) ४९ दिन (चतुरिन्द्रिय का) छह महीना २२ हजार वर्ष, ४८ वर्ष १९६ दिन २४ महीना अठासी हजार वर्ष ।

असज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय पृथ्वीकाय मे आकर उपजता है, उसमे ९ गम्मा इस प्रकार हैं– (१) पहला गम्मा– औधिक और औधिक-अन्तर्मुहूर्त और अन्तर्मुहूर्त, चार करोड पूर्व ८८ हजार वर्ष । (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य- अन्तर्मुहूर्त और अन्तर्मुहूर्त, चार करोड पूर्व और चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– औधिक और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त और २२ हजार वर्ष, ४ करोड पूर्व और ८८ हजार वर्ष । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औधिक-अन्तर्मुहूर्त और अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त ८८ हजार वर्ष । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य- अन्तर्मुहूर्त और अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त और चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट-अन्तर्मुहूर्त और २२ हजार वर्ष, चार अन्तर्मुहूर्त और ८८ हजार वर्ष । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औधिक-करोड पूर्व और अन्तर्मुहूर्त, चार करोड पूर्व और ८८ हजार वर्ष । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य-करोडपूर्व अन्तर्मुहूर्त, चार करोड पूर्व चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-करोड पूर्व २२ हजार वर्ष, चार करोड पूर्व ८८ हजार वर्ष ।

३ + १ = ४ X ९ = ३६ गम्मा हुए । २७ + ९ = ३६ नाणत्ता (फर्क) हुए ।

सज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय और सज्ञी मनुष्य पृथ्वीकाय मे आकर उपजते हैं । कितनी स्थिति मे उपजते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट २२ हजार वर्ष की स्थिति मे उपजते हैं ।

परिमाण एक समय मे तिर्यंच पचेन्द्रिय १, २, ३ यावत् सख्याता असख्याता, मनुष्य १, २, ३ यावत् सख्याता उपजते हैं । सहनन (सघयण) ६-६ । अवगाहना-जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट तिर्यंच पचेन्द्रिय की १ हजार योजन की, मनुष्य की ५०० धनुष की होती है । सस्थान (सठाण) ६-६ । लेश्या ६-६ । दृष्टि ३-३ । ज्ञान तिर्यंच पचेन्द्रिय मे ३ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना, मनुष्य मे ४ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना । योग ३-३ । उपयोग २-२ । सज्ञा ४-४ । कषाय ४-४ । इन्द्रिय ५-५ । समुद्घात तिर्यंच पचेन्द्रिय मे ५, मनुष्य मे ६ । वेदना २-२ साता असाता । वेद ३-३ । आयुष्य-दोनो का जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोडपूर्व । अध्यवसाय २-२ शुभ, अशुभ । अनुबध आयुष्य के अनुसार । कायसवेध के दो भेद- भवादेश, कालादेश । भवादेश की अपेक्षा दोनो जघन्य दो भव, उत्कृष्ट ८ भव करते हैं । कालादेश की अपेक्षा काल ९ गम्मा का होता है । ये ९ गम्मा असज्ञी तिर्यंच की तरह कह देना चाहिए ।

गम्मा २ X ९ = १८ । नाणत्ता ११ + १२ = २३ ।

भवनपति से लेकर दूसरे देवलोक तक के १४ प्रकार के देवता आकर पृथ्वीकाय मे उत्पन्न होते हैं । कितनी स्थिति मे उत्पन्न होते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट २२ हजार वर्ष की स्थिति मे उत्पन्न होते हैं । परिमाण एक समय मे १, २, ३ यावत् सख्याता असख्याता । सहनन नहीं होता, शुभ पुद्गल परिणमते हैं । अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट ७ हाथ की । उत्तरवैक्रिय करे तो जघन्य अगुल के सख्यातवे भाग, उत्कृष्ट एक लाख योजन की । सस्थान एक समचतुरस्र, उत्तरवैक्रिय करे तो नाना प्रकार का । लेश्या भवनपति, वाणव्यन्तर मे चार, ज्योतिषी, पहले दूसरे देवलोक मे १ तेजोलेश्या । दृष्टि तीन । ज्ञान भवनपति, वाणव्यन्तर मे ३ ज्ञान की नियमा, ३ अज्ञान की भजना,

ज्योतिषी, पहले दूसरे देवलोक मे ३ ज्ञान, ३ अज्ञान की नियमा । योग ३-३ । उपयोग २-२ । सज्ञा ४-४ । कषाय ४-४ । इन्द्रिय ५-५ । समुद्घात ५-५ । वेदना २-२ । वेद २-२। स्त्रीवेद, पुरुषवेद । आयुष्य भवनपति मे असुरकुमार का जघन्य दस हजार वर्ष का, उत्कृष्ट एक सागर झाझेरा । नव निकाय के देवता का जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट देश ऊणा दो पल्योपम । वाणव्यन्तर का जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल्योपम । ज्योतिषी का जघन्य पल्योपम का आठवा भाग, उत्कृष्ट एक पल्योपम एक लाख वर्ष का । पहले देवलोक का जघन्य एक पल्योपम, उत्कृष्ट दो सागरोपम का । दूसरे देवलोक का जघन्य एक पल्योपम झाझेरा, उत्कृष्ट २ सागरोपम झाझेरा । अध्यवसाय २-२ शुभ, अशुभ। अनुबन्ध आयुष्य के अनुसार। कायसवेध के दो भेद–भवादेश, कालादेश। भवादेश की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट २-२ भव करते हैं। कालादेश की अपेक्षा–काल ९ गम्मा का-असुरकुमार से ९ गम्मा इस प्रकार कह देना चाहिये- (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक– दस हजार वर्ष अन्तर्मुहर्त, एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य-दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, एक सागरोपम झाझेरा अन्तर्मुहूर्त (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट-- दस हजार वर्ष २२ हजार वर्ष, एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष। (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक-दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, दस हजार वर्ष २२ हजार वर्ष । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– दस हजार वर्ष २२ हजार वर्ष, दस हजार वर्ष २२ हजार वर्ष। (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक-एक सागरोपम झाझेरा, अतर्मुहूर्त, एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य-एक सागरोपम झाझेरा अतर्मुहूर्त, एक

सागरोपम झाझेरा अतर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-एक सागरोपम झाझेरा २२ हजार वर्ष, एक सागरोपम झाझेरा २२००० वर्ष। बाकी देवताओ के गम्मे अपनी अपनी स्थिति के साथ कह देना चाहिये।

गम्मा १४ X ९ = १२६। नाणत्ता चार चार चौदह स्थानो के ४ X १४ = ५६ । कुल गम्मा – ४५ + ३ + ३६ + १८ + १२६ = २२८ हुए। नाणत्ता – ३० + ३६ + २३ + ५६ = १४५ हुए।

तेरहवा उद्देशा– घर एक अप्काय का, २६ स्थानो से आकर जीव अप्काय मे उपजते है, बाकी सब अधिकार पृथ्वीकाय की तरह कह देना चाहिये किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य अन्तर्मुहूर्त की स्थिति मे और उत्कृष्ट ७ हजार वर्ष की स्थिति मे उपजते है। इसी स्थिति से गम्मा कह देना चाहिये। गम्मा २२८ हुए। नाणत्ता १४५ हुए।

चौदहवा उद्देशा– घर एक तेउकाय का, १२ औदारिक के जीव आकर तेउकाय मे उत्पन्न होते है। कितनी स्थिति मे उत्पन्न होते है ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन अहोरात्रि की स्थिति मे उत्पन्न होते है। सन्नी असन्नी मनुष्य भवादेश की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट २ भव करते है। बाकी सब अधिकार (ऋद्धि, नाणत्ता, गम्मा) पृथ्वीकाय की तरह कह देना चाहिये किन्तु काल के ९ गम्मा जघन्य अन्तर्मुहूर्त की स्थिति और उत्कृष्ट तीन अहोरात्रि की स्थिति से कहने चाहिए। गम्मा ११ X ९ = ९९। असज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा = १०२ हुए। नाणत्ता ८६ हुए।

पन्द्रहवा उद्देशा–घर एक वायुकाय का, १२ औदारिक के जीव आकर उपजते है ? कितनी स्थिति मे उपजते है ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ३००० वर्ष की स्थिति मे उपजते है। बाकी सब अधिकार तेउकाय की तरह कह देना चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता

है कि काल के ९ गम्मा जघन्य अन्तर्मुहूर्त की स्थिति और उत्कृष्ट ३००० वर्ष की स्थिति से कहने चाहिए। गम्मा १०२ । नाणत्ता ८६ हुए।

सोलहवा उद्देशा— घर एक वनस्पतिकाय का, २६ स्थानो के जीव आकर वनस्पतिकाय मे उपजते हैं। कितनी स्थिति मे उपजते है ? जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट दस हजार वर्ष की स्थिति मे उपजते हैं। बाकी सब अधिकार (ऋद्धि आदि) पृथ्वीकाय की तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि काल के ९ गम्मा जघन्य अतर्मुहूर्त की स्थिति से और उत्कृष्ट दस हजार वर्ष की स्थिति से कहने चाहिए। नवर (इतना फर्क) वनस्पति वनस्पति मे उत्पन्न होवे उसमे ४ गम्मा (१-२-४-५) मे परिमाण- समय समय विरह रहित अनन्ता उपजते हैं । भवादेश की अपेक्षा जघन्य २ भव, उत्कृष्ट अनन्त भव करते हैं । कालादेश की अपेक्षा जघन्य २ अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट अनत काल। गम्मा २५ X ९ = २२५, असज्ञी मनुष्य के ३=२२८ हुए। नाणत्ता १४५ हुए।

सतरहवा उद्देशा— घर एक द्वीन्द्रिय का, १२ औदारिक के जीव आकर द्वीन्द्रिय मे उपजते हैं। कितनी स्थिति मे उपजते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट १२ वर्ष की स्थिति मे उपजते हैं। बाकी ऋद्धि आदि का अधिकार पृथ्वीकाय की तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि काल के ९ गम्मा जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट १२ वर्ष की स्थिति से कहने चाहिए। पाच स्थावर ३ विकलेन्द्रिय ये आठ द्वीन्द्रिय मे उत्पन्न होवें उसमे ४ गम्मा (१-२-४-५) मे भवादेश की अपेक्षा जघन्य दो भव, उत्कृष्ट सख्याता भव, कालादेश की अपेक्षा जघन्य दो अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट सख्यात काल कहना चाहिए। गम्मा १०२ हुए। नाणत्ता ८६ हुए।

अठारहवा उद्देशा— घर एक त्रीन्द्रिय का, १२ औदारिक के जीव आकर त्रीन्द्रिय मे उपजते है । कितनी स्थिति मे उपजते

हैं ? जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ४९ दिन की स्थिति मे उपजते हैं । बाकी अधिकर (ऋद्धि आदि) द्वीन्द्रिय की तरह कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि काल के ९ गम्मा जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ४९ दिन की स्थिति से कहने चाहिए । गम्मा १०२ हुए । नाणत्ता ८९ हुए ।

उन्नीसवा उद्देशा– घर एक चतुरिन्द्रिय का, १२ औदारिक के जीव आकर चतुरिन्द्रिय मे उपजते हैं ? कितनी स्थिति मे उपजते हैं ? जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट छह महीनो की स्थिति में उपजते हैं । बाकी अधिकार द्वीन्द्रिय की तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि काल के ९ गम्मा जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ६ महीना का स्थिति से कहने चाहिए । गम्मा १०२ । नाणत्ता ८९ हुए।

बीसवा उद्देशा– घर एक तिर्यंच पचेन्द्रिय का, सात नारकी के नैरयिक आकर उपजते हैं। कितनी स्थिति मे उपजते हैं ? जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति मे उपजते हैं। परिमाण एक समय में १,२,३ यावत् सख्याता असख्याता उपजते हैं । सहनन नारकी मे सहनन नहीं होता, अशुभ पुद्गल परिणमते हैं। अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट पहली नारकी की ७।।। धनुष ६ अगुल की, दूसरी नारकी की १५।। धनुष १२ अगुल की, तीसरी नारकी की ३१। धनुष की, चौथी नारकी की ६२।। धनुष की, पाचवीं नारकी की १२५ धनुष की, छठी नारकी की २५० धनुष की, सातवीं नारकी की ५०० धनुष की होती हैं। यदि उत्तरवैक्रिय करे तो जघन्य अगुल के सख्यातवे भाग, उत्कृष्ट अपने अपने स्थान मे जो अवगाहना कही हैं, उससे दुगुनी होती है । सस्थान (सठाण) हुण्डक, उत्तरवैक्रिय करे तो भी हुण्डक। पहली दूसरी नारकी मे एक कापोतलेश्या। तीसरी मे कापोत और नील। चौथी मे एक नीललेश्या। पाचवी मे दो-नील और कृष्ण। छठी मे

एक- कृष्ण। सातवीं मे एक-कृष्ण (महाकृष्ण)। दृष्टि ३। ज्ञान-पहली नारकी मे ३ ज्ञान की नियमा, ३ अज्ञान की भजना। दूसरी से सातवीं नारकी तक तीन ज्ञान, तीन अज्ञान की नियमा। योग ३ । उपयोग २। सज्ञा ४। कषाय ४। इद्रिय ५। समुद्घात ४। वेदना २। वेद एक (नपुसक)। आयुष्य-पहली नारकी का जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक सागरोपम, दूसरी नारकी का जघन्य एक सागरोपम, उत्कृष्ट तीन सागरोपम, तीसरी नारकी का जघन्य तीन सागरोपम, उत्कृष्ट सात सागरोपम, चौथी नारकी का जघन्य सात सागरोपम, उत्कृष्ट दस सागरोपम, पाचवीं नारकी का जघन्य दस सागरोपम, उत्कृष्ट १७ सागरोपम, छठी नारकी का जघन्य १७ सागरोपम, उत्कृष्ट २२ सागरोपम, सातवीं नारकी का जघन्य २२ सागरोपम उत्कृष्ट ३३ सागरोपम का है । अध्यवसाय २-शुभ और अशुभ। अनुबन्ध आयुष्य के अनुसार। कायसवेध के दो भेद--भवादेश, कालादेश। भवादेश की अपेक्षा पहली नारकी से छठी नारकी तक जघन्य दो भव, उत्कृष्ट आठ भव करता है, सातवीं नारकी मे ६ (पहले का) गम्मा की अपेक्षा दो भव और छह भव करता है। तीन (पिछाड़ी का) गम्मा की अपेक्षा दो भव और चार भव करता है। कालादेश की अपेक्षा ९ गम्मा होते हैं। पहली नारकी से ९ गम्मा इस प्रकार कहने चाहिए- (१) पहला गम्मा- औघिक और औघिक-दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार सागरोपम चार करोड पूर्व। (२) दूसरा गम्मा- औघिक और जघन्य-दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा- औघिक और उत्कृष्ट-दस हजार वर्ष करोड पूर्व, चार सागरोपम चार करोड पूर्व। (४) चौथा गम्मा- जघन्य और औघिक-दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष करोड पूर्व। (५) पाचवा गम्मा- जघन्य और जघन्य-दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष ४ अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा- जघन्य और उत्कृष्ट दस हजार वर्ष करोड पूर्व, ४० हजार

वर्ष चार करोड पूर्व। (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– एक सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, चार सागरोपम चार करोड पूर्व। (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– एक सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, चार सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–एक सागरोपम करोड पूर्व, चार सागरोपम चार करोड पूर्व।

दूसरी नारकी से ९ गम्मा–(१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक–एक सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, १२ सागरोपम चार करोड पूर्व। (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य– एक सागरोपम अतर्मुहूर्त, १२ सागरोपम चार अतर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट–एक सागरोपम करोड पूर्व, १२ सागरोपम चार करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक-एक सागरोपम अतर्मुहूर्त, चार सागरोपम चार करोड पूर्व। (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य-एक सागरोपम अतर्मुहूर्त, चार सागरोपम चार अतर्मूहूर्त। (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– एक सागरोपम करोड पूर्व, चार सागरोपम चार करोड पूर्व। (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– तीन सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, १२ सागरोपम चार करोड पूर्व। (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य–तीन सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, १२ सागरोपम चार अतर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–तीन सागरोपम करोड पूर्व, १२ सागरोपम चार करोड पूर्व।

तीसरी नारकी से ९ गम्मा जघन्य तीन सागरोपम उत्कृष्ट ७ सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिये। (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक– तीन सागरोपम अतर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार करोड पूर्व। (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य–तीन सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट– तीन सागरोपम करोड

पूर्व,२८ सागरोपम चार करोड पूर्व। (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औधिक-तीन सागरोपम अतर्मुहूर्त, १२ सागरोपम चार करोड पूर्व। (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– तीन सागरोपम अतर्मुहूर्त, १२ सागरोपम चार अतर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– तीन सागरोपम करोड पूर्व, १२ सागरोपम चार करोड पूर्व। (७) सातवा गम्मा–उत्कृष्ट और औधिक– सात सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ७ सागरोपम चार करोड पूर्व। (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– २८ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– सात सागरोपम करोड पूर्व, २८ सागरोपम चार करोड पूर्व।

चौथी नारकी से ९ गम्मा जघन्य ७ सागरोपम, उत्कृष्ट दस सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिये–(१) पहला गम्मा– औधिक और औधिक- ७ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४० सागरोपम चार करोड पूर्व। (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य-७ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४० सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– औधिक और उत्कृष्ट-७ सागरोपम करोड पूर्व, ४० सागरोपम चार करोड पूर्व। (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औधिक-सात सागरोपम अतर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (५) पाचवा गम्मा-जघन्य और औधिक-सात सागरोपम अतर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा- जघन्य और उत्कृष्ट-सात सागरोपम करोड पूर्व, २८ सागरोपम करोड पूर्व। (७) सातवा गम्मा-उत्कृष्ट और औधिक-दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४० सागरोपम चार करोड पूर्व । (८) आठवा गम्मा-उत्कृष्ट और जघन्य-दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४० सागरोपन चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-दस सागरोपम करोड पूर्व ४० सागरोपम चार करोड पूर्व ।

पाचवीं नारकी से ९ गम्मा जघन्य दस सागरोपम उत्कृ
१७ सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्म
औघिक और औघिक-दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६८ सागरोपम च
करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा- औघिक और जघन्य -
सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त । (
तीसरा गम्मा- औघिक और उत्कृष्ट- दस सागरोपम करोड पू
६८ सागरोपम चार करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा- जघन्य अ
औघिक- दस सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ४० सागरोपम चार करोड पूर्व
(५) पाचवा गम्मा- जघन्य और जघन्य- दस सागरोपम अन्तर्मुहू
४० सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा- जघन्य अ
उत्कृष्ट- दस सागरोपम करोड पूर्व, ४० सागरोपम चार करो
पूर्व । (७) सातवा गम्मा- उत्कृष्ट और औघिक- १७ सागरो
अन्तर्मुहूर्त, ६८ सागरोपम चार करोड पूर्व । (८) आठवा गम्म
उत्कृष्ट और जघन्य- १७ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६८ सागरो
चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा- उत्कृष्ट और उत्कृष्ट
१७ सागरोपम करोड पूर्व, ६८ सागरोपम चार करोड पूर्व ।

पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औधिक– २२ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ८८ सागरोपम चार करोड पूर्व । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– २२ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ८८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– २२ सागरोपम करोड पूर्व, ८८ सागरोपम चार करोड पूर्व ।

सातवीं नारकी से ९ गम्मा जघन्य २२ सागरोपम उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा–औधिक और औधिक– २२ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६६ सागरोपम तीन करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य– २२ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६६ सागरोपम तीन अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा-औधिक और उत्कृष्ट– २२ सागरोपम करोड पूर्व, ६६ सागरोपम तीन करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औधिक– २२ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६६ सागरोपम तीन करोड पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– २२ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६६ सागरोपम तीन अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– २२ सागरोपम करोड पूर्व, ६६ सागरोपम तीन करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औधिक– ३३ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६६ सागरोपम दो करोड़ पूर्व । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– ३३ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, ६६ सागरोपम दो अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– ३३ सागरोपम करोड पूर्व, ६६ सागरोपम दो करोड पूर्व ।

भवनपति से लेकर आठवे देवलोक तक के देवता (२० स्थानो के देवता) तिर्यंच पचेन्द्रिय मे उत्पन्न होते हैं । कितनी स्थिति मे उत्पन्न होते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति मे उत्पन्न होते है । परिमाण आदि सब अधिकार पृथ्वीकाय मे उपजने वाले देवो का कहा, उस तरह कह देना चाहिए किन्तु विशेषता यह है कि तीसरे चौथे पाचवे देवलोक मे एक

पद्मलेश्या कहनी चाहिए । छठे सातवे आठवे देवलोक मे एक शुक्ललेश्या कहनी चाहिए । तीसरे से आठवे देवलोक तक स्थिति अपने अपने स्थान के अनुसार कहनी चाहिए । कायसवेध के दो भेद-भवादेश और कालादेश । भवादेश की अपेक्षा जघन्य दो भव, उत्कृष्ट आठ भव करते है । कालादेश की अपेक्षा काल ९ गम्मा का होता है ।

असुरकुमार से ९ गम्मा जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक सागर झाझेरा की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक– दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार सागर झाझेरा चार करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य– दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार सागर झाझेरा चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट– दस हजार वर्ष करोड पूर्व, चार सागर झाझेरा चार करोड पूर्व । (४) जघन्य और औघिक– दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार करोड़ पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य-दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– दस हजार वर्ष करोड पूर्व, ४० हजार वर्ष चार करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– एक सागर झाझेरा अन्तर्मुहूर्त, चार सागर झाझेरा चार करोड पूर्व । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य-एक सागर झाझेरा अन्तर्मुहूर्त, चार सागर झाझेरा चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-एक सागर झाझेरा करोड पूर्व, चार सागर झाझेरा चार करोड पूर्व ।

नवनिकाय से काल के ९ गम्मा जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृप्ट देश ऊणी दो पल की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक–दस हजार वर्प अन्तर्मुहूर्त, देश ऊणा ८ पल चार करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और

जघन्य– दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, देश ऊणा ८ पल चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट– दस हजार वर्ष करोड पूर्व, देश ऊणा ८ पल चार करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक– दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार करोड पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– दस हजार वर्ष करोड पूर्व, ४० हजार वर्ष चार करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– देश ऊणा दो पल अन्तर्मुहूर्त, देश ऊणा ८ पल चार अन्तर्मुहूर्त । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य–देश ऊणा दो पल अन्तर्मुहूर्त, देश ऊणा ८ पल चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–देश ऊणा दो पल करोड पूर्व, देश ऊणा ८ पल चार करोड पूर्व ।

वाणव्यन्तर देवो से काल के ९ गम्मा जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक-दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य-दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट-दस हजार वर्ष करोड पूर्व, चार पल चार करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक-दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, ४० हजार वर्ष चार करोड पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त ४० हजार वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– दस हजार वर्ष करोड पूर्व, ४० हजार वर्ष चार करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– एक पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार करोड पूर्व । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– एक पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार अन्तर्मुहूर्त ।

(९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– एक पल करोड पूर्व, चार पल चार करोड पूर्व ।

ज्योतिषी से काल के ९ गम्मा जघन्य पल के आठवे भाग, उत्कृष्ट एक पल एक लाख वर्ष की स्थिति से कहने चाहिए । चन्द्रमाविमानवासी देवता से ९ गम्मा इस प्रकार है, जघन्य पाव पल, उत्कृष्ट एक पल एक लाख वर्ष की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार लाख वर्ष चार करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार लाख वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट– पाव पल करोड पूर्व, चार पल चार लाख वर्ष चार करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार करोड पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– पाव पल करोड पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– एक पल लाख वर्ष अन्तर्मुहूर्त चार पल चार लाख वर्ष चार करोड पूर्व । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– एक पल एक लाख वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार लाख वर्ष चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– एक पल एक लाख वर्ष करोड पूर्व, चार पल चार लाख वर्ष चार करोड पूर्व ।

सूर्यविमानवासी देवता से काल के ९ गम्मा जघन्य पाव पल, उत्कृष्ट एक पल एक हजार वर्ष की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार हजार वर्ष चार करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार हजार वर्ष चार

अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट– पाव पल करोड पूर्व, चार पल चार हजार वर्ष चार करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक– पाव पल अन्तर्मुहूर्त चार पाव पल (एक पल) चार करोड पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– पाव पल करोड पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा–उत्कृष्ट और औघिक– एक पल एक हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार हजार वर्ष चार करोड पूर्व । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– एक पल एक हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त । चार पल चार हजार वर्ष पूर्व अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– एक पल हजार वर्ष करोड पूर्व, चार पल चार हजार वर्ष चार करोड पूर्व ।

ग्रहविमानवासी देवता से काल के ९ गम्मा जघन्य पाव पल, उत्कृष्ट एक पल की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल चार करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य– पाव पल अन्तार्मुहूर्त, चार पल चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट– पाव पल करोड पूर्व, चार पल चार करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार करोड़ पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– पाव पल करोड पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– एक पल अन्तार्मुहूर्त, चार पल चार करोड पूर्व । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– एक पल अन्तार्मुहूर्त, चार पल चार अन्तर्मुहूर्त।

(९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट–एक पल करोड पूर्व, चार पल चार करोड पूर्व ।

नक्षत्रविमानवासी देवता से काल के ९ गम्मा जघन्य पाव पल, उत्कृष्ट आधा पल की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा– ओघिक और औघिक-पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार आधा पल (दो पल) चार करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा–औघिक और जघन्य-पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार आधा पल (दो पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट-पाव पल करोड पूर्व, चार आधा पल (दो पल) चार करोड पूर्व । (४) चोथा गम्मा– जघन्य ओर ओघिक– पाव पल अन्तर्गुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार करोड पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार अन्तर्गुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– पाव पल करोड़ पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और ओघिक-आधा पल अन्तार्मुहूर्त, चार आधा पल चार करोड पूर्व । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट ओर जघन्य– आधा पल अन्तर्मुहूर्त, चार आधा पल (दो पल) चार अन्तर्गुहूर्त । (९) नवगा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-आधा पल करोड पूर्व, चार आधा पल (दो पल) चार करोड पूर्व ।

ताराविमानवासी देवता से काल के ९ गम्मा जघन्य पल का आठवा भाग, उत्कृष्ट पाव कल की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा– औघिक ओर औघिक-जघन्य पल का आठवा भाग अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा– औघिक ओर जघन्य-पल का आठवा भाग अन्तार्मुहूर्त, चार पाव पल चार अन्तार्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट-पल का आठवा भाग करोड पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और ओघिक– पल

का आठवा भाग, अन्तर्मुहूर्त, चार पल का आठवा भाग (आधा पल) चार करोड पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य-पल का आठवा भाग अन्तर्मुहूर्त, चार पल का आठवा भाग (आधा पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट-पल का आठवा भाग करोड़ पूर्व, चार पल का आठवा भाग (आधा पल) चार करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार करोड पूर्व । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– पाव पल अन्तर्मुहूर्त, चार पाव पल (एक पल) चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– पाव पल करोड पूर्व, चार पाव पल (एक पल) चार करोड पूर्व ।

पहले देवलोक से काल के ९ गम्मा जघन्य एक पल उत्कृष्ट दो सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा– एक पल अतर्मुहूर्त, आठ सागरोपम चार करोड पूर्व। (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य– एक पल अतर्मुहूर्त, आठ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट– एक पल करोड पूर्व, आठ सागरोपम चार करोड पूर्व। (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक– एक पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल्योपम चार करोड पूर्व। (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– एक पल अन्तर्मुहूर्त, चार पल्योपम चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– एक पल करोड पूर्व चार पल्योपम चार करोड पूर्व, चार पल्योपम चार करोड पूर्व। (७) सातवा गम्मा–उत्कृष्ट और औघिक– दो सागरोपम अन्तर्मुहूर्त आठ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त चार करोड पूर्व। (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– दो सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, आठ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– दो सागरोपम करोड पूर्व, आठ सागरोपम चार करोड पूर्व।

दूसरे देवलोक से काल के ९ गम्मा जघन्य एक पल झाझेरी, उत्कृष्ट दो सागरोपम झाझेरी स्थिति से कहने चाहिए। पहले देवलोक के ९ गम्मा कहे उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य उत्कृष्ट दोनो स्थिति मे झाझेरी (अधिक) कहनी चाहिए।

तीसरे देवलोक से काल के ९ गम्मा जघन्य दो सागरोपम, उत्कृष्ट सात सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक दो सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार करोड पूर्व। (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य दो सागरोपम अन्तर्मुहूर्त,२८ सागरोपम चार अतर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट दो सागरोपम करोड पूर्व, २८ सागरोपम चार करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक– दो सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, आठ सागरोपम चार करोड पूर्व। (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य दो सागरोपम अतर्मुहूर्त, आठ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट दो सागरोपम करोड पूर्व, आठ सागरोपम चार करोड पूर्व। (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– सात सागरोपम अतर्मुहूर्त, २८ सागरोपम चार करोड पूर्व। (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य सात सागरोपम अतर्मुहूर्त २८ सागरोपम चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– सात सागरोपम करोड पूर्व, २८ सागरोपम चार करोड पूर्व।

चौथे देवलोक से काल के ९ गम्मा जघन्य दो सागरोपम झाझेरी, उत्कृष्ट सात सागरोपम झाझेरी स्थिति से कहने चाहिए। तीसरे देवलोक की तरह ९ गम्मा कह देने चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य, उत्कृष्ट दोनो स्थिति झाझेरी कहनी चाहिए।

पाचवे, छठे, सातवे, आठवे देवलोक से काल के ९ गम्मा पाचवे देवलोक मे जघन्य सात सागरोपम, उत्कृष्ट दस सागरोपम,

छठे देवलोक मे जघन्य दस सागरोपम, उत्कृष्ट १४ सागरोपम, सातवे देवलोक मे जघन्य १४ सागरोपम, उत्कृष्ट १७ सागरोपम, आठवे देवलोक मे जघन्य १७ सागरोपम, उत्कृष्ट १८ सागरोपम से नौ नौ गम्मा कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा– औधिक और औधिक– ७,१०,१४,१७ सागरोपम अतर्मुहूर्त, ४०,५६,६८,७२ सागरोपम चार २ करोड पूर्व। (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य– ७,१०,१४,१७ सागरोपम अतर्मुहूर्त, ४०,५६,६८,७२ सागरोपम चार अतर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा– औधिक और उत्कृष्ट– ७,१०,१४,१७ सागरोपम करोड पूर्व, ४०,५६,६८,७२ सागरोपम चार २ करोड पूर्व। (४) चौथा गम्मा– जघन्य और ओधिक– ७,१०,१४,१७ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८,४०,५६, ६८ सागरोपम चार २ करोड पूर्व। (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य ७,१०,१४,१७ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, २८,४०,५६,६८ सागरोपम चार २ अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट-७,१० १४,१७ सागरोपम करोड पूर्व, २८,४०,५६,६८ सागरोपम चार २ करोड पूर्व। (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औधिक १०,१४,१७,१८ सागरोपम अतर्मुहूर्त, ४०,५६,६८,७२ सागरोपम चार २ करोड पूर्व। (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य– १०,१४,१७,१८ सागरोपम अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– १०,१४,१७,१८ सागरोपम करोड पूर्व, ४० ५६ ६८,७२ सागरोपम चार चार करोड पूर्व।

घर एक तिर्यंच का– पाच स्थावर और असज्ञी मनुष्य आकर उपजते है। कितनी स्थिति मे उपजते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति मे उपजते हैं। परिमाण आदि सारी ऋद्धि का अधिकार पृथ्वीकाय मे उपजने वाले पाच स्थावर और असज्ञी मनुष्य मे कहा उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि एक समय मे १,२,३ यावत् सख्याता असख्याता

उपजते है। कायसवेध के दो भेद-भवादेश और कालादेश। भवादेश की अपेक्षा जघन्य दो भव, उत्कृष्ट आठ भव करता है। कालादेश की अपेक्षा पाच स्थावर का काल ९ गम्मा का है और असज्ञी मनुष्य का काल ३ गम्मा का है । पाच स्थावर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पृथ्वीकाय की २२ हजार वर्ष की, अप्काय की ७००० वर्ष की, तेउकाय की ३ अहोरात्रि (दिन) की, वायुकाय की ३००० वर्ष की, वनस्पतिकाय की १० हजार वर्ष की है। असज्ञी मनुष्य की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त की है।

पाच स्थावर से काल के ९ गम्मा इस प्रकार कहने चाहिए-(१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक अन्तर्मुहूर्त और अतर्मुहूर्त, ८८ हजार वर्ष, २८ हजार वर्ष, १२ अहोरात्रि, १२ हजार वर्ष, ४० हजार वर्ष चार चार करोड पूर्व। (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य– अतर्मुहूर्त अतर्मुहूर्त,८८ हजार वर्ष, २८ हजार वर्ष, १२ अहोरात्रि (दिन), १२ हजार वर्ष, ४० हजार वर्ष, चार चार अन्तर्मुहूर्त । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट– अन्तर्मुहूर्त करोड पूर्व, ८८ हजार वर्ष, २८ हजार वर्ष १२ अहोरात्रि, १२ हजार वर्प ४० हजार वर्ष चार चार करोड पूर्व। (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक– अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, चार चार अन्तर्मुहूर्त चार २ करोड पूर्व। (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और उत्कृप्ट– अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त चार २ अन्तर्मुहूर्त चार २ अतर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– अतर्मुहूर्त करोड पूर्व, चार अन्तर्मुहूर्त चार २ करोड पूर्व। (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक– २२००० वर्प, ७००० वर्प, तीन अहोरात्रि, ३ हजार वर्प। १० हजार वर्प, अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, ८८ हजार वर्प, २८ हजार वर्प, १२ अहोरात्रि, १२ हजार वर्प, ४० हजार वर्ष चार चार करोड पूर्व। (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य–२२ हजार वर्प, ७ हजार वर्प, तीन अहोरात्रि, ३ हजार वर्प, १० हजार वर्प अन्तर्मुहूर्त

अन्तर्मुहूर्त, ८८ हजार वर्ष २८ हजार वर्ष , १२ अहोरात्रि, १२ हजार वर्ष, ४० हजार वर्ष चार चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट– २२ हजार वर्ष, ७००० वर्ष, तीन अहोरात्रि, ३००० वर्ष, १० हजार वर्ष करोड पूर्व, ८८ हजार वर्ष, १२ अहोरात्रि, १२ हजार वर्ष, ४० हजार वर्ष, चार चार करोड पूर्व।

असज्ञी मनुष्य से काल के ३ गम्मा– जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा– जघन्य और औघिक– अतर्मुहूर्त अतर्मुहूर्त, चार अतर्मुहूर्त चार करोड पूर्व। (२) दूसरा गम्मा– जघन्य और जघन्य– अतर्मुहूर्त और अतर्मुहूर्त चार अतर्मुहूर्त चार अतर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त करोड पूर्व, चार अतर्मुहूर्त चार करोड पूर्व।

तीन विकलेन्द्रिय और असज्ञी तिर्यंच आकर तिर्यंच मे उत्पन्न होते हैं। कितनी स्थिति मे उत्पन्न होते हैं ? तीन विकलेन्द्रिय जघन्य अतर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति मे उत्पन्न होते हैं। असज्ञी तिर्यंच जघन्य अतर्मुहूर्त और उत्कृष्ट पल के असख्यातवे भाग की स्थिति मे उत्पन्न होते हैं। परिमाण एक समय मे १,२,३ यावत् सख्याता असख्याता उत्पन्न होते हैं किन्तु इतनी विशेषता है कि तीसरे नवमे गम्मा मे असज्ञी तिर्यंच सख्याता उत्पन्न होते हैं। संहनन (सघयण)–एक सेवार्त (छेवटिया)। अवगाहना तीन विकलेन्द्रिय की जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट द्वीन्द्रिय की १२ योजन, त्रीन्द्रिय की गाऊ, चतुरिन्द्रिय की चार गाऊ, असज्ञी तिर्यंच की जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन की है। सस्थान (सठाण) एक हुण्डक। लेश्या तीन। दृष्टि २ (सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि), तीसरे नवमे गम्मा मे असज्ञी तिर्यंच मिथ्यादृष्टि। ज्ञान दो ज्ञान, दो अज्ञान किन्तु इतनी विशेषता है कि तीसरे नवमें गम्मे मे असज्ञी तिर्यंच मे दो अज्ञान। योग २ ।

उपयोग २। सज्ञा ४। कषाय ४। इन्द्रिय अपनी अपनी। समुद्घात ३। वेदना २ (साता-असाता)। वेद एक नपुसक। आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट द्वीन्द्रिय का १२ वर्ष का, त्रीन्द्रिय का ४९ दिन का, चतुरिन्द्रिय का ६ महीना का, असज्ञी तिर्यंच का करोड पूर्व का होता है। अध्यवसाय २ (शुभ और अशुभ), अनुबध आयुष्य के अनुसार। कायसवेध के दो भेद–भवादेश और कालादेश। भवादेश की अपेक्षा तीन विकलेन्द्रिय जघन्य दो भव, उत्कृष्ट ८ भव करते है। असज्ञी तिर्यंच जघन्य दो भव, उत्कृष्ट ८ भव करता है किन्तु इतनी विशेषता है कि तीसरे नवमें गम्मे मे जघन्य उत्कृष्ट दो भव करता है। कालादेश से काल के ९ गम्मा है किन्तु असज्ञी तिर्यंच मे पहले और सातवे गम्मे मे युगलिया की भजना है और तीसरे नवमे गम्मे मे युगलिया की नियमा है।

तीन विकलेन्द्रिय से काल के ९ गम्मा जघन्य अतर्मुहूर्त की स्थिति और उत्कृष्ट द्वीन्द्रिय की १२ वर्ष, त्रीन्द्रिय की ४९ दिन, चतुरिन्द्रिय की ६ महीना की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा– औधिक और औधिक– अतर्मुहूर्त अतर्मुहूर्त, ४८ वर्ष, १९६ दिन, २४ महीना चार करोड पूर्व चार करोड पूर्व। (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य– अतर्मुहूर्त अतर्मुहूर्त,४८ वर्ष, १९६ दिन, २४ महीना चार चार अतर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा– औधिक और उत्कृष्ट– अतर्मुहूर्त करोड पूर्व, ४८ वर्ष, १९६ दिन, २४ महीना चार चार करोड पूर्व, ४८ वर्ष, १९६ दिन, २४ महीना चार चार करोड पूर्व। (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औधिक– अतर्मुहूर्त अतर्मुहूर्त, चार २ अतर्मुहूर्त चार २ करोड पूर्व। (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य– अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त चार २ अन्तर्मुहूर्त चार चार अन्तर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट– अन्तर्मुहूर्त करोड पूर्व, चार चार अन्तर्मुहूर्त चार २ करोड पूर्व। (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औधिक–१२ वर्ष,

४९ दिन, ६ महीना अतर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, ४८ वर्ष, १९६ दिन, २४ महीना चार २ करोड पूर्व। (८) आठवा गम्मा- उत्कृष्ट और जघन्य-१२ वर्ष, ४९ दिन, ६ महीना अन्तर्मुहूर्त अतर्मुहूर्त,४८ वर्ष, १९६ दिन, २४ महीना चार चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट-१२ वर्ष, ४९ दिन, ६ महीना करोड करोड पूर्व ४८ वर्ष, १९६ दिन, २४ महीना चार चार करोड पूर्व।

असज्ञी तिर्यंच से ९ गम्मा जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति से कहने चाहिए। (१) पहला गम्मा- औघिक और औघिक-अन्तर्मुहूर्त, चार करोड पूर्व तीन करोड पूर्व पल के असख्यातवे भाग। (२) दूसरा गम्मा- औघिक और जघन्य-अन्तर्मुहूर्त, अन्तर्मुहूर्त चार करोड पूर्व चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा- औघिक और उत्कृष्ट- अन्तर्मुहूर्त पल के असख्यातवे भाग, करोड पूर्व पल के असख्यातवे भाग। (४) चौथा गम्मा- जघन्य और औघिक- अतर्मुहूर्त अतर्मुहूर्त चार अतर्मुहूर्त चार करोड पूर्व। (५) पाचवा गम्मा- जघन्य और जघन्य- अतर्मुहूर्त अतर्मुहूर्त चार अतर्मुहूर्त चार अतर्मुहूर्त। (६) छठा गम्मा-जघन्य और उत्कृष्ट- अतर्मुहूर्त करोड पूर्व, चार अतर्मुहूर्त चार करोड पूर्व। (७) सातवा गम्मा- उत्कृष्ट और औघिक- करोड पूर्व अन्तर्मुहूर्त, चार करोड पूर्व तीन करोड पूर्व पल के असख्यातवे भाग। (८) आठवा गम्मा- उत्कृष्ट और जघन्य- करोड पूर्व अन्तर्मुहूर्त, चार करोड पूर्व चार अन्तर्मुहूर्त। (९) नवमा गम्मा-उत्कृष्ट और उत्कृष्ट- करोड पूर्व पल के असख्यातवे भाग, करोड पूर्व पल के असख्यातवे भाग।

सज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य आकर तिर्यंच पचेन्द्रियपने उपजते हैं। कितनी स्थिति से उपजते हैं ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति से उपजते हैं। परिमाण एक समय में १ २ ३ यावत् तिर्यंच असख्याता मनुष्य सख्याता उपजते हैं किन्तु तीसरा और नवमा गम्मा मे तिर्यंच सख्याता उपजते हैं।

सहनन ६। अवगाहना तिर्यंच की जघन्य अगुल के असख्यातवें भाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन की, मनुष्य की जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट ५०० धनुष की किन्तु मनुष्य की तीसरा गम्मा मे जघन्य प्रत्येक अगुल, उत्कृष्ट ५०० धनुष की होती है। सस्थान ६-६। लेश्या ६-६। दृष्टि ३-३ किन्तु तीसरे नवमे गम्मे मे एक मिथ्यादृष्टि। ज्ञान तिर्यंच मे तीन ज्ञान तीन अज्ञान की भजना। मनुष्य मे चार ज्ञान तीन अज्ञान की भजना है किन्तु तीसरा नवमा गम्मा मे तिर्यंच, मनुष्य दोनो के दो अज्ञान की नियमा। योग ३-३। उपयोग २-२। सज्ञा ४-४। कषाय ४-४। इद्रिय ५-५। समुद्घात तिर्यंच मे ५, मनुष्य मे ६। वेदना २-२ (साता और असाता)। वेद ३-३। आयुष्य-जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड पूर्व किन्तु मनुष्य के तीसरे गम्मे से जघन्य प्रत्येक मास का, नवमें गम्मे मे करोड पूर्व का होता है। अध्यवसाय दो शुभ और अशुभ। अनुबध आयुष्य के अनुसार होता है। कायसवेध के दो भेद-भवादेश और कालादेश। भवादेश की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट दो भव करते हैं । कालादेश की अपेक्षा ९ गम्मा होते हैं। सज्ञी तिर्यंच सज्ञी मनुष्य से ९ गम्मा कहने चाहिए। जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति से कहने चाहिए किन्तु मनुष्य के तीसरे गम्मे की स्थिति जघन्य प्रत्येक मास की कहनी चााहिए। पहले, सातवे गम्मे मे युगलिया की भजना है, तीसरे, नवमे गम्मे मे युगलिया की नियमा है। (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, चार करोड पूर्व तीन पल्योपम। (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, चार करोड पूर्व चार अन्तर्मुहूर्त। (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक मास, तीन २ पल्योपम, करोड पूर्व तीन तीन पल्योपम । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त चार करोड पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और

जघन्य अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, चार अन्तर्मुहूर्त चार अन्तर्मुहूर्त । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त करोड पूर्व, चार अन्तर्मुहूर्त चार करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक करोड पूर्व अन्तर्मुहूर्त, चार करोड पूर्व तीन करोड पूर्व तीन पल्योपम । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य करोड पूर्व अन्तर्मुहूर्त, चार करोड पूर्व चार अन्तर्मुहूर्त । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट करोड पूर्व तीन पल्योपम करोड पूर्व तीन पल्योपम । पाच स्थावर के ४५ गम्मा, ३० नाणत्ता, असज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा, नाणत्ता नहीं, तीन विकलेन्द्रिय असज्ञी तिर्यंच के ३६ गम्मा, ३६ नाणत्ता, सज्ञी मनुष्य सज्ञी तिर्यंच के १८ गम्मा, २३ नाणत्ता, सात नारकी, दस भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, पहले से आठवे देवलोक तक इन २७ बोलो मे ९-९ गम्मा के हिसाब से २४३ गम्मा होते है और ४-४ नाणत्ता के हिसाब से १०८ नाणत्ता होते हैं । कुल गम्मा ३४५ (४५ + ३ + ३६ + १८ + २४३ = ३४५) हुए और नाणत्ता(फर्क) (३० + ३६ + २३ + १०८ = १९७) हुए ।

वीसवा उद्देशा समाप्त ।

उद्देशा २१ वा–पर एक मनुष्य का । पहली नारकी से लेकर छट्ठी नारकी तक के जीव आकर उत्पन्न होते है । कितनी स्थिति मे उत्पन्न होते है ? पहली नारकी से निकला हुआ नैरयिक जघन्य प्रत्येक मास दूसरी से छठी नारकी तक से निकले हुए जघन्य प्रत्येक वर्ष, उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति मे उत्पन्न होते है * । परिमाण आदि का सारा अधिकार सज्ञी तिर्यंच मे कहा, उसी

तरह से कह देना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य १-२-३ यावत् सख्याता उपजते है ।

मनुष्य मे २७ प्रकार के (ठिकाने के) देवता (दस भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, बारह देवलोक, नव ग्रैवेयक, चार अनुत्तर विमान, सर्वार्थसिद्ध) आकर उपजते है । कितनी स्थिति मे उपजते है ? भवनपति से लेकर दूसरे देवलोक तक जघन्य प्रत्येक मास, तीसरे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक जघन्य प्रत्येक वर्ष, उत्कृष्ट करोड पूर्व की स्थिति मे उपजते है । परिमाण १, २, ३ यावत् सख्याता उपजते है । सहनन नहीं, देवता मे शुभ पुद्गल परिणमते हे । अवगाहना भवधारणीय जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट अलग अलग है-भवनपति से लेकर दूसरे देवलोक तक ७ हाथ की, तीसरे चौथे देवलोक की ६ हाथ की पाचवे छठे की ५ हाथ की, सातवे आठवे की ४ हाथ की, नववे दसवे ग्यारहवे बारहवे की ३-३ हाथ की, नव ग्रैवेयक की २ हाथ की, पाच अनुत्तर विमान की १ हाथ की होती है । यदि उत्तरवैक्रिय करें तो भवनपति से लेकर बारहवे देवलोक तक जघन्य अगुल के सख्यातवे भाग, उत्कृष्ट एक लाख योजन की होती है । नव ग्रैवेयक, चार अनुत्तर विमान और सर्वार्थसिद्ध के देवता उत्तरवैक्रिय नहीं करते हैं । सस्थान (सठाण) समचतुरस्र (समचौरस), उत्तरवैक्रिय करे तो नाना प्रकार का होता है । लेश्या भवनपति, वाणव्यन्तर मे लेश्या ४, ज्योतिषी, पहले दूसरे देवलोक मे लेश्या एक (तेजोलेश्या), तीसरे, चौथे, पाचवे देवलोक मे लेश्या एक (पद्मलेश्या), छठे देवलोक मे तथा उसके आगे लेश्या एक(शुक्ललेश्या) होती है ।

सागरोपम चार करोड पूर्व । दूसरी नरक का पहला गम्मा— औघिक और औघिक— एक सागरोपम प्रत्येक वर्ष, बारह सागरोपम चार करोड पूर्व ।

दृष्टि भवनपति से लेकर बारहवे देवलोक तक दृष्टि ३, नव ग्रैवेयक मे २ पाच अनुत्तर विमान मे एक (समदृष्टि) होती है । ज्ञान भवनपति से लेकर नव ग्रैवेयक ३ ज्ञान, ३ अज्ञान, किन्तु भवनपति, वाणव्यन्तर मे ३ अज्ञान की भजना, पाच अनुत्तर विमान मे ३ ज्ञान की नियमा । योग ३ । उपयोग २ । सज्ञा ४ । कषाय ४ । इन्द्रिय ५ । समुद्घात भवनपति से लेकर बारहवे देवलोक तक ५ समुद्घात, नव ग्रैवेयक चार अनुत्तर विमान और सर्वार्थसिद्ध मे समुद्घात ३ होती है । वेदना २(साता और असाता) । वेद भवनपति से लेकर दूसरे देवलोक तक वेद २ (स्त्रीवेद, पुरुषवेद), तीसरे से बारहवे देवलोक, नव ग्रैवेयक चार अनुत्तर विमान और सर्वार्थसिद्ध मे वेद एक (पुरुषवेद) । आयुष्य अपने अपने स्थान के अनुसार होता है । अध्यवसाय २ (शुभ और अशुभ) । अनुबन्ध आयुष्य के अनुसार होता है । कायसवेध के दो भेद—भवादेश और कालादेश । भवनपति से लेकर आठवे देवलोक तक भव और काल के गम्मा आदि सब तिर्यच की तरह कह देना चाहिए * । नवमे देवलोक से लेकर नव ग्रैवेयक तक भवादेश की अपेक्षा जघन्य दो भव, उत्कृष्ट छह भव करते है । कालादेश की अपेक्षा ९ गम्मा होते है । चार अनुत्तर विमान के देवता भवादेश की अपेक्षा जघन्य दो भव, उत्कृष्ट चार भव करते है । कालादेश की अपेक्षा ९ गम्मा होते है । सर्वार्थसिद्ध के देवता भवादेश की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट दो भव करते है । कालादेश की अपेक्षा काल के तीन गम्मा (सातवा आठवा नवमा) होते है ।

नवमे देवलोक से लेकर नवग्रैवेयक तक काल के ९ गम्मा करने चाहिए । नवमे देवलोक की स्थिति १८ सागरोपम उत्कृष्ट

१९ सागरोपम, दसवे देवलोक की स्थिति जघन्य १९ सागरोपम, उत्कृष्ट २० सागरोपम । इस तरह एक एक सागर बढाते जाना चाहिए । नवमे ग्रैवेयक की स्थिति जघन्य ३० सागरोपम, उत्कृष्ट ३१ सागरोपम से गम्मा कहना चाहिए ।

नवमे देवलोक के काल सबधी ९ गम्मा–(१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक १८ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५७ सागरोपम तीन करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य १८ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५७ सागरोपम तीन प्रत्येक वर्ष । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट १८ सागरोपम करोड पूर्व, ५७ सागरोपम तीन करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक १८ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५४ सागरोपम तीन करोड पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य १८ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५४ सागरोपम तीन प्रत्येक वर्ष । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट १८ सागरोपम करोड पूर्व, ५४ सागरोपम तीन करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक १९ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५७ सागरोपम तीन करोड पूर्व । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य १९ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ५७ सागरोपम तीन प्रत्येक वर्ष । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट १९ सागरोपम करोड पूर्व, ५७ सागरोपम तीन करोड पूर्व । इसी तरह नव ग्रैवेयक तक अपनी अपनी स्थिति से ९-९ गम्मा कह देने चाहिए ।

चार अनुत्तर विमानो से ९ गम्मा स्थिति जघन्य ३१ सागरोपम, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक ३१ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ६६ सागरोपम दो करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य ३१ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ६६ सागरोपम दो प्रत्येक वर्ष । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट ३१ सागरोपम करोड

पूर्व, ६६ सागरोपम दो करोड पूर्व । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक ३१ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ६२ सागरोपम दो करोड पूर्व । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य ३१ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ६२ सागरोपम दो प्रत्येक वर्ष । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट ३१ सागरोपम करोड पूर्व, ६२ सागरोपम दो करोड पूर्व । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक ३३ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ६६ सागरोपम दो करोड पूर्व । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य ३३ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ६६ सागरोपम दो प्रत्येक वर्ष । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट ३३ सागरोपम करोड पूर्व, ६६ सागरोपम दो करोड पूर्व । सर्वार्थसिद्ध से ३ गम्मा ३३ सागरोपम की स्थिति से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा– उत्कृष्ट और औघिक ३३ सागरोपम प्रत्येक वर्ष, ३३ सागरोपम करोड पूर्व । (२) दूसरा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य ३३ सागरोपम पत्येक वर्ष, ३३ सागरोपम प्रत्येक वर्ष । (३) तीसरा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट ३३ सागरोपम करोड पूर्व, ३३ सागरोपम करोड पूर्व ।

(१) पहला गम्मा– औघिक और औघिक– अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, ८८००० वर्ष, २८००० वर्ष, ४०००० वर्ष चार करोड पूर्व । इस तरह उपयोग लगाकर आठ गम्मा और कह देना चाहिए । असज्ञी मनुष्य के तीन गम्मा सज्ञी तिर्यंच मे कहे, उसी तरह कह देने चाहिए ।

तीन विकलेन्द्रिय और असज्ञी तिर्यंच आकर मनुष्य मे उपजते है । परिमाण, गम्मा, नाणत्ता आदि सारा अधिकार सज्ञी तिर्यंच मे कहा, उसी तरह कह देना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि तीसरे, छठे, नवमे गम्मे मे जघन्य १-२-३ यावत् सख्याता उपजते है ।

सज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य आकर मनुष्य मे उपजते हैं । परिमाण, गम्मा, नाणत्ता आदि सारा अधिकार सज्ञी तिर्यंच मे सज्ञी तिर्यंच, सज्ञी मनुष्य का कहा, उसी तरह कह देना चहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि सज्ञी तिर्यंच तीसरे, छठे, नवमे गम्मे मे जघन्य १-२-३ यावत् सख्याता उपजते है और सज्ञी मनुष्य ९ ही गम्मो मे जघन्य १-२-३ यावत् सख्याता उपजते हैं ।

६ नारकी, १० भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, १२ देवलोक, नव ग्रैवेयक, चार अनुत्तर विमान, इन ३२ स्थानो के ९-९ गम्मो के हिसाब से ३२ X ९ = २८८ गम्मा हुए । चार चार नाणत्ता के हिसाब से ३२ X ४ = १२८ नाणत्ता हुए । सर्वार्थसिद्ध के ३ गम्मा, असज्ञी मनुष्य के ३ गम्मा, नाणत्ता नहीं । पृथ्वीकाय, अप्काय, वनस्पतिकाय मे ९-९ गम्मा के हिसाब से ३ X ९ = २७ गम्मा हुए । नाणत्ता पृथ्वीकाय मे ६, अप्काय मे ६, वनस्पतिकाय मे ७, ये १९ नाणत्ता हुए । तीन विकलेन्द्रिय और असज्ञी तिर्यंच मे ९-९ गम्मा के हिसाब से ४ X ९ = ३६ गम्मा हुए और ९-९ नाणत्ता के हिसाब से ४ X ९ = ३६ नाणत्ता हुए । सज्ञी तिर्यंच, सज्ञी मनुष्य मे ९-९ गम्मा के हिसाब से १८ गम्मा हुए । सज्ञी

तिर्यंच के ११ नाणत्ता सन्नी मनुष्य के १२ नाणत्ता, ये २३ नाणत्ता हुए । कुल गम्मा ३७५ (२८८ + ६ + २७ + ३६ + १८ = ३७५) हुए । कुल नाणत्ता २०६ (१२८ + १९ + ३६ + २३ = २०६) हुए ।

इक्कीसवां उद्देशा समाप्त

उद्देशा २२ वां— पर एक वाणव्यन्तर देवता का । असन्नी तिर्यंच आकर उत्पन्न होता है । कितनी स्थिति मे उत्पन्न होता है ? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट पल के असंख्यातवे भाग की स्थिति मे उत्पन्न होता है । बाकी परिमाण आदि सारा अधिकार तथा गम्मा, नाणत्ता आदि रत्नप्रभापृथ्वी मे उपजते हुए असन्नी तिर्यंच मे कहे, उसी तरह कह देना चाहिए । गम्मा ९, नाणत्ता ५ हुए ।

सन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य आकर उपजते हैं । कितनी स्थिति मे उपजते है ? जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल की स्थिति मे उपजते है । परिमाण आदि सारा अधिकार तथा गम्मा नाणत्ता आदि रत्नप्रभापृथ्वी मे उपजते हुए सन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य मे कहे उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु देवता की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट एक पल की स्थिति से गम्मा कहने चाहिए । गम्मा १८ हुए, नाणत्ता १८ हुए ।

तिर्यंच, मनुष्य दोनो की जघन्य एक पल, उत्कृष्ट तीन पल्योपम से कहनी चाहिए । गम्मा १८ (२ X ९ = १८) हुए और नाणत्ता ११ (५ + ६ = ११) हुए ।

कुल गम्मा ४५ (९ + १८ + १८ = ४५) हुए, नाणत्ता ३४ (५ + १८ + ११ = ३४) हुए ।

बाईसवा उद्देशा समाप्त ।

तेईसवा उद्देशा—घर एक ज्योतिषी का । दो प्रकार के युगलिया आकर उपजते है । कितनी स्थिति मे उपजते है ? जघन्य पल के आठवे भाग, उत्कृष्ट एक पल एक लाख वर्ष की स्थिति मे उपजते है । परिमाण, गम्मा, नाणत्ता आदि सारा अधिकार नागकुमार की तरह कह देना चाहिए किन्तु तीसरे गम्मे मे मनुष्य की अवगाहना जघन्य एक गाऊ झाझेरी, उत्कृष्ट तीन गाऊ की कहनी चाहिए । स्थिति जघन्य एक पल लाख वर्ष, उत्कृष्ट तीन पल्योपम से कहनी चाहिए । बाकी सब गम्मो मे जघन्य स्थिति पल की आठवा भाग कहनी चाहिए । ज्ञान नहीं, अज्ञान दो । गम्मा ७ कहने चाहिए (चौथा, छठा नहीं कहना चाहिए) । तिर्यंच युगलियो के गम्मा (१) पहला गम्मा– औधिक और औधिक पल का आठवा भाग, पल का आठवा भाग, तीन पल्योपम, एक पल लाख वर्ष । (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य पल का आठवा भाग पल का आठवा भाग, तीन पल्योपम पल का आठवा भाग । (३) तीसरा गम्मा–औधिक और उत्कृष्ट एक पल लाख वर्ष एक पल लाख वर्ष, तीन पल्योपम, एक पल लाख वर्ष । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य पल का आठवा भाग, पल का आठवा भाग पल का आठवा भाग । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औधिक तीन पल्योपम का आठवा भाग, तीन पल्योपम एक पल लाख वर्ष । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य तीन पल्योपम पल का आठवा भाग, तीन पल्योपम पल का आठवा भाग ।

(९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट और उत्कृष्ट तीन पल्योपम एक पल लाख वर्ष, तीन पल्योपम एक पल लाख वर्ष । इसी तरह ७ गम्मा मनुष्य युगलियों के भी कह देने चाहिए । गम्मा १४ हुए । नाणत्ता १२ हुए ।

सज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य आकर ज्योतिषी मे उपजते हैं । कितनी स्थिति मे उपजते हैं ? जघन्य पल का आठवा भाग, उत्कृष्ट एक पल लाख वर्ष की स्थिति मे उपजते हैं । परिमाण आदि का सारा अधिकार रत्नप्रभापृथ्वी मे उपजते हुए सज्ञी तिर्यंच, सज्ञी मनुष्य मे कहा उसी तरह कह देना चाहिए । काल के ९ गम्मा सज्ञी तिर्यंच के इस तरह कहने चाहिए (१) पहला गम्मा– औधिक और औधिक अन्तर्मुहूर्त पल का आठवा भाग, चार करोड पूर्व चार पल्योपम चार लाख वर्ष । (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य अन्तर्मुहूर्त पल का आठवा भाग, चार करोड पूर्व चार पल का आठवा भाग (आधा पल) । (३) तीसरा गम्मा– औधिक और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त एक पल लाख वर्ष, चार करोड पूर्व चार पल्योपम चार लाख वर्ष । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औधिक अन्तर्मुहूर्त पल का आठवा भाग, चार अन्तर्मुहूर्त चार पल्योपम चार लाख वर्ष । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य अन्तर्मुहूर्त पल का आठवा भाग चार अन्तर्मुहूर्त चार पल्योपम का आठवा भाग । (६) छठा गम्मा–जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त

सज्ञी मनुष्य के भी कह देने चाहिए किन्तु अन्तर्मुहूर्त की जगह प्रत्येक मास कहना चाहिए । गम्मा १८ (२ X ९ = १८) हुए और नाणत्ता १८ (१० + ८ = १८) हुए । कुल गम्मा ३२ (१४ + १८ = ३२) और नाणत्ता २९ (११ + १८ = २९) हुए ।

तेईसवा उद्देशा समाप्त ।

चौबीसवा उद्देशा– घर एक वैमानिक देवता का । दो प्रकार के युगलिया आकर वैमानिक देवता मे उपजते है । कितनी स्थिति मे उपजते है ? पहले देवलोक मे जघन्य एक पल की स्थिति मे, दूसरे देवलोक मे एक पल झाझेरी स्थिति मे, उत्कृष्ट तीन तीन पल्योपम की स्थिति मे उपजते है । परिमाण आदि सारा अधिकार ज्योतिषी मे उपजते तिर्यंच युगलिया और मनुष्य युगलिया मे कहा, उसी तरह कह देना चाहिए किन्तु तीसरे गम्मे मे मनुष्य युगलिया की अवगाहना तीन गाऊ कहनी चाहिए । स्थिति मनुष्य युगलिया और तिर्यंच युगलिया दोनो की तीन तीन पल्योपम की कहनी चाहिए, बाकी ६ गम्मो मे स्थिति एक पल, एक पल झाझेरी, उत्कृष्ट तीन तीन पल्योपम कहनी चाहिए । दृष्टि २ (समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि) । ज्ञान २, अज्ञान २ । गम्मा-७ तिर्यंच युगलिया पहले देवलोक मे उत्पन्न होते है । उसके ७ गम्मा इस तरह से कहने चाहिए । (१) पहला गम्मा– औधिक और औधिक एक पल एक पल, तीन पल्योपम तीन पल्योपम । (२) दूसरा गम्मा– औधिक और जघन्य एक पल एक पल, तीन पल्योपम एक पल । (३) तीसरा गम्मा–औधिक और उत्कृष्ट तीन पल्योपम तीन पल्योपम, तीन पल्योपम तीन पल्योपम । (५) पांचवा गम्मा–जघन्य और जघन्य एक पल एक पल, एक पल एक पल । (७) सातवा गम्मा– उत्कृष्ट और औधिक तीन पल्योपम एक पल, तीन पल्योपम तीन पल्योपम । (८) आठवा गम्मा– उत्कृष्ट और जघन्य तीन पल्योपम एक पल, तीन पल्योपम एक पल । (९) नवमा गम्मा–

सागरोपम, आठ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, २८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम, ७२ सागरोपम । (२) दूसरा गम्मा– औघिक और जघन्य अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, चार करोड पूर्व चार पल्योपम, चार पल्योपम झाझेरी, ८ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम । (३) तीसरा गम्मा– औघिक और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, ७ सागरोपम झाझेरी, दस सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, १८ सागरोपम, चार करोड पूर्व आठ सागरोपम, आठ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, २८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम, ७२ सागरोपम । (४) चौथा गम्मा– जघन्य और औघिक अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त आठ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, २८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम, ७२ सागरोपम । (५) पाचवा गम्मा– जघन्य और जघन्य अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त चार पल्योपम, चार पल्योपम झाझेरी ८ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, ४० सागरोपम, ५६ सागरोपम, ६८ सागरोपम । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त एक पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी, ७ सागरोपम, ७ सागरोपम झाझेरी, १० सागरोपम, १४ सागरोपम, १७ सागरोपम, १८ सागरोपम, चार अन्तर्मुहूर्त, ८ सागरोपम, ८ सागरोपम झाझेरी, २८ सागरोपम, २८ सागरोपम झाझेरी, ४० सागरोपम,

वर्ष की कहनी चाहिए । भवादेसेण दो भव, आठ भव करते है । नवमे देवलोक से लेकर नव ग्रैवेयक तक जो मनुष्य जाता है, उसके ९ गम्मा कहने चाहिए । स्थिति अपने-अपने देवलोक की कहनी चाहिए । जाने की अपेक्षा ३ भव और ७ भव होते है । काल के ९ गम्मा इस प्रकार कहने चाहिए- (१) पहला गम्मा- औघिक और औघिक दो प्रत्येक वर्ष १८ सागरोपम, १९ सागरोपम, २० सागरोपम, २१ सागरोपम, २२ सागरोपम, २३ सागरोपम, २४ सागरोपम, २५ सागरोपम, २६ सागरोपम, २७ सागरोपम, २८ सागरोपम, २९ सागरोपम, ३० सागरोपम, चार करोड पूर्व ५४ सागरोपम, ५७ सागरोपम, ६० सागरोपम, ६३ सागरोपम, ६६ सागरोपम, ६९ सागरोपम, ७२ सागरोपम, ७५ सागरोपम, ७८ सागरोपम, ८१ सागरोपम, ८४ सागरोपम, ८७ सागरोपम, ९० सागरोपम, ९३ सागरोपम । (२) दूसरा गम्मा- औघिक और जघन्य दो प्रत्येक वर्ष १८ सागरोपम से लेकर एक एक सागर बढाते हुए ३० सागरोपम तक कह देना चाहिए । चार करोड पूर्व ५४ सागरोपम से लेकर तीन तीन सागरोपम बढाते हुए ९० सागरोपम तक कह देना चाहिए । (३) तीसरा गम्मा- औघिक और उत्कृष्ट दो प्रत्येक वर्ष १९ सागरोपम से लेकर एक एक बढाते हुए ३१ सागरोपम तक, चार करोड पूर्व ५७ सागरोपम से लेकर तीन तीन सागरोपम बढाते हुए ९३ सागरोपम तक कह देना चाहिए । (४) चौथा गम्मा- जघन्य और औघिक प्रत्येक १८ सागरोपम से लेकर एक एक सागर बढाते हुए ३० सागरोपम तक, चार प्रत्येक वर्ष ५७ सागरोपम से ९३ सागरोपम तक तीन तीन सागरोपम बढाते हुए कहना चाहिए । (५) पाचवा गम्मा- जघन्य और जघन्य प्रत्येक वर्ष १८ सागरोपम से एक एक सागर बढाते हुए ३० सागरोपम तक, चार प्रत्येक वर्ष ५४ सागरोपम से ९० सागरोपम तक तीन तीन सागरोपम बढाते हुए कहना चाहिए । (६) छठा गम्मा- जघन्य

उत्कृष्ट ओर जघन्य दो करोड पूर्व ३१ सागरोपम, तीन करोड पूर्व ६६ सागरोपम । (९) नवमा गम्मा– उत्कृष्ट ओर उत्कृष्ट दो करोड पूर्व ३३ सागरोपम, तीन करोड पूर्व ६६ सागरोपम ।

सर्वार्थसिद्ध से ३ गम्मा– तेतीस सागरोपम की स्थिति से कहना चाहिए । तीसरा, छठा और नवगा, ये तीन गम्मा होते हैं । जाने की अपेक्षा तीन भव करते हे । (३) तीसरा गम्मा– ओधिक और उत्कृष्ट दो प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, दो करोड पूर्व ३३ सागरोपम । (६) छठा गम्मा– जघन्य और उत्कृष्ट दो प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम, दो प्रत्येक वर्ष ३३ सागरोपम । (९) नवगा गम्मा– उत्कृष्ट ओर उत्कृष्ट दो करोड पूर्व ३३ सागरोपग, दो करोड पूर्व ३३ सागरोपम ।

पहले देवलोक के युगलियो के गम्मा– १४ (२ X ७ = १४), मनुष्य तिर्यंच के १८ (२ X ९ = १८) ये ३२ गम्मा (१४ + १८ = ३२) हुए । तीसरे से आठवे देवलोक तक तिर्यंच के ५४ (६ X ९ = ५४), मनुष्य के ५४, ये १०८ गम्मा (५४ + ५४ = १०८) हुए । नवमे देवलोक से चार अनुत्तर विमान तक छह घर होते है इसलिए मनुष्य के ५४ गम्मा (६ X ९ = ५४) हुए । सर्वार्थसिद्ध के ३ गम्मा हुए । ये सव २२९ गम्मा (३२ + ३२ + १०८ + ५४ + ३ = २२९) हुए । नाणत्ता-पहले देवलोक मे २९ नाणत्ता, दूसरे देवलोक मे २९ नाणत्ता । तीसरे से आठवे देवलोक तक हर एक मे १६-१६ नाणत्ता होने से ९६ नाणत्ता (६ X १६ = ९६) हुए । छठे, सातवे, आठवे देवलोक मे लेश्या फर्क नही । इसलिए तीन नाणत्ता कम करने से ९३ नाणता हुए । नवमे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक सात घर होते है। हरएक मे ६-६ नाणत्ता होने से ४२ (७ X ६ = ४२) नाणत्ता हुए । ये सब १९३ (२९ + २९ + ९३ + ४२ = १९३) नाणत्ता हुए ।

जाता है और ३३ स्थान (सातवीं नरक के सिवाय) से आता है, ये ६७ हुए । इनको ९ से गुणा करने से ६०३ हुए, इनमे सर्वार्थसिद्ध के ६ गम्मे जाने के और ६ गम्मे आने के ये १२ गम्मे घटा देने से ५९१ गम्मे रहे । मनुष्य युगलिया और तिर्यंच युगलिया मरकर १४ स्थान (१० भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक) मे जाते हैं इनके १४ X २ = २८ X ९ = २५२ गम्मे हुए, इनमे से ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक इन ३ स्थानो मे मनुष्य युगलिया और तिर्यंच युगलिया जाने के ६ + ६ = १२ गम्मे (चौथा और छठा) कम कर देने से २४० गम्मे रहे । मनुष्य मरकर ९ स्थानो मे (५ स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पचेन्द्रिय) जाता है, उसके ९ X ९ = ८१ गम्मे हुए । मनुष्य मे ८ स्थान से (पृथ्वी, पानी, वनस्पति, ३ विकलेन्द्रिय, असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय, सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय) आते हैं, इनके तीन तीन गम्मे (तीजा, छठा, नवमा) ८ X ३ = २४ हुए । मनुष्य मे असन्नी मनुष्य आता है, इसका १ छठा गम्मा । मनुष्य में सन्नी मनुष्य आता है, उसके ९ गम्मे हुए । सन्नी तिर्यंच मे सन्नी और असन्नी तिर्यंच आते हैं, उनके २-२ गम्मे (तीसरा और नवमा) २ X २ = ४ गम्मे हुए । इस प्रकार ५९१ + २४० + ८१ + २४ + १ + ९ + ४ = ९५० गम्मे सख्याता उपजने के हुए ।

१८५१ गम्मे असख्याता उपजने के—

असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मरकर १२ स्थान (दस भवनपति, व्यन्तर, पहली नरक) मे जाता है । सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय २७ स्थानों (१० भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी, पहले से आठवा देवलोक, ७ नरक) मे जाता है और इन्हीं २७ स्थानो से आता है । ये २७ + २७ = ५४ स्थान हुए । पृथ्वी, पानी, वनस्पति मे १४ प्रकार के देवता (१० भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक) आते है । ये ३ X १४ = ४२ स्थान हुए । पाच